साहित्य अमृत

मासिक

भाद्रपद-आश्विन, संवत्-२०७९ ❖ सितंबर २०२२

वर्ष-२८ ❖ अंक-२ ❖ पृष्ठ ८४ | यू.जी.सी.-केयर लिस्ट में उल्लिखित | ISSN 2455-1171

संस्थापक संपादक

पं. विद्यानिवास मिश्र

निवर्तमान संपादक

डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

श्री त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

संस्थापक संपादक (प्रबंध)

श्री श्यामसुंदर

प्रबंध संपादक

पीयूष कुमार

संपादक

लक्ष्मी शंकर वाजपेयी

संयुक्त संपादक

डॉ. हेमंत कुकरेती

उप संपादक

उर्वशी अग्रवाल 'उर्वी'

कार्यालय

४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-०२

फोन : ०११-२३२८९७७७

०८४४८६१२२६९

इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

शुल्क

एक अंक—₹ ३०

वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ ३००

वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ ४००

विदेश में

एक अंक—चार यू.एस. डॉलर (US$4)

वार्षिक—पैंतालीस यू.एस. डॉलर (US$45)

साहित्य अमृत के बैंक खाते का विवरण

बैंक ऑफ इंडिया

खाता सं. : **600120110001052**

IFSC : **BKID0006001**

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी पीयूष कुमार द्वारा ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२ से प्रकाशित एवं न्यू प्रिंट इंडिया प्रा.लि., ८/४-बी, साहिबाबाद इंडस्ट्रियल एरिया, साइट-IV, गाजियाबाद-२०१०१० द्वारा मुद्रित।

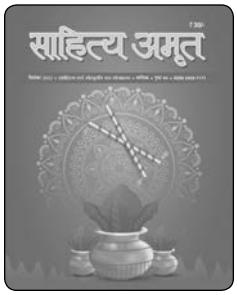

✍ **संपादकीय**

विकासशील से विकसित की यात्रा में… ४

✍ **प्रतिस्मृति**

कफन चोर/ *धर्मवीर भारती* ६

✍ **कहानी**

कैरियरिस्ट/ *रूपसिंह चंदेल* ८

तारणहार/ *सुनीता शानू* २०

प्रकृति का देवता/ *सुषमा मुनींद्र* ३८

डॉटर'स डे/ *पूजा महाजन* ७०

✍ **लघुकथा**

नोक-झोंक/ *ऋचा उपाध्याय* ७१

✍ **आलेख**

संयुक्त राष्ट्र की भाषा बने हिंदी/ *गौरीशंकर वैश्य 'विनम्र'* १२

कवि बनारसीदास के साहित्य में सामाजिक चेतना/ *निशांत जैन* २२

पारिवारिक विघटन रोकने में रामचरितमानस की भूमिका/ *श्रद्धा सक्सेना* २६

भारतीय शिक्षा, शिक्षण और इसकी चुनौतियाँ/ *राजेश कुमार ठाकुर* ४२

साहित्य की समृद्ध विधा 'दोहा' और कर्नल वशिष्ठ/ *विजय कुमार तिवारी* ४९

लोक-जीवन में देश-काल का चिंतन/ *मयंक मुरारी* ५८

✍ **कविता**

अँजुरी भर गीत/ *विष्णु सक्सैना* १४

दोहों का संसार/ *उर्वशी अग्रवाल 'उर्वी'* २८

गजलें/ *रैणु हुसैन* ३३

ग़ज़लें/ *विज्ञान व्रत* ४१

अभी नींद से जागे हैं/ *प्रशांत उपाध्याय* ५५

आई नई हवाएँ/ *रामगोपाल शर्मा 'दिनेश'* ५७

फिजीशियन एवं सर्जन/ *अनिल चतुर्वेदी* ६२

कविताएँ/ *ब्रज किशोर बक्शी* ६३

प्रोत्साहन स्नेह भूरि-भूरि/ *श्रीधर द्विवेदी* ७५

✍ **राम झरोखे बैठ के**

मौसम के तेज-तर्रार तेवर/ *गोपाल चतुर्वेदी* ३०

✍ **संस्मरण**

लता ताई/ *कानन झींगन* १६

मेरे आदर्श शिक्षक : मातादीन शर्मा/ *भैरूँलाल गर्ग* ३४

✍ **साहित्य का भारतीय परिपार्श्व**

पूमातै पोन्नम्मा/ *उण्णिकृष्णन मनक्कल* ४६

✍ **रेखाचित्र**

तपन में डूबा उदास सूरज/ *अंजीव अंजुम* ५२

✍ **व्यंग्य**

ऑनेरेरी पी-एच.डी. का खुला रहस्य/ *आलोक सक्सेना* ५६

✍ **ललित-निबंध**

महाश्वेता रात्रि में साहित्य-वीणा/ *श्रीराम परिहार* ६४

✍ **साहित्य का विश्व परिपार्श्व**

घोड़ागाड़ी का स्टैंड/ *चार्ल्स डिकेंस* ६८

✍ **लोक-साहित्य**

ब्रज के लोकगीतों में सामाजिक चेतना/ *हरदेव सिंह 'निमौतिया'* ७२

✍ **बाल-संसार**

सर्वश्रेष्ठ सब्जी-फल/ *रेनू सैनी* ७४

✍ वर्ग-पहेली ७६

✍ पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ७७

✍ साहित्यिक गतिविधियाँ ७९

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

विकासशील से विकसित की यात्रा में...

शायद आपकी भी नजरों से गुजरा हो! सोशल मीडिया पर एक संदेश अकसर पढ़ने को मिल जाता है, जिसमें बताया जाता है कि यदि आप कार खरीदना चाहते हैं तो लंबी कतार मिलेगी, मॉल और बाजारों में कितनी भीड़ है, सिनेमाघर होटल, रेस्त्राओं में कितनी भीड़ है! इस संदेश में यह बताने का प्रयास किया जाता है कि जैसे गरीबी या बेकारी है ही नहीं, हर तरफ अमीरी-ही-अमीरी नजर आ रही है! जिन्होंने भी यह संदेश बनाया है, फैलाया है और जो लोग इसे फॉरवर्ड करते हैं, जिनमें पढ़े-लिखे विद्वान् भी शामिल हो जाते हैं, शायद भारत जैसे विराट् देश से अपरिचित हैं! वे सिर्फ 'इंडिया' से परिचित हैं, वह इंडिया, जो भारत के कुछ फीसदी लोगों से बनता है! इस इंडिया में बच्चों के लिए महँगे-महँगे पब्लिक या कॉन्वेंट स्कूल हैं, शानदार कोठियाँ हैं, एक ही कोठी में अलग-अलग शानदार कारें हैं, फाइव स्टार होटल हैं, विदेश यात्राएँ हैं, हर तरह की सुख-सुविधाएँ हैं। दूसरी ओर वह 'भारत' है, जहाँ करोड़ों लोग आज भी जीवन की बुनियादी सुविधाओं से संचित हैं, जहाँ पीने का पानी भी सहजता से उपलब्ध नहीं है, आज भी करोड़ों लोग गाँवों में बसते हैं, शहरों में झुग्गी-बस्तियों में रहते हैं, जिनके बच्चे अनेक असुविधाओं के बीच शिक्षा ग्रहण करते हैं, जिनमें बहुत बड़ी संख्या में पढ़ाई छोड़कर बाल मजदूरी को विवश हो जाते हैं। अमीरी वाला संदेश बनानेवाले यह भूल जाते हैं कि १४० करोड़ जनसंख्या वाले भारत में यदि १० प्रतिशत लोग भी अमीर हैं तो यह संख्या १४ करोड़ बन जाती है। कुछ छोटे अमीर देशों, जैसे सिंगापुर, सऊदी अरब, डेनमार्क, नॉर्वे, फिनलैंड, बहरीन आदि की पूरी जनसंख्या भी जोड़ लें तो उससे अधिक भारत में अमीरों की संख्या निकल आएगी। अमीरी का संदेश बनानेवाले विद्वान् क्या सचमुच विराट् भारत को नहीं जानते या जान-बूझकर लोगों को भ्रमित करते हैं। स्वाधीनता के २५वें वर्ष के लिए संकल्प लिये गए, लेकिन बहुत से अधूरे रहे। फिर स्वर्ण जयंती के लिए कुछ लक्ष्य निर्धारित किए गए, वे भी पूरे नहीं हुए। यह क्रम चलता रहा और ७५वें वर्ष के लिए भी अनेक लक्ष्य निर्धारित किए गए, जैसे भारत के हर गरीब का अपना मकान आदि। लेकिन लक्ष्य अधूरे रह गए। अब स्वाधीनता का १००वाँ वर्ष चिंतन के केंद्र में है। यह तो तय है कि मात्र आह्वान या सरकारी प्रयासों से बात नहीं बनेगी, वरन् एक ऐसा व्यापक जन-आंदोलन तथा अनेक जन-अभियान चलाने पड़ेंगे। बिल्कुल नए सिरे से विचार करना पड़ेगा, लक्ष्य निर्धारित करने होंगे, जो समयसीमा से बँधे हों तथा उनका जमीनी क्रियान्वयन सुनिश्चित किया जाए। चाहे राजनीतिक क्षेत्र हो या सामाजिक या आर्थिक या सांस्कृतिक या अन्य, हर क्षेत्र में बुनियादी बदलाव करने होंगे। स्वाधीनता के अमृत महोत्सव में घर-घर तिरंगा अभियान हो या तिरंगा यात्राएँ हों, सैकड़ों समारोह, सांस्कृतिक आयोजन हों, भारतीयों ने भरपूर उत्साह दिखाया। बच्चों तथा युवाओं ने भी खूब जोश दिखाया। पूरे विश्व में भारतवंशियों तथा प्रवासी भारतीयों ने भी सैकड़ों भव्य आयोजन करके भारतीय पहचान तथा तिरंगे को प्रतिष्ठा दी। विदेशी सरकारों ने भी अमृत महोत्सव को अपने योगदान से गौरवान्वित किया। अमृत महोत्सव के सफल आयोजनों से यही संदेश उभरता है कि हर भारतवासी अपने भारत को एक विकसित, समृद्ध तथा शक्तिशाली राष्ट्र के रूप में देखना चाहता है, जो विश्व का सिरमौर बने।

स्वाभाविक है कि हमें एक बार फिर उन शहीदों के सपनों की ओर लौटना होगा। शहीदों ने यही स्वप्न देखा था कि आजाद भारत—गरीबी, भुखमरी, बेकारी, बीमारी, शोषण, दमन, अन्याय, अत्याचार, ऊँच-नीच, भेदभाव, असमानता, सांप्रदायिकता, जातिवाद, घृणा आदि से मुक्त होगा। हर भारतीय को सम्मान से जीने के अवसर मिलेंगे। हमारी सरकारों को, राजनीतिक दलों को इन्हीं कसौटियों पर स्वयं को परखना होगा। भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र है और विश्व के अनेक देशों के लिए आदर्श भी है व प्रेरणास्रोत भी। इसलिए भारत को दिखाना होगा कि लोकतांत्रिक व्यवस्था में अन्य व्यवस्थाओं के मुकाबले सभी को शीघ्र न्याय या जीवन के लिए आवश्यक सुविधाएँ तथा सम्मानपूर्ण जीवन तथा सफलता प्राप्त करने के अवसर उपलब्ध कराए जा सकते हैं। इस परिप्रेक्ष्य में भारत में सबसे पहले राजनीतिक क्षेत्र को ही स्वच्छ करना होगा। येन-केन प्रकारेण सत्ता प्राप्त करने की बजाय जनकल्याण तथा राष्ट्र-कल्याण राजनीतिक दलों का प्राथमिक उद्देश्य होना चाहिए। जब सभी का लक्ष्य देश तथा जनता की भलाई है तो फिर इतना वैमनस्य या कटुता क्यों हो! चुनावों में हिंसा क्यों हो, तरह-तरह के अनुचित आचरण क्यों हों! वर्षों से अनेक चुनाव सुधार-संबंधी सुझाव फाइलों में धूल खा रहे हैं, जो विभिन्न आयोगों या समितियों ने सुझाए हैं। राजनीति एक आकर्षक कारोबार नहीं होना चाहिए कि कुछ ही

वर्षों में एक व्यक्ति बेशुमार धन-संपत्ति अर्जित कर लेता है? आपराधिक पृष्ठभूमि के नेताओं को भी कड़े कानूनों के जरिए दूर करना होगा।

शिक्षा किसी भी देश के लिए अत्यंत बुनियादी माध्यम है, जो देश में क्रांतिकारी परिवर्तन ला सकता है। काश भारत में कोई ऐसी सरकार आए, जो करोड़ों निरक्षर लोगों को साक्षर बनाने का संकल्प ले। साक्षरता योजनाएँ चल रही हैं, किंतु करोड़ों लोगों, विशेषकर महिलाओं का निरक्षर होना बेहद चिंताजनक है। भारत में न्याय व्यवस्था पर भी विमर्श होते हुए ७५ वर्ष बीत गए, किंतु कुछ सार्थक परिणाम नहीं निकले। कुछ दिनों पहले ही भारत के मुख्य न्यायाधीश तथा प्रधानमंत्री, दोनों ने ही न्याय में विलंब, न्याय प्रक्रिया की जटिलता, न्याय व्यवस्था के महँगे होने पर चिंता व्यक्त की तथा आम आदमी को शीघ्र सुलभ न्याय मिलने पर जोर दिया है।

आर्थिक क्षेत्र में भी काश कोई सरकार ऐसा संकल्प लेकर आए कि हम पाँच वर्षों में जो करोड़ों लोग गरीबी रेखा से नीचे हैं, उन्हें गरीबी रेखा तक ले आएँगे। गरीबी उन्मूलन तो बहुत बड़ा लक्ष्य है और अनेक योजनाएँ आजादी के समय से ही चल रही हैं, उनके परिणाम क्या हुए, यह अवश्य विचारणीय है। भारत में विषमता बहुत विकराल रूप धारण किए हुए है तथा अनेक प्रकार की सामाजिक विकृतियों तथा अपराधों को जन्म दे रही है। भारत की पुलिस व्यवस्था भी स्वतंत्रता-प्राप्ति के समय से ही विवाद के केंद्र में है। न जाने कितने आयोग बने, समितियाँ बनीं, सुझावों के ढेर लगे, करोड़ों रुपए खर्च हुए, किंतु कोई भी सार्थक परिणाम नहीं निकला। आज भी एक आम आदमी पुलिस थाने में जाने से डरता है। पुलिसवालों का व्यवहार, उनकी क्रूरता, असंवेदनशीलता अकसर समाचारों में गूँजती रहती है। पुलिस में कर्मठ, ईमानदार, समर्पित तथा प्राणों की बाजी लगानेवाले पुलिसकर्मी भी हैं, किंतु पुलिस व्यवस्था में आमूल-चूल बदलाव तथा उसकी सकारात्मक छवि बनना अभी अपेक्षित है।

महिलाओं की सुरक्षा तथा उनके प्रति होनेवाले अपराध पूरे विश्व में भारत की बहुत खराब छवि प्रस्तुत करते हैं। 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते' के देश में यदि एक बच्ची तक सुरक्षित नहीं है तो इससे अधिक लज्जाजनक कुछ नहीं हो सकता। संतोष की बात है कि प्रधानमंत्री ने लाल किले से महिलाओं के प्रति सम्मान को रेखांकित किया। साथ-ही-साथ व्यवस्थागत परिवर्तन भी करने होंगे। लगभग डेढ़ लाख लोगों की सड़क दुर्घटना में मौत, एक लाख से अधिक की आत्महत्या, तीन लाख के लगभग लोगों का विभिन्न दुर्घटनाओं तथा अपराधों का शिकार हो जाना बेहद चिंताजनक है। यदि सार्थक उपाय किए जाएँ तो हम इन मौतों को रोक सकते हैं या न्यूनतम कर सकते हैं। दर्जनों ऐसे क्षेत्र हैं, जहाँ तरह-तरह के सुधार अपेक्षित हैं। इसके लिए भारत के मीडिया में भी बदलाव की बहुत आवश्यकता है। उसका सारा जोर सनसनी फैलाने तथा अनावश्यक विषयों पर फालतू की बहस पर रहता है, जहाँ सिवाय चीख-पुकार के कुछ हासिल नहीं होता। उसे गंभीर होकर जनोपयोगी विषयों पर ध्यान केंद्रित करना होगा। यदि सचमुच भारत को विकासशील से विकसित देश बनाना है तो बुनियादी बदलाव करने ही होंगे अन्यथा जैसे अभी स्वतंत्रता के १००वें वर्ष पर हम उम्मीद लगाएँ हैं, किंतु सबकुछ इसी तरह चलता रहा, जैसा चलता आया है तो फिर शायद १२५वें वर्ष पर आस लगानी होगी!

हिंदी माह आ गया

सितंबर महीना अर्थात् हिंदी का महीना। सरकारी कार्यालयों में राजभाषा सप्ताह, पखवाड़ा या हिंदी माह। तरह-तरह की प्रतियोगिताएँ, जिनमें राजभाषा अधिकारी खींच-खींचकर लोगों को लाता है तथा कुछ गिने-चुने लोग चार-पाँच प्रतियोगिताओं में पुरस्कार प्राप्त कर लेते हैं, किसी में प्रथम तो किसी में द्वितीय, तृतीय आदि। जिन कार्यालयों में जरा सा भी कार्य हिंदी में न होता हो, वे भी कार्यालय के बाहर एक बैनर टाँगकर निश्चिंत हो जाते हैं। राजभाषा संबंधी कार्य चलते रहें, किंतु हमारी चिंता 'घर-घर तिरंगा' की तर्ज पर 'घर-घर हिंदी' की होनी चाहिए। लगभग ८० करोड़ हिंदी समझनेवाले हिंदी को शक्ति दे दें तो पूरा परिदृश्य बदल जाए। आप स्वयं कुछ प्रश्नों के उत्तर खोजें और अपने दायित्व के निर्वाह करने का प्रण करें—

१. भारत जैसे संप्रभुतासंपन्न राष्ट्र की कोई राष्ट्रभाषा होनी चाहिए या नहीं और हिंदी इसके योग्य है या नहीं?
२. हमारे महान् स्वाधीनता सेनानियों, राष्ट्र निर्माताओं की मातृभाषा हिंदी नहीं थी, फिर भी वे हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाना चाहते थे कि नहीं? लोकमान्य तिलक (मराठी), महात्मा गांधी (गुजराती), सुभाषचंद्र बोस (बांग्ला), सुब्रहमण्य भारती (तमिल), जवाहरलाल नेहरू (कश्मीरी), स्वामी दयानंद (गुजराती), रवींद्रनाथ टैगोर (बांग्ला), शहीद भगत सिंह (पंजाबी) आदि।
३. क्या भारत के अलावा किसी देश में विधार्थी इसलिए आत्महत्या करते हैं कि उन्हें किसी अन्य देश की भाषा नहीं आती, जैसे भारत में दर्जनों विधार्थी अंग्रेजी के कारण आत्महत्या कर चुके हैं या उनका भविष्य नष्ट हो गया।
४. क्या मांगलिक कार्यों, जैसे विवाह आदि के निमंत्रण-पत्र अंग्रेजी में छपाना मानसिक गुलामी नहीं है?
५. हिंदी में रोजी-रोजी कमाने वालों का अंग्रेजी में विजिटिंग कार्ड छपाना उचित है?
६. हिंदी फिल्मों से करोड़ों कमाने वाले अभिनेता-अभिनेत्रियों का हिंदी की जगह अंग्रेजी बोलना उचित है?
७. क्या आपके घर के बाहर नामपट्टिका अंग्रेजी में है? है तो क्यों?
८. क्या आपके घर में हिंदी का अखबार, पत्रिकाएँ, किताबें आदि आती हैं?
९. क्या आपको हिंदी के प्रति गर्व की बजाय हीनभावना है? है तो क्यों?
१०. आप विश्व के ऐसे महान् वैज्ञानिक को जानते हैं, जिसने प्राथमिक शिक्षा अपनी भाषा में न ग्रहण की हो? तो फिर अंग्रेजी माध्यम से प्राथमिक शिक्षा पानेवाले बच्चे भविष्य में कैसे महान् वैज्ञानिक या लेखक आदि बन पाएँगे? स्वयं विचार करें!

(लक्ष्मी शंकर वाजपेयी)

कफन चोर

● धर्मवीर भारती

सकीना की बुखार से जलती हुई पलकों पर एक आँसू चू पड़ा।

''अब्बा!'' सकीना ने करीम की सूखी हथेलियों को स्नेह से दबाकर कहा, ''रोते हो! छिह।''

बूढ़े करीम ने बाँह से अपनी धुँधली आँखें पोंछते हुए कहा, ''बेटा, तुम बुखार में जल रही हो और मैं तुम्हारे ओढ़ने के लिए एक चादर भी न ला सका।''

सकीना बात काटकर बोली, ''तो इसमें रोने की क्या बात? सुनते हैं, सरकार ने इंतजाम किया है। बहुत सा सस्ता कपड़ा आने वाला है। तब खरीद लेना। फिर मुझे तो जाड़ा भी नहीं लगता।'' सकीना मुश्किल से अपनी कँपकँपी रोक पा रही थी।

''सरकार!'' करीम एक ठंडी साँस लेकर रह गया।

सकीना ने देखा, करीम बहुत दु:खी हो रहा है। फौरन ध्यान बँटाने के लिए बोली, ''नींद नहीं आ रही अब्बा, कोई कहानी सुनाओ!''

''पगली! तुझे भी इस वक्त कहानी सूझती है। बेटा, हमीं लोगों के हालात कोई अखबार में छपा दे तो बड़ी दर्दनाक कहानी बन जाए!''

''नहीं, नहीं! कहानी सुनाओ!'' सकीना छोटे बच्चों की तरह मचलकर बोली।

''अच्छा, सुन!'' करीम बोला, ''यहीं

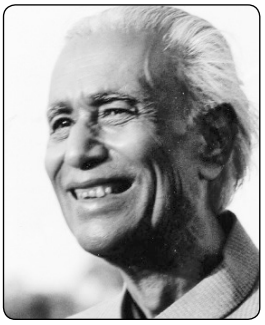

लखनऊ का किस्सा है। नवाबी अमल था। छतरमंजिल में नवाब साहब की ऐशगाह थी। दिन भर दोस्तों के साथ ऐश करने के बाद जब नवाब साहब आरामगाह में जाते थे तो उनकी पलकों में गुलाबियों का नशा रहता और उनके कदमों में शराब की छलकन। उन्हें सहारा देने के लिए जीने की हर सीढ़ी पर दोनों ओर नौजवान बाँदियाँ रहती थीं, जिनके कंधों पर हाथ रखकर वे धीरे-धीरे ऊपर जाते थे। सुन रही है न?''

''हूँ!''

''अच्छा, तो एक दिन सभी बाँदियाँ मुर्शिदाबादी रेशम की पोशाक पहनकर खड़ी हुईं। नवाब साहब ने पहली बाँदी के कंधे पर हाथ रखा ही था कि रेशम की चिकनाहट की वजह से दुपट्टा फिसल गया और वे गिरते-गिरते बचे। नीचे से ऊपर तक बाँदियों में भय की एक लहर दौड़ गई। नवाब साहब सँभले और गरजकर बोले, ''बदजातो! कल से तुम लोगों के कंधे नंगे रहने चाहिए।'' और दूसरे दिन से उनके कंधे नंगे रहने लगे।

''समझी बेटी, तब कपड़ों की कमी नहीं थी और न अब है; मगर हम गुलाम और गरीब तब भी नंगे रहते थे और अब भी नंगे रहते हैं। जानती है क्यों, ताकि अमीर लोग हमारे नंगे कंधों पर आसानी से हाथ जमाकर सोने और चाँदी की सीढ़ियों पर चढ़ सकें··· सो गई, सकीना!''

सकीना सो गई थी।

एकाएक तीसरी कब्र के पास एक मनुष्य की छाया दीख पड़ी। वह कब्र आज ही खुदी थी और जुड़ाई करने-वाले मजदूर फावड़ा और कन्नी वहीं छोड़कर चले गए थे। उस छाया ने फावड़ा उठाया और चलाना शुरू कर दिया। भिखमंगा डर से काँप गया। यह कौन है? कोई जिन? जिन नहीं, फरिश्ता होगा। कब्र खोदकर गुनाहों का लेखा दर्ज करने आया है। उसके मन में एक खयाल आया, मगर वह इससे अरज करे तो दुनियावी मुसीबतों से छुटकारा पा जाएगा। वह काँपते हुए उठा और उसके नजदीक गया। फरिश्ते ने फावड़ा चलाना बंद कर दिया।

करीम उठा। एक फटी चटाई पर बाँहों पर सिर रखकर लेट रहा। उसने दोपहर से कुछ नहीं खाया था। भूख लगी थी, मगर वह धीरे-धीरे सो गया। हिंदुस्तानियों की आदत है कि जब वे भूखे होते हैं तो सो जाते हैं और सपने देखने लगते हैं। करीम ने भी एक सपना देखा...।

हिंदुस्तानियों की तरह वह भी इस दुनिया से ऊबकर बहिश्त चला गया। आगे-आगे काँपता हुआ करीम और पीछे-पीछे अपने फटे कुरते को सँभालती हुई मासूम सकीना।

सामने तख्त पर खुदा था। करीम ने सिर झुकाकर कहा, ''या खुदा! हम लोग नंगे हैं, भूखे हैं।''

खुदा ने अपनी आँखें उठाईं। सकीना पर उसकी निगाह गड़ गई और उन्होंने बगल में बैठे हुए एक फरिश्ते से कहा, ''हजरत, मैं देखता हूँ कि भूख में भी आदमी का हुस्न निखरता जाता है।''

फरिश्ते ने अदब से सिर झुकाकर कहा, ''हुजूर की नायाब कुदरत!''

खुदा ने खुश होकर कहा, ''अच्छा, तो इस हसीना का नाम हूरों में दर्ज कर लो।''

फरिश्ते सकीना की ओर बढ़े।

''खबरदार!'' करीम की भूखी पसलियाँ गरज उठीं।

खुदा ने उसे देखा, ''यह कौन है? निकालो इसे!''

''कमबख्त, तूने इनसाफ का ठेका लिया है।'' करीम चीखा, ''उफ, तुझमें खुदाई हो, मगर तूने अभी तक इनसानियत नहीं सीखी है, ओ धोखेबाज खुदा!''

सकीना फरिश्तों के हाथों में छटपटाती हुई चीखी, ''अब्बा!''

करीम की आँखें खुल गईं। छटपटाती हुई सकीना चीख रही थी, ''अब्बा!''

करीम घबराकर उठा।

''अब्बा जूड़ी चढ़ रही है।'' थरथराती हुई सकीना बोली। वह पानी से निकली हुई मछली की तरह छटपटा रही थी। करीम लाचार होकर उसकी ओर देखता रहा। उसके पास नाम के लिए एक धोती भी न थी कि पूस की रात में जूड़ी से काँपती हुई रोगिन बेटी को ओढ़ा दे।

''हाथ ऐंठ रहे हैं, अब्बा!'' कहकर उसने हाथ झटके और महीनों का पहना हुआ जर्जर कुरता बगल के पास से चर्राकर फट गया। सकीना ने कुहनियों से लाज ढँकने की कोशिश की, मगर उसके हाथ की नसें तनी जा रही थीं। वह शर्म से तड़प गई।

करीम से अब न बरदाश्त हुआ। उसकी आँखों में खून उतर आया। उसका रोम-रोम सुलग उठा और उसने पैर पटककर कहा, ''सकी! सकी! मैं कहीं से तुम्हारे लिए कपड़ा लाऊँगा, बेटी! कहीं से!'' और झोंके की तरह वह बाहर निकल पड़ा।

कब्रगाह में लगे हुए पीपल के नीचे एक मुसलमान भिखमंगा बैठा था। सामने थोड़ी सी आग जल रही थी। उसने एक लकड़ी से आग कुरेदते हुए कहा, ''या खुदा! गजब की सर्दी है। सुना था, चौदहवीं सदी में कयामत होगी, इनसाफ होगा। कयामत बरपा है, मगर इनसाफ का पता भी नहीं।''

एकाएक तीसरी कब्र के पास एक मनुष्य की छाया दीख पड़ी। वह कब्र आज ही खुदी थी और जुड़ाई करनेवाले मजदूर फावड़ा और कन्नी वहीं छोड़कर चले गए थे। उस छाया ने फावड़ा उठाया और चलाना शुरू कर दिया। भिखमंगा डर से काँप गया। यह कौन है? कोई जिन? जिन नहीं, फरिश्ता होगा। कब्र खोदकर गुनाहों का लेखा दर्ज करने आया है। उसके मन में एक खयाल आया, मगर वह इससे अरज करे तो दुनियावी मुसीबतों से छुटकारा पा जाएगा। वह काँपते हुए उठा और उसके नजदीक गया। फरिश्ते ने फावड़ा चलाना बंद कर दिया।

''हुजूर! आप पैगंबर हैं, खुदा के फरिश्ते हैं। मैं...''

''चुप रहो, बेइज्जती मत करो। मैं फरिश्ता नहीं, इनसान हूँ।'' फरिश्ते ने चीखकर कहा।

''नहीं हुजूर! फरिश्ता...''

''फरिश्ता! फरिश्ता! मैं चोर हूँ, बुड्ढे! कफन चुराने आया हूँ। मेरी बेटी बिना कपड़े के मर रही है। तू भी नंगा है। अच्छा, आधा कफन तू भी ले लेना।''

भिखमंगा सहमकर पीछे हट गया। डर से उसकी घिग्घी बँध गई और उसके बाद चीखकर बोला, ''चोर! चोर!''

रखवाले की झोंपड़ी से कई लोग दौड़ पड़े।

दूसरे दिन लखनऊ में बिजली की तरह इस अनोखी चोरी की खबर फैल गई।

सुबह क्लाथ कंट्रोल ऑफिसर जब चाय पीने बैठे तो उनकी पत्नी ने चाय ढालते हुए कहा, ''सुना तुमने, कल एक आदमी कफन चुराते पकड़ा गया।''

''पागल हो गई हो क्या?'' ओवरकोट और मफलर से कान और छाती को ढँकते हुए उन्होंने कहा, ''कपड़े की ऐसी भी क्या कमी! और फिर आदमी चाहे मर जाए, कब्र खोदकर कफन चुराने नहीं जाएगा।'' फर के दस्ताने से ढकी उँगलियों से चाय का प्याला उठाते हुए उन्होंने जवाब दिया।

कैरियरिस्ट

● रूपसिंह चंदेल

सुबह साढ़े ग्यारह बजे का समय। ठंड के कारण उँगलियाँ कंप्यूटर पर ठीक प्रकार से चल नहीं रही थीं। बाहर कोहरा अभी भी इतना घना था कि स्टडी रूम के बालकनी के शीशे के दरवाजे और खिड़की के पार कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था। वह सुबह आठ बजे ही कंप्यूटर पर बैठ गए थे। दो दिनों से एक कहानी मस्तिष्क में घूम रही थी। घूम तो वह लगभग एक वर्ष से रही थी, लेकिन दो दिनों से उसने उन्हें परेशान किया हुआ था। रात देर तक वह उस विषय पर सोचते रहे और तय किया कि सुबह उस पर काम करेंगे ही। कहानी हो या उपन्यास, उसे प्रारंभ करना सदैव उनके लिए चुनौतीपूर्ण रहता रहा। लेकिन सुबह जब वह कंप्यूटर पर उस पर काम करने के लिए बैठे सब सहज लगा और कहानी तेजी से आकार लेने लगी। उस समय वह उसे अंतिम रूप दे रहे थे। विचार और भाव तेजी से मस्तिष्क में दौड़ रहे थे और उँगलियाँ कंप्यूटर पर। तभी मोबाइल की घंटी उन्हें सुनाई दी। मोबाइल लिविंग-रूम में रखा था। काम करते समय प्राय: वह उसे पास नहीं रखते। प्राय: उसकी आवाज धीमी कर देते हैं। लेखन के समय व्यवधान उन्हें स्वीकार नहीं। लेकिन उस दिन वह उसकी आवाज धीमी करना भूल गए थे। वह अचंभित थे। फोन करनेवाले ने पाँच मिनट के अंदर सात बार फोन किया।

'बेटे का तो नहीं!' उन्होंने कहानी पर काम रोककर सोचा। वह अमेरिका में है। 'लेकिन वह इस समय फोन नहीं करता। जब भी करता है, सुबह नौ-दस बजे तक कर लेता है। इस समय तो वहाँ रात के साढ़े ग्यारह-बारह बज रहे होंगे। सुबह आठ बजे उसे ऑफिस के लिए निकलना होता है जो उसके निवास से डेढ़ घंटे के ड्राइव पर है।' कंप्यूटर पर उँगलियाँ चलना बंद हो गईं। 'फिर किसका था?' वह फिर सोचने लगे। तभी उन्हें याद आया कि इस प्रकार उतावलेपन के साथ एक-दो बार विपाशा ने उन्हें फोन किया था। 'हो सकता है उसी का हो। फिर भी देख लेना चाहिए।' सोचकर वह उठे और मोबाइल चेक किया। विपाशा का ही था। उन्होंने फोन की आवाज धीमी की, जिससे यदि वह फिर करे तो उन्हें फोन की आवाज सुनाई न दे। विपाशा का जब अपना कोई

सुपरिचित लेखक। १५ उपन्यास, १५ कहानी-संग्रह, ४ संस्मरण, ३ किशोर उपन्यास, १० बाल कहानी-संग्रह, ५ आलोचनाएँ, यात्रा-संस्मरण, लघुकथा-संग्रह, साक्षात्कार, सहित अब तक ७० पुस्तकें प्रकाशित। हिंदी अकादमी दिल्ली से १९९० और २००० में सम्मानित।

काम होता है तब वह इसी प्रकार फोन करती है वरना महीनों बीत जाते हैं व्हाट्स ऐप पर मेसेज तक नहीं करती और यदि वह करते हैं, तब उनके मेसेज को देखती भी नहीं, उत्तर देना तो दूर।

'कहानी समाप्त करके उसे फोन करूँगा।' उन्होंने सोचा, 'लेकिन तब तक निश्चित ही वह दो-चार बार और करेगी।' मोबाइल को साइलेंट करना ठीक था।'

वह कंप्यूटर पर आ बैठे। साढ़े बारह बजे कहानी की अंतिम पंक्ति लिखकर उन्होंने कंप्यूटर बंद किया। खड़े होकर कमर सीधी की। लगातार साढ़े चार घंटे कंप्यूटर पर बैठे रहने से कमर और पीठ दुखने लगे थे। उनके साथ प्राय: ऐसा ही होता है। जब किसी काम का भूत सिर पर सवार होता है तब जब तक उसे समाप्त नहीं कर लेते बीच में दस-पंद्रह मिनट का विराम देकर वह घंटों, कभी-कभी सात-आठ घंटे तक काम करते रहते हैं। जब उपन्यास पर काम करते हैं चैप्टर समाप्त कर ही कंप्यूटर से उठते हैं।

उन्होंने शीशे के दरवाजे और खिड़की से बाहर सड़क की ओर देखा। कोहरा काफी हद तक छँट चुका था और बीमार सी धूप सड़क पर दिख रही थी। एक घंटा पहले तक सोसाइटी के बाहर हाई-वे पर न दिखनेवाले वाहन दौड़ते दिख रहे थे। ठंड अभी भी उतनी ही थी। बाहर का जायजा लेने के लिए दरवाजा खोलकर वह बालकनी में गए। दरवाजा खुलते ही ठंडी हवा के झोंके ने उनका स्वागत किया। कमरे में बैठे अनुमान नहीं लगा पाए थे कि बाहर शीत लहर चल रही थी। दरवाजा बंद कर वह विपाशा को फोन करने के लिए लिविंग रूम में आ गए। उन्हें

एक माह पहले उससे हुई व्वाट्स एप चैट याद हो आई।

वह २ जनवरी की रात पौने दस बजे की बात थी। उस दिन भी ठंड अधिक थी। हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड में विगत तीन दिनों से बहुत बर्फ गिर रही थी। मौसम विभाग की घोषणा के अनुसार अगले एक सप्ताह तक शीतलहर चलने की घोषणा थी उसी प्रकार जैसा कि उस दिन से पहले मौसम विभाग ने घोषणा की थी और फरवरी का पहला सप्ताह होने के बावजूद उतनी ही ठंड थी जितनी २ जनवरी को थी।

२ जनवरी को वह सोने की तैयारी कर ही रहे थे और सुबह जगने के लिए अलार्म लगाने के लिए मोबाइल उठाया ही था कि विपाशा का व्हाट्सअप मेसेज उन्हें मिला। अमूमन वह पौने दस बजे न किसी का फोन सुनते हैं और न ही किसी के मेसेज के उत्तर देते हैं, लेकिन उत्सुकतावश उन्होंने उसका मेसेज देखा और उत्तर भी दिया। उसके बाद विपाशा लगातार उनसे प्रश्न-दर-प्रश्न करती रही और वह उत्तर देते रहे थे।

उस दिन उसने अपने सद्य:प्रकाशित कविता-संग्रह को लेकर चैट किया था। उसका वह कविता-संग्रह उनके परिचित प्रकाशक के यहाँ से प्रकाशित हुआ था। उसके किसी मित्र ने अमेजॉन पर पुस्तक के लिए आदेश बुक किया था लेकिन अमेजॉन से उसके मित्र को लगातार पुस्तक के अनुपलब्ध होने का संदेश आ रहा है। उसने अपने मित्र के अमेजॉन से मिले संदेशों के स्क्रीन शॉट्स भी उन्हें भेजे थे। उन्होंने उसे प्रकाशक से बात करने के लिए कहा लेकिन वह चाहती थी कि वह प्रकाशक से बात करें क्योंकि प्रकाशक उनका मित्र भी है। अंतत: उसके चैट से ऊबकर उन्होंने उसे संदेश दिया कि वह सुबह उन्हें फोन करे। उसने उनका वह संदेश नहीं देखा और न ही उसने उन्हें फोन किया। अगले दिन सुबह उन्होंने उसे उसके दूसरे व्वाट्स ऐप नंबर पर संदेश देकर जानना चाहा कि प्रकाशक से उसकी बात हुई या नहीं और तभी उन्होंने डॉ. प्रतीक तिवारी के आलेख के विषय में पूछा और लिखा कि यदि डॉ. तिवारी ने आलेख नहीं भेजा तो वह उनसे बात करके या उन्हें व्हाट्स ऐप संदेश देकर उनके उत्तर से उन्हें अवगत करवाएगी। उस संदेश को देखने के बाद भी उसने महीने भर तक चुप्पी साध रखी थी। और आज फोन-दर-फोन।

'निश्चित ही इसकी अपनी कोई खास समस्या है।' सोचते हुए वह सोफे पर बैठे ही थे कि मोबाइल फिर बज उठा। उठाया तो विपाशा का शहद मिश्रित स्वर सुनाई पड़ा, "सर, मेरे पास वर्माजी का फोन आया था। वह मेरे कहानी-संग्रह का शीर्षक बदलने के लिए कह रहे हैं।"

वर्मा उसके दूसरे प्रकाशक हैं। वह उसका पहला कहानी-संग्रह प्रकाशित कर रहे हैं। वर्मा से भी उन्होंने ही उसका परिचय करवाया था। दरअसल विपाशा ने जब अपना कविता-संग्रह 'भारत पुस्तक सदन' को दिया था तब कहा था कि उसके पास बारह कहानियाँ हो चुकी हैं। वह चाहती है कि उसका कहानी-संग्रह भी प्रकाशित हो जाए। अधिक-से-अधिक पुस्तकों के प्रकाशन से उसे उस विश्वविद्यालय के किसी महाविद्यालय में नियुक्ति पाने में सुविधा रहेगी, जहाँ की वह छात्रा रही है। कुछ दिनों तक उस विश्वविद्यालय के एक महाविद्यालय में तदर्थ पढ़ाने के बाद उत्तर प्रदेश उच्च शिक्षा आयोग की ओर से उसका स्थायी चयन बनारस के एक महाविद्यालय में हो गया था। लेकिन वह वापस उस विश्वविद्यालय में लौटना चाहती है। उन्होंने वर्मा को उसका संग्रह प्रकाशित करने की सिफारिश की और उनकी बात को सम्मान देते हुए वर्मा उसका पहला कहानी-संग्रह प्रकाशित कर रहा था।

विपाशा के कहानी-संग्रह के शीर्षक को बदलने के वर्मा के निर्णय के विषय में चर्चा करने से पहले विपाशा के उनसे परिचित होने के विषय में संक्षेप में बताना आवश्यक है। प्रखर आलोचक डॉ. जयप्रकाश उनके मित्र थे। डॉ. जयप्रकाश उस विश्वविद्यालय में प्रोफेसर थे। विपाशा उनकी छात्रा थी। उनकी सलाह पर उसने एक अन्य प्रोफेसर के निर्देशन में उनके उपन्यास पर एम.फिल. किया था। निश्चित ही विपाशा एक प्रतिभाशाली छात्रा थी और डॉ. जयप्रकाश सदैव अपने प्रतिभाशाली छात्रों को आगे बढ़ाने के लिए उनका उत्साहवर्धन करते और आवश्यकता पड़ने पर यथा-संभव सहायता करते। विपाशा ने उसी विश्वविद्यालय से पी-एच.डी. की थी और डॉ. जयप्रकाश के प्रयास से वह एक महाविद्यालय में तदर्थ नियुक्ति पाने में सफल रही थी।

उनके उपन्यास पर एम.फिल. करने के बाद वह उनके भी संपर्क में रहने लगी थी। विपाशा के तदर्थ नियुक्ति पाने के अगले वर्ष डॉ. जयप्रकाश विश्वविद्यालय से सेवामुक्त हो गए और कुछ माह पश्चात ही हृदयाघात से उनका देहांत हो गया। उनकी मृत्यु की सूचना उन्होंने विपाशा को फोन पर रात में दी और बताया कि अगले दिन सुबह नौ बजे सत्यबोध घाट में उनका अंतिम संस्कार होगा।

'मैं पहुँचूँगी सर।' विपाशा ने कहा था।

अगले दिन डॉ. जयप्रकाश की अंत्येष्टि के समय अंतिम क्षण तक वह विपाशा को वहाँ एकत्र भीड़ में खोजते रहे, लेकिन वह नहीं दिखी। रात उसका मोबाइल पर एस.एम.एस. मिला कि रात बारह बजे उसके एक रिश्तेदार गाँव से लोहिया अस्पताल में चेकअप के लिए आ गए थे और सुबह उसे उनके साथ अस्पताल जाना पड़ा था। उसका एस.एम.एस. संदेश पढ़कर वह सोचते रहे थे कि जो व्यक्ति गाँव से दिल्ली उसके निवास तक पहुँच सकता है, वह लोहिया अस्पताल भी पहुँच सकता था और विपाशा अपने उस गुरु के अंतिम दर्शन के बाद अस्पताल जा सकती थी, जिसने उसे कॅरियर में आगे बढ़ाने के लिए न केवल प्रोत्साहित किया बल्कि उसके लिए एक महाविद्यालय में तदर्थ नियुक्ति दिलवाने में अहम भूमिका निभाई थी। उस दिन वह घंटों विपाशा के बारे में सोचते रहे थे। लेकिन तब उन्होंने यह भी सोचा था कि संभव है कि उसके रिश्तेदार के स्वास्थ्य की स्थिति चिंताजनक

रही हो और उसे उसके साथ जाना पड़ा हो।

डॉ. जयप्रकाश की मृत्यु के पश्चात् विपाशा ने लंबे समय के लिए चुप्पी साध ली थी। लेकिन अचानक एक दिन उसका फोन आया कि वह मुझसे मिलना चाहती है। मिल तो नहीं सके, वह लेकिन किसलिए मिलना चाहती है पूछने पर उसने कहा कि वह अपना शोध-प्रबंध प्रकाशित करवाना चाहती है। उसे पता था कि उनके अनेक प्रकाशकों के साथ मधुर संबंध हैं और उनकी बात को उनके प्रकाशक कभी इनकार नहीं करेंगे। यह बात उसके बनारस के एक महाविद्यालय में चयनित होने से एक वर्ष पहले की थी। प्रकाशक ने उसके शोध-प्रबंध को एक स्वतंत्र आलोचना पुस्तक के रूप में प्रकाशित किया और स्वयं विपाशा का कहना था कि 'उत्तर प्रदेश उच्च शिक्षा आयोग' में उसके चयन में उस पुस्तक की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही थी। बनारस में नियुक्ति पाने के बाद से ही वह उस महाविद्यालय में लौटने के सपने देखने लगी थी।

बनारस पहुँचने के पश्चात् उसने एक दिन उन्हें फोन करके उनके उपन्यासों पर एक आलोचनात्मक पुस्तक लिखने की चर्चा करते हुए कहा कि वह उस काम को जल्दी समाप्त करना चाहती है।

"सर, मेरा सपना अपने उस विश्वविद्यालय में पढ़ाने का है, जहाँ की मैं छात्रा रही हूँ। इसके लिए आवश्यक है कि मेरी अधिक-से-अधिक प्रकाशित पुस्तकें हों—विशेषकर आलोचना पुस्तकें।" उसका वही पुराना तर्क।

"विचार सही है।" कुछ सोचते हुए उन्होंने कहा, "मेरा एक सुझाव है।"

"सर, कहें।" विपाशा ऐसे ही बोलती है।

"विपाशा, मेरी सलाह है कि तुम डॉ. जयप्रकाश के आलोचना-कर्म पर एक पुस्तक लिखो। एक सशक्त आलोचक होने के बावजूद उनको वह चर्चा नहीं मिली, जिसके वह हकदार थे। वह साहित्यिक दुनियादारी से दूर एक सीधे व्यक्ति थे। केवल काम में विश्वास रखते थे।" एक क्षण रुककर उन्होंने आगे कहा, "तुम उनकी प्रिय शिष्या रही हो, तुम्हारे लिए उनसे जो बन पड़ा, उन्होंने किया।"

"जी सर, वह मुझे बहुत प्रोत्साहित करते थे।"

"केवल इतना ही?"

"केवल इतना ही नहीं सर।" विपाशा की आवाज लड़खड़ा गई।

"मेरा सुझाव तो यही है कि उनके आलोचना कर्म पर कार्य करो। मेरे उपन्यासों पर तो बहुत से छात्र पी-एच.डी. और एम.फिल. कर चुके हैं और कर रहे हैं, लेकिन उनकी घोर उपेक्षा हुई है। और ऐसा तब हुआ जबकि वह एक प्रोफेसर थे और उनके अधीन कितने ही छात्रों ने शोध किया था।"

"जी सर।" इस बार विपाशा की आवाज में पहले की अपेक्षा कहीं अधिक शिथिलता उन्होंने अनुभव की।

"कोई परेशानी?" उन्हें लगा कि उनकी बात से विपाशा परेशान थी।

"सर, आपके तीन उपन्यास मैंने पढ़ रखे हैं और मैं तीन और पढ़कर काम करना चाहती थी। वह मेरे लिए आसान होता, लेकिन आलोचना!"

"हुम," देर तक वह सोचते रहे, फिर बोले, "मेरा एक सुझाव है।"

"कहें सर।"

"तुम डॉ. जयप्रकाश के व्यक्तित्व और कृतित्व पर पुस्तक संपादित करो। कुछ लोगों से उनके व्यक्तित्व पर लिखने के लिए आग्रह करो और कुछ से कृतित्व पर। मैं भी लोगों को कहूँगा। मैं उनके व्यक्तित्व और कृतित्व पर सम्मिलित आलेख लिखूँगा।"

"सर, यह सही रहेगा।" क्षणभर रुककर उत्साहपूर्ण स्वर में वह बोली, "सर, जिनसे लिखवाना है, उनकी सूची उनके फोन नंबर के साथ मुझे भेज दें, मैं सभी से संपर्क कर लूँगी।" कुछ देर तक चुप रहने के बाद वह बोली, "और सर, प्रकाशक भी आप ही दिलवा दीजिएगा।"

"ठीक।"

और उन्होंने डॉ. जयप्रकाश के परिचित पंद्रह लोगों के नाम उनके फोन नंबर सहित विपाशा को दे दिए। एक-दो वरिष्ठ आलोचकों ने निर्धारित समय सीमा के बाद आलेख देने और एक-दो बार उन्हें स्मरण करवाने की बात उसे कही। डॉ. तिवारी को छोड़कर सभी ने अपने आलेख भेज दिए थे। भेजनेवालों में अधिकांश ने उन्हें फोन पर उसे आलेख भेजने की सूचना दी थी। डॉ. तिवारी ने उसे और उन्हें भी फोन पर सूचित किया कि वह लिखने में कुछ और समय लेंगे, लेकिन जैसे भी होगा नवंबर अंत तक आलेख अवश्य भेज देंगे। लेकिन उस दिन के बाद विपाशा ने चुप्पी साध ली थी। न ही फोन किया और न ही उनके मेसेज का उत्तर दिया।

वह कारण तलाशने का प्रयास करने लगे और तभी उन्हें याद आई थी अक्तूबर के आखिरी सप्ताह उससे हुई बात। फोन विपाशा ने किया था लेकिन जहाँ वह हर बार लेखकों के मिले आलेखों पर चर्चा करती उस दिन उसने उस विश्वविद्यालय के विभागाध्यक्ष के लिए फोन किया था, जहाँ की वह छात्रा रही थी और जहाँ के किसी महाविद्यालय में वह नियुक्ति चाहती थी।

"सर, वीरसिंहजी आपके घनिष्ठ मित्र हैं न!"

"हाँ, क्यों?"

"सर, वीरसिंहजी विश्वविद्यालय के विभागाध्यक्ष डॉ. श्याम सिंहजी के भी घनिष्ठ मित्र हैं।"

"शायद।"

"सर, आपने ही एक दिन बताया था।"

देर तक सोचने के बाद उन्होंने कहा, "याद नहीं, लेकिन शायद दोनों अच्छे मित्र हैं। डॉ. श्याम सिंह शायद हाल ही में विश्वविद्यालय के विभागाध्यक्ष बने हैं। सिफारिशी व्यक्ति हैं।"

"सर, हर विश्वविद्यालय में सिफारिशी लोग ही ऊपर पहुँचते हैं।"

"तुम ठीक कह रही हो। ऊपर की बात ही क्या, आजकल तो बिना सिफारिश के किसी को किसी भी विश्वविद्यालय या कॉलेज में नियुक्ति नहीं मिलती। नेट आदि परीक्षाएँ तो केवल दिखावा मात्र हैं। कितने ही

नेट उत्तीर्ण पी-एच.डी., डी.लिट. बेकार घूम रहे हैं और निकम्मे प्रोफेसर बन रहे हैं। विभागाध्यक्ष बन रहे हैं।" वह क्षणभर रुके थे, "और केवल शिक्षण में ही नहीं विश्वविद्यालय और कॉलेजों में हर स्तर पर भ्रष्टाचार है—नियुक्तियों में।"

"जी सर।"

अपने को संयमित करते हुए उन्होंने पूछा, "क्या काम है वीर सिंह से?"

"सर, मेरी एक मित्र ने बताया कि वहाँ के कुछ महाविद्यालयों में जल्दी ही कुछ सहायक प्रोफेसरों के स्थायी पदों के लिए विज्ञापन निकलनेवाले हैं। यदि आप वीर सिंहजी से मेरे लिए कह देंगे और वह डॉ. श्याम सिंहजी से मेरी सिफारिश कर देंगे तो संभव है कि मुझे चांस मिल जाए। डॉ. श्याम सिंहजी के चाहने पर ही वहाँ नियुक्ति संभव हो पाएगी।"

'हुँह।' वह सोचने लगे थे।

"सर, आपको एक बार ही कहना है, फिर आप मुझे वीर सिंहजी का नंबर दे दीजिएगा। मैं स्वयं उनसे बात कर लूँगी। आप जानते ही हैं सर कि मेरे पति और बच्चे वहीं हैं। मैं माह-दो माह में वहाँ आती रहती हूँ। वीर सिंहजी से आपके कहने के बाद मैं उनसे और डॉ. श्याम सिंहजी से मिल लूँगी।" धाराप्रवाह बोलने के बाद विपाशा क्षणभर के लिए रुकी फिर स्वर में दयनीयता लाती हुई बोली, क्प्लीज सर।"

"विपाशा, मैं वीर सिंह का नंबर अभी तुम्हें व्हाट्सएप कर दूँगा और उन्हें तुम्हारे बारे में कह भी दूँगा, लेकिन तुम्हें एक बात से अवगत करवा दूँ कि डॉ. श्याम सिंह और डॉ. जयप्रकाश के रिश्ते अच्छे नहीं थे। डॉ. श्याम सिंह डॉ. जयप्रकाश की विद्वत्ता और उनके लेखकीय अवदान के समक्ष कहीं नहीं ठहरते, हालाँकि वह भी अपने को लेखक कहते हैं। लेकिन उन्होंने क्या लिखा है, यह दुनिया जानती है। आज जहाँ पहुँचे हैं, वह तुम भी जानती हो और विश्वविद्यालय में दूसरे भी। उनकी चाटुकारी प्रवृत्ति डॉ. जयप्रकाश को नापसंद थी और यही दोनों के बीच दूरी का कारण थी। डॉ. जयप्रकाश की प्रतिभा से डॉ. श्याम सिंह को ईर्ष्या थी और सुनने में तो यह भी आया था कि डॉ. जयप्रकाश विभागाध्यक्ष न बनें, इसके लिए कुछ लोगों के साथ मिलकर डॉ. श्याम सिंह ने उनके विरुद्ध कुछ षड्यंत्र भी किए थे।"

उन्हें लगा कि इतना सब कहते हुए वह थक गए थे। वह चुप हो गए।

"सर, डॉ. जयप्रकाशजी और डॉ. श्याम सिंहजी का वह आपसी मसला था। आप प्लीज मेरे लिए वीर सिंहजी से कह देंगे और मुझे उनका नंबर दे देंगे। आपके कहने के बाद मैं भी उनसे बात कर लूँगी।"

"ठीक।"

और उन्होंने उसे वीर सिंह का नंबर दे दिया था और वीर सिंह को कह भी दिया था।

"सर-सर, आपने मेरी बात शायद सुनी नहीं।" विपाशा का स्वर सुनकर वह चौंके। सच ही वह कहीं गुम सा हो गए थे।

"क्या?"

"सर, वर्माजी मेरे कहानी-संग्रह का शीर्षक बदलना चाहते हैं।"

"अभी क्या शीर्षक है?"

"मेरी प्रिय बारह कहानियाँ।"

"उन्होंने यह श्रृंखला प्रारंभ की है। दस वरिष्ठ लेखकों की पुस्तकें प्रकाशित कर रहे हैं।" वह बोले, "वर्माजी क्या कह रहे हैं?"

"उनका कहना है कि यह मेरा पहला कहानी-संग्रह है, इसलिए वह वरिष्ठ लेखकों के साथ 'मेरी प्रिय बारह कहानियाँ' श्रृखंला के अंतर्गत इसे नहीं छापेंगे।"

"तो, नाम बदल दो।"

"सर इससे क्या फर्क पड़ता है। मेरे संग्रह में बारह कहानियाँ हैं न!"

"बेशक हैं। लेकिन तुम्हारे पास यही बारह कहानियाँ थीं। जबकि सभी वरिष्ठ लेखकों के कितने ही संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। कुछ संग्रह छप जाने के बाद ऐसी श्रृखंला में तुम्हारा संग्रह छपना उचित होगा।"

"सर, यह तो कोई बात न हुई।"

कुछ देर दोनों ओर चुप्पी रही। अंतत: वही बोली, "ठीक है सर, मैं शीर्षक बदल दूँगी। अपनी किसी कहानी के नाम पर रख दूँगी। लेकिन अच्छा रहा होता कि उसी शीर्षक से वर्माजी मेरा संग्रह भी प्रकाशित करते। मुझे उसका अलग ही वेटेज मिलता।"

वह उस विश्वविद्यालय में अपनी नियुक्ति को लेकर वेटेज की बात कर रही थी, यह बात समझते उन्हें देर नहीं लगी, वह चुप रहे। तभी उन्हें अपने व्हाट्स ऐप मेसेज की याद आई। पूछा, "मैंने डॉ. प्रतीक तिवारी के बारे में व्वाट्स ऐप मेसेज किया था। तुमने कोई उत्तर नहीं दिया।"

"सर, वह मोबाइल मेरे हसबैंड का है।"

"मेसेज तो देखा गया था।"

"जी सर, पति ने मुझे पढ़कर सुनाया था।"

"फिर तुमने डॉ. तिवारी से संपर्क किया था?"

क्षणभर के लिए विपाशा चुप रही, फिर बोली, "सर मेरा व्वाट्स एप खराब हो गया है।"

"और फोन?"

विपाशा की लंबी चुप्पी और उसके बाद उसने फोन काट दिया। वह उसके फोन की प्रतीक्षा करते रहे और सोचते रहे कि भले ही उन्हें तकनीक की अधिक जानकारी नहीं, लेकिन यह जानकारी तो है ही कि कभी किसी एक का व्वाट्स एप खराब नहीं होता, बल्कि खराब होता ही नहीं। तभी उन्हें उस विभागाध्याक्ष के बारे में कही अपनी बात याद हो आई और उन्होंने सोचा कि डॉ. जयप्रकाश के व्यक्तित्व और कृतित्व पर पुस्तक संपादित करके विपाशा उस विभागाध्यक्ष को नाराज नहीं करना चाहती होगी। तो क्या कैरियरिस्ट ऐसा ही करते हैं! तब से लगातार वह इस बारे में सोच रहे हैं।

फ्लैट नं. ७०५, टॉवर-८, विपुल गार्डन
धारूहेड़ा-१२३१०६ (हरियाणा)
दूरभाष : ८०५९९४८२३३

संयुक्त राष्ट्र की भाषा बने हिंदी

● गौरीशंकर वैश्य 'विनम्र'

भारत एकमात्र ऐसा देश है, जिसकी पाँच भाषाएँ विश्व की १६ प्रमुख भाषाओं की सूची में सम्मिलित हैं। १६० देशों के लोग भारतीय भाषाएँ बोलते हैं, विश्व के ९३ देश ऐसे हैं, जिनमें हिंदी जीवन के बहुआयामों से जुड़ी होने के साथ विद्यालय और विश्वविद्यालय स्तर पर पढ़ाई जाती है। चीनी भाषा मंदारिन बोलनेवालों की संख्या हिंदी बोलनेवालों से अधिक अवश्य है, किंतु अपनी चित्रात्मक जटिलता के कारण इसे बोलनेवालों का क्षेत्र चीन तक ही सीमित है।

भारत में दीर्घकाल तक शासकों की भाषा रही अंग्रेजी का शासकीय, शिक्षा और तकनीकी क्षेत्रों में प्रयोग तो अधिक है, परंतु उसके बोलनेवाले हिंदी-भाषियों से कम हैं। प्रारंभ में संयुक्त राष्ट्र की आधिकारिक भाषाएँ अंग्रेजी, रूसी, फ्रांसीसी और चीनी थीं। ये भाषाएँ अपनी विलक्षणता या अधिक बोली जाने के कारण नहीं, अपितु संयुक्त राष्ट्र की भाषा इसलिए बन सकीं, क्योंकि ये विजेता महाशक्तियों की भाषाएँ थीं। बाद में इनमें अरबी और स्पेनिश सम्मिलित कर ली गईं। विश्वपटल पर हिंदी-भाषियों की संख्या दूसरे स्थान पर होने के बाद भी इसे संयुक्त राष्ट्र में नहीं लिया गया। यदि भारतीय और अनिवासी भारतीयों को जोड़ लिया जाए तो हिंदी विश्व में प्रथम स्थान पर खड़ी हो जाती है।

भाषाई आँकड़ों की दृष्टि से सर्वाधिक प्रमाणित जानकारी के अनुसार संयुक्त राष्ट्र की आधिकारिक छह भाषाओं में हिंदी की स्थिति निम्नवत् है— मंदारिन चीनी ८०, हिंदी ५५, स्पेनिश ४०, अंग्रेजी ४०, अरबी २०, रूसी १७, फ्रांसीसी ९ करोड़। इससे स्पष्ट है कि हिंदी संयुक्त राष्ट्र की भाषाओं के साथ अग्रिम पंक्ति में रहने का अधिकार रखती है। विश्व भाषाई पत्रक स्रोत ग्रंथ 'लैंग्वेज ऐंड स्पीक कम्युनिटीज' के अनुसार विश्व में ९६.६० करोड़ लोग हिंदी बोलते तथा समझते हैं, अर्थात् हिंदी का स्थान मंदारिन के ऊपर है। इस प्रकार संख्याबल की दृष्टि से विश्व में हिंदी की स्थिति अत्यंत सुदृढ़ है। केंद्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा संयुक्त राष्ट्र को भेजी गई रिपोर्ट में विश्व ग्रंथों को आँकड़ों का आधार बनाया गया, जिसके अनुसार भी हिंदी को अन्य विश्व भाषाओं से उच्च स्थान पर पाया गया।

विश्व में हिंदी की धाक

विश्व में दिन-प्रति-दिन हिंदी की धाक जम रही है, यह तथ्य निम्नांकित गतिविधियों से स्वत: स्पष्ट है—

• विश्वभर में १५० से अधिक देशों के २०० विश्वविद्यालयों में हिंदी पढ़ाई जा रही है।

• फिजी, मॉरीशस, गुयाना, सूरीनाम, मलेशिया, टोबैगो आदि देशों में हिंदी अल्पसंख्यक भाषा है।

• भारत को सुचारु रूप से जानने के लिए विश्व में लगभग १२५ शिक्षण संस्थानों में हिंदी का अध्ययन-अध्यापन हो रहा है।

• जर्मनी के १५ विश्वविद्यालयों ने हिंदी भाषा और साहित्य के अध्ययन को अपनाया है। कई संगठन हिंदी का प्रचार कर रहे हैं।

• अमेरिका के ३२ विश्वविद्यालयों और शिक्षण संस्थानों में हिंदी पढ़ाई जा रही है।

• चीन में १९४२ से हिंदी अध्ययन शुरू हो चुका है। १९५७ से हिंदी साहित्य का चीनी में अनुवाद कार्य आरंभ हो चुका है।

• संयुक्त अरब अमीरात की राजधानी अबूधाबी ने अरबी और अंग्रेजी के बाद हिंदी को अपनी अदालतों में तीसरी आधिकारिक भाषा के रूप में सम्मिलित किया है। यह हिंदी को विश्व में मिल रहे सम्मान का एक प्रतीक है।

• विदेशों में २५ से अधिक पत्र-पत्रिकाएँ लगभग नियमित रूप से हिंदी में प्रकाशित हो रही हैं।

• यू.ए.ई. में हम 'एफ.एम.' सहित अनेक देश हिंदी कार्यक्रम प्रसारित करते हैं, जिसमें बी.बी.सी., जर्मनी के डायचे बेले, जापान के एन.एच.के. वर्ल्ड और चीन के चाइना रेडियो इंटरनेशनल हिंदी सेवा विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

एक अध्ययन के अनुसार हिंदी सामग्री की खपत लगभग ९४ प्रतिशत तक बढ़ी है। हर पाँच में एक व्यक्ति हिंदी में इंटेरनेट प्रयोग करता है। फेसबुक, ट्विटर और वाट्सएप में हिंदी लिख सकते हैं। इसके लिए गूगल

सुपरिचित लेखक। 'दानवीर भामाशाह', 'राजा टोडरमल', 'नर नारायण नरोत्तम' (खंडकाव्य), बाल विज्ञान कविताएँ, पर्यावरणीय बाल कविताएँ, बाल रश्मि, अवधी बाल कविताएँ, विनम्र बाल पहेलियाँ सहित बाल साहित्य की दस पुस्तकें। सोहनलाल द्विवेदी बाल कविता सम्मान, साहित्य गौरव सम्मान सहित अनेक सम्मान।

हिंदी इनपुट, लिपिक डॉट—इन जैसे अनेक सॉफ्टवेयर और स्मार्टफोन एप्लीकेशन उपलब्ध हैं। हिंदी-अंग्रेजी अनुवाद भी संभव है।

ट्विटर शैली पर बनाया मूषक

सोशल नेटवर्किंग वेबसाइट की भाँति हिंदीभाषी लोगों के लिए पुणे के अनुराग गौड़ और उनके साथियों ने 'मूषक' नामक सोशल नेटवर्किंग साइट बनाई है। इसमें ट्विटर की १४० शब्दों की सीमा की अपेक्षा शब्द-सीमा पाँच सौ है। इसे इंटरनेट पर डब्ल्यू.डब्ल्यू.डब्ल्यू. और मूषक डॉट इन पर खोला जा सकता है। इसमें किसी भी हिंदी शब्द को रोमन में लिखने पर उसका हिंदी विकल्प नीचे आ जाता है। उसे चुनकर हिंदी में लिखा जा सकता है।

विश्व में छाई है हिंदी

हिंदी भारत के अतिरिक्त नेपाल, मॉरीशस, फिजी, सूरीनाम, गुयाना, सिंगापुर, भूटान, इंडोनेशिया, त्रिनिदाद, टोबैगो, बांग्लादेश और पाकिस्तान में खूब बोली एवं समझी जाती है। भारत की राजभाषा हिंदी है और पाकिस्तान की उर्दू। इन दोनों भाषाओं के बोलने में एकरूपता है। दोनों देशों के लोग लगभग ६० देशों में आजीविका के लिए वहाँ निवास करते हैं। इनकी संपर्क भाषा हिंदी मिश्रित उर्दू है। विश्व के लगभग दो करोड़ लोग फिल्मों और दूरदर्शन के माध्यम से भी हिंदी का निरंतर प्रचार-प्रसार कर रहे हैं। प्रधानमंत्री बनने के बाद से नरेंद्र मोदी ने विदेशों में हिंदी में उद्बोधन देकर यह प्रमाणित कर दिया है कि हिंदी बोलने और समझनेवाले लोग विश्व में अधिकतर देशों में हैं। इस परिदृश्य में हिंदी को तुरंत संयुक्त राष्ट्र की भाषा बन जाना चाहिए, किंतु विश्वपटल पर भाषाएँ भी राजनीति की शिकार हैं। जो देश अपनी बात मनवाने के लिए लड़ाई को तत्पर हो जाते हैं, वे सभी देश अपनी-अपनी मातृभाषाओं को संयुक्त राष्ट्र में स्थान दिलाने में सफल रहे हैं। अब हिंदी विश्वपटल पर व्यापार, सूचना और विज्ञापन की सशक्त भाषा के रूप में उभर आई है। भारत सहित अन्य एशियाई देश हिंदी को अंग्रेजी के विकल्प के रूप में अपनाने लगे हैं। अब हिंदी को संयुक्त राष्ट्र की भाषा बनने में अधिक देर नहीं है।

हिंदी कैसे बनेगी संयुक्त राष्ट्र की भाषा

१४ सितंबर, १९४९ को संवैधानिक रूप से हिंदी को राजभाषा का दर्जा दिया गया। संविधान के अनुच्छेद ३४३ में यह प्रावधान किया गया है कि देवनागरी लिपि के साथ हिंदी भारत की राजभाषा होगी। राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा के अनुरोध पर १९५३ से देश में प्रतिवर्ष १४ सितंबर 'हिंदी दिवस' के रूप में मनाया जाने लगा, तब से हिंदी को बढ़ावा देने का क्रम निरंतर जारी है। गर्व का विषय है कि वर्ष २००६ से १० जनवरी को 'विश्व हिंदी दिवस' भी मनाया जा रहा है। इसका प्रथम और प्रमुख उद्देश्य ही है, हिंदी को वैश्विक स्तर पर प्रतिष्ठित करना। अनेक व्यवधानों के बाद अभी तक हिंदी राष्ट्रभाषा नहीं बन पाई है।

इस दिशा में १० जून, २०२२ को हिंदी सहित भारतीय भाषाओं के लिए एक ऐतिहासिक दिन सिद्ध हुआ, जब संयुक्त राष्ट्र महासभा में पारित बहुभाषावाद संबंधी प्रस्ताव में पहली बार हिंदी भाषा का उल्लेख हुआ। प्रस्ताव में बहुभाषावाद को बढ़ावा देने के लिए आधिकारिक भाषाओं के अतिरिक्त हिंदी, बांग्ला, उर्दू, पुर्तगाली, स्वाहिली और फारसी को संयुक्त राष्ट्र के कामकाज की भाषा के रूप में स्वीकार किया गया।

संयुक्त राष्ट्र के सदस्य देशों की संख्या १९३ है। संयुक्त राष्ट्र में हिंदी को आधिकारिक भाषा बनाने के लिए एक प्रस्ताव लाना होगा, जिस पर सदस्य देशों के दो-तिहाई सदस्यों अर्थात् १२९ देशों को हिंदी को आधिकारिक भाषा बनाने के पक्ष में 'मत' देना होगा और इसी प्रक्रिया के लिए वित्तीय लागत भी साझा करनी होगी। इसके लिए देश के नेतृत्व को पहल करनी होगी तथा आर्थिक रूप से कमजोर देशों को तैयार करना होगा। हिंदी-प्रेमियों का यह दायित्व बनता है कि वे इस दिशा में उचित पहल करें, जिससे पहले तो हिंदी राष्ट्रीय एजेंडे में शामिल हो और फिर इसकी अगली कड़ी में संयुक्त राष्ट्र की भाषा बनाने का अभियान चलाया जाए।

हिंदी यदि संयुक्त राष्ट्र की भाषा बन जाती है तो हमें सुरक्षा परिषद् में भी स्थान मिल जाएगा। साथ ही अन्य अंतरराष्ट्रीय संगठनों, जैसे अंतरराष्ट्रीय परमाणु एजेंसी, अंतरराष्ट्रीय विकास एजेंसी, अंतरराष्ट्रीय दूर संचार सेवा, संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक संगठन, विश्व स्वास्थ्य संगठन, संयुक्त राष्ट्र औद्योगिक विकास संगठन, संयुक्त राष्ट्र बाल-आपात निधि विश्व मंचों पर देश को हिंदी के माध्यम से संवाद करने तथा अपना पक्ष प्रस्तुत करने का अधिकार मिल जाएगा। इससे देश के आत्मगौरव में वृद्धि होगी।

इस दिशा में १० जून, २०२२ को हिंदी सहित भारतीय भाषाओं के लिए एक ऐतिहासिक दिन सिद्ध हुआ, जब संयुक्त राष्ट्र महासभा में पारित बहुभाषावाद संबंधी प्रस्ताव में पहली बार हिंदी भाषा का उल्लेख हुआ। प्रस्ताव में बहुभाषावाद को बढ़ावा देने के लिए आधिकारिक भाषाओं के अतिरिक्त हिंदी, बांग्ला, उर्दू, पुर्तगाली, स्वाहिली और फारसी को संयुक्त राष्ट्र के कामकाज की भाषा के रूप में स्वीकार किया गया।

वर्ष २०१८ से ही भारत संयुक्त राष्ट्र के वैश्विक संचार विभाग के साथ साझेदारी कर रहा है, जिसका लक्ष्य हिंदी भाषा में संयुक्त राष्ट्र की पहुँच को बढ़ावा देना और विश्वभर के हिंदी बोलनेवालों को जोड़ना है।

हिंदी संयुक्त राष्ट्र की भाषा बन जाती है तो इसे देश की राष्ट्रभाषा बनने में भी अधिक समय नहीं लगेगा। ऐसा होता है तो भारतवासियों के लिए भाषाई दासता से मुक्ति का द्वार खुल जाएगा। संयुक्त राष्ट्र की सातवीं भाषा के रूप में हिंदी को मान्यता दिलाने के अथक प्रयास जारी हैं। आशा की जानी चाहिए कि हिंदी के लिए वर्तमान सशक्त नेतृत्व, सकारात्मक परिवेश और अवसर एक दुर्लभ संयोग है। अत: इस शुभकाल में हिंदी को जनभाषा से संयुक्त राष्ट्र की भाषा बनाने की पहल अवश्य सफल सिद्ध होगी।

साअ

११७ आदिलनगर, विकासनगर
लखनऊ-२२६०२२
दूरभाष : ९८८५६०८७५८५

अँजुरी भर गीत

• विष्णु सक्सैना

सुपरिचित रचनाकार। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में साहित्यिक एवं चिकित्सा संबंधी लेखों का निरंतर प्रकाशन। आकाशवाणी तथा दूरदर्शन के माध्यम से काव्य पाठ एवं साक्षात्कार प्रसारित। उत्तर प्रदेश के सर्वोच्च सम्मान 'यश भारती' सहित कई सम्मानों से सम्मानित।

: एक :

ना सुलगती रात, ना दिन आँसुओं से भीगते।
प्यार के बदले अगर तुम प्यार देना सीखते॥

हमने जब भी गुनगुनाई
नेह की आसावरी,
खुद-ब-खुद बहने लगी
तब शब्द की गोदावरी,
इक सुखद स्पर्श पाकर
गीत अनगिन हो गए,
देह तो जगती रही
मन प्राण दोनों सो गए,

मुँह छिपाते ना उजाले, ना अँधेरे रीझते।
प्यार के बदले अगर तुम प्यार देना सीखते॥

गोद में सर रख के मेरा
तुम जो देते थपकियाँ,
आँसुओं को पोंछ देते
बंद करते सिसकियाँ,
धड़कनों, साँसों, निगाहों ने
निभाया हर धरम
पर तुम्हारे एक ही जुमले ने
तोड़े सब भरम,

फूल मुँह ना फेरते, काँटे न दामन खींचते।
प्यार के बदले अगर तुम प्यार देना सीखते॥

एक तितली फूल के
कहती है जब कुछ कान में,
तो समझ लो रुत
बसंती सी है बियाबान में,
तुम भी छू लेते जो पत्थर
तो ये बनता देवता,
माफ कर देता तुम्हारी
अगली पिछली सब खता

जख्म जो अंदर छिपे, गर वो भी तुमको दीखते।
प्यार के बदले अगर तुम प्यार देना सीखते।

: दो :

मत घबरा तुझमें और मंजिल में थोड़ी सी दूरी है।
चाहे जितना भी मुश्किल हो पहला कदम जरूरी है।

सूरज को मत देख घूरकर,
तुझको अंधा कर देगा,
तेरे जीवन में पूनम की जगह
अमावस धर देगा,

क्यों भटका फिरता जब तेरे पास एक कस्तूरी है।
चाहे जितना भी मुश्किल हो पहला कदम जरूरी है।

तट पर बैठे-बैठे तेरे
हाथ कहाँ कुछ आएगा,
रत्न मिलेंगे तुझको जब
सागर के तह में जाएगा,

कुछ ना आया हाथ समझना डुबकी अभी अधूरी है।
चाहे जितना भी मुश्किल हो पहला कदम जरूरी है।

घने तिमिर के जंगल से
इक दिया अकेला जूझ रहा,
और उजाले में भी तू
चलने का रस्ता बूझ रहा,

हिम्मत से बढ़ता जा प्यारे सुबह बहुत सिंदूरी है।
चाहे जितना भी मुश्किल हो पहला कदम जरूरी है।

पकड़ के उँगली जो हमको
पैरों चलना सिखलाते हैं,
उनको हम मुश्किल राहों पर
इकलौता कर जाते हैं,

फर्ज, वफा, रिश्ते भूले सब ये कैसी मजबूरी है।
चाहे जितना भी मुश्किल हो पहला कदम जरूरी है।

: तीन :

फोन पर बात जब से हुई
जिंदगी जिंदगी हो गई,
दिल की बगिया जो वीरान थी
एकदम से हरी हो गई,

उम्र-भर तैरते ही रहे
पर न कोई किनारा मिला,
यों तो काँधे मिले थे बहुत
पर न कोई सहारा मिला,
जिस्म की सब थकन मिट गई
ये क्या जादूगरी हो गई।
फोन पर बात जब से हुई

उसका मन मुझको मथुरा लगा
वृंदावन से ये तन का भवन,
सोच गोकुल के जैसी लगी
गंगा जमुना से दोनों नयन,
आचमन को अधर ज्यों बढ़े
वो मेरी बाँसुरी हो गई।
फोन पर बात जब से हुई

जाने कितने ही पनघट गया
प्यास मेरी रही जस की तस,
ना तो सरिता से शिकवा कोई
ना ही सागर से कोई बहस,
आज बातों की मीठी छुअन
तृप्ति की गागरी हो गई।
फोन पर बात जब से हुई

आज बगिया में ज्यों ही गया
शूल सब मुसकराने लगे,
मेरे स्वागत में भँवरे सभी
झूमकर गीत गाने लगे,
इक कली मुझसे ऐसे मिली
पाँखुरी पाँखुरी हो गई।
फोन पर बात जब से हुई

कल मुझे राह में चाँद मेरा मिला
दूधिया दूधिया ये बदन हो गया।
थोड़ा मैंने कहा थोड़ा उसने कहा
हल्का-हल्का सा दोनों का मन हो गया।

फिर अचानक ही ठंडी हवाएँ चलीं
जो कि पानी बरसने का संकेत था,
कितनी बारिश हुई कुछ पता न चला
इतना तन का ये झुलसा हुआ रेत था,
कौन बरसा था और कौन भीगा बहुत
प्यासे अधरों का बस आचमन हो गया।

मुद्दतों से जो कलियाँ खिली ही नहीं
पँखुडी खोलकर मुसकराने लगीं,
देखकर के बबूलों के घर रौनकें
नागफनियाँ भी मेहँदी रचाने लगीं,
शाख भी झुक गई साँस भी रुक गई
इतना मदहोश मेरा चमन हो गया।

बात-ही-बात में साँझ होने लगी
रातरानी की कुछ टहनियाँ हिल गईं,
हाथ जैसे ही मैंने बढ़ाया तभी
इस शहर की सभी बत्तियाँ जल गईं,
ढेर से स्वप्न हैं नींद आती नहीं
मेरी पलकों पे कितना वजन हो गया।

सा अ

८ कृष्णा अपार्टमेंट, मॉडल टाउन वेस्ट,
जी.टी. रोड, होटल सिटी गार्डन के पास,
एल.आई.सी. बिल्डिंग के सामने
गाजियाबाद-२०१००१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९४१२२७७२६८

संस्मरण

जन्मतिथि (२८ सितंबर) पर विशेष

लता ताई

● कानन झींगन

सुप्रसिद्ध लेखिका। साहित्य की अनेक विधाओं में निरंतर लेखन। कहानी-संग्रह 'दरीचों से' तथा निबंध-संग्रह 'मास्टर मल्ला राम', 'देर न हो जाए' और 'फरिश्तों की दस्तक' चर्चित हुए। इसके अलावा खलील जिब्रान की लोकप्रिय कृतियों का अनुवाद। फिल्म-जगत् की मशहूर हस्तियों की जीवनी की पुस्तक 'सिने जगत् की रश्मियाँ' बहुत सराही गई।

इस विश्वव्यापी मोहक स्वर से मेरी पहली पहचान कब हुई, बहुत सोचने पर भी याद नहीं आता। बाबूजी का संगीत प्रेम हम सब भाई-बहनों में था, पर छोटे भैया में इस प्रेम ने उन्माद का रूप ले लिया था। मेरे लिए उनका आदेश था कि प्रात: आँख खुलते ही उनके कानों में रेडियो से उठता स्वर लता का ही हो। इस आज्ञा का पालन करने के लिए मैं प्रतिदिन रेडियो से कान लगाकर बैठी रहती। उद्घोषक से लता का नाम सुनते ही स्वर ऊँचा कर देती, और इस तरह से भैया का दिन प्रारंभ होता। यही उनका मंगलाचरण था।

उनका विश्वास था कि प्रात: सबसे पहले लता का स्वर सुनकर सारा दिन सुरीला बीतता था। एक दिन मेरे दुर्भाग्य से कोई बेसुरा स्वर उनके कानों में पड़ गया। उसके बाद उन्होंने क्या हड़कंप मचाया था।

कुछ वर्ष बीते इस अलौकिक नाद की स्वामिनी से भैया के परिचय का संयोग आया। उस समय उनसे अधिक रोमांचित मैं थी। भैया के पत्रों में लता दी से उनके अंतरंग परिचय का विस्तार पढ़ते-पढ़ते हमें लगने लगा था कि वे हमारे परिवार के घेरे में आ गई हैं।

एक दिन उनसे साक्षात्कार का सुअवसर आ ही गया। स्थल था पालम हवाई अड्डा और समय जनवरी की कँपकँपाती रात। उन दिनों हवाई अड्डे पर किसी भी प्रकार का निषेध न था। अपने प्रियजनों को विमान से उतरकर अपनी ओर बढ़ते हुए देखने का रोमांच और आनंद सुलभ था।

विमान से एक गुड़िया सी उतरी। धक् धक् धक् धक् मेरे दिल की धड़कनें मेरे कानों तक पहुँचने लगी थीं। कॉलेज में पहला लैक्चर देते समय भी मैं इतनी घबराई न थी। तभी अचानक वह मेरे सामने थी। मेरे पैर आगे बढ़ें, इससे पहले बीच में ही बाँसुरी सा मधुर स्वर सुनाई पड़ा।

'तुम्हीं हो न कानन' और झट से मेरा हाथ पकड़कर दबाया। उस स्नेहिल स्पर्श की ऊष्मा ने मन के सारे संकोच को विगलित कर दिया।

अशोका होटल में पहुँचने के बाद तक भी उन्होंने मुझे छाया की तरह अपने सान्निध्य में रखा। उन कुछ घंटों के साथ में उनकी जिस विलक्षणता ने मुझे मोहित सा कर दिया, वह थी उनकी मुक्त हँसी। यह खिलखिलाती हँसी पलभर में औपचारिकता और संकोच की दीवारों को गिरा देती थी।

दूसरे दिन अशोका होटल के भव्य हॉल में उनका दूसरा ही रूप देखा। सिनेजगत् के अनेक चाँद-सितारे जगमगा रहे थे। उस लकदक चमक में लता दी अलग ही दिखाई दे रही थीं। सभी का आग्रह था कि लता बाई अकेले कहीं नहीं जाएँगी। हम सब साथ-साथ घूमेंगे, खाएँगे-पीएँगे, मस्ती करेंगे। पर बार-बार मेरा हाथ पकड़कर वे कह रही थीं—

'मैं तो आज कानन के घर पर खाना खाऊँगी।'

इस स्थिति की कल्पना तो मैंने सपने में भी नहीं की थी। उनका हठ देखकर मैं बड़े धर्म-संकट में पड़ गई। क्या करूँ? अपने साधारण से छोटे घर में इनका कैसे स्वागत करूँगी, कहाँ बिठाऊँगी, कहाँ खाना खिलाऊँगी और क्या खिलाऊँगी? मन अजीब असमंजस में था। ऊपर से हँस रही थी, मुँह से उलटे-पुलटे उत्तर दे रही थी—

हाँ, माँ घर पर नहीं हैं।

वे तो मामा के यहाँ गई हैं। बहुत दिन बाद आएँगी।

बड़े भैया ऑफिस से देर में आते हैं।

दीदी, वह तो ससुराल चली गई, और न जाने क्या-क्या?

उस दिन उन्हें गेलॉर्ड ले गई। बड़ी तृप्ति से भोजन किया। परंतु वहाँ से बाहर निकलते ही नटखटपने से मेरी ओर देखकर हँस दी। भोर की खिली कली से हास्य के साथ मुझे छेड़ते हुए बोली—

"मुझे पता है, इस बार अपना घर दिखाने में खूब होशियारी से तुमने टाल दिया। है न? पर अगली बार आऊँगी तो यह नहीं चलेगा। मैं सीधी तुम्हारे घर ही उतरूँगी।"

बंबई जाकर मेरी इस चोरी को उन्होंने ऐसे शब्दबद्ध किया, "आपको देखा, बहुत अच्छा लगा। आपकी माताजी से मिलने की इच्छा थी, लेकिन आपने खाना खिलाने के डर से हमें उस तरफ फटकने भी नहीं दिया। और गेलॉर्ड में खिला दिया।···बस बाकी सब वैसे ही है जैसे था। अरे हाँ, एक नई बात शुरू हुई है, वह है आपकी याद बहुत ज्यादा आती है।"

जनवरी के अंतिम सप्ताह में राजधानी दिल्ली में लता दी के साथ देवानंद, दिलीप कुमार जैसे अभिनेता और अन्य अनेक अभिनेत्रियाँ आईं हुई थीं। २६ जनवरी की शाम को लाल किले की प्राचीर से लता दी

गानेवाली थीं। पहले से ही इस अवसर पर सर्दी से बचने के लिए उन्होंने एक कोट खरीदने की अभिलाषा प्रकट की थी।

सागर तट के वासियों के लिए दिसंबर में हल्की सी खुनकी भी 'ठंडी' का मौसम होती है। सभी लोग स्वेटर पहनने लगते हैं। दिल्ली की ठंड तो उनके लिए 'आर्कटिक' से कम नहीं होती। सो मैंने 'करोल बाग' से एक स्वैगर कोट खरीदा, जिसका उन दिनों फैशन था। बहुत जाँच-पड़ताल के बाद कोट पसंद किया था। बार-बार स्वयं ही पहनकर देखा था। सोचा था, मेरे घुटनों से ऊपर तक आ रहा है तो उनके ठीक बैठेगा। तब तक उन्हें देखा तो था नहीं। उन्होंने कोट पहना और शीशे के सामने खड़ी हुईं तो हँसते-हँसते दुहरी हो गईं। कोट में वे छिप सी गई थीं।

"नहीं कानन यह नहीं चलेगा। स्टेज पर तो मैं दिखाई ही नहीं पड़ूँगी। तुम मुझे छोटा कोट लाकर दो।"

दूसरे दिन सफेद फर का हाफ कोट लाकर उन्हें पहनाया तो संतुष्ट हुईं। भारत अपनी सीमा की रक्षा के लिए चीन के साथ युद्ध कर चुका था। हमारे सिपाही जिस वीरता से शहीद हुए थे, उसको लेकर प्रत्येक भारतवासी गर्व और करुणा का एक साथ अनुभव कर रहा था। दीदी उस गीत को लेकर बहुत उत्साहित थीं। होटल के कमरे में आयोजक आ-जा रहे थे।

(लता ताई फोटोग्राफी की शौकीन थीं। एक दिन वे कैनन नाम का कैमरा खरीद लाईं और मेरे पास आकर बोलीं—'चलो, बाहर चलो, कैमरे का उद्घाटन करते हैं, और नतीजा सामने है।)

दीदी ने मुझसे पूछा, 'तुम्हारे पास टिकट है न? नहीं तो पास दिलवा दूँ।' अपने झूठे स्वाभिमान के कारण मैंने कहा टिकट है। बाद में सारा दिन भटकते रहे, पर टिकटें कहीं नहीं मिलीं। हताश होकर रेडियो पर ही वह कार्यक्रम सुना। मैं उस ऐतिहासिक क्षण की साक्षी न बन सकी, जब कवि प्रदीप के इस अमरगीत को गाकर लता दी ने नेहरूजी को रुला दिया था।

'दिल्ली में चावल बहुत अच्छे मिलते हैं न' यह बात उन्होंने दुहराई थी। बीजी ने पाँच-पाँच किलो के बासमती चावल के दो पैकेट मुझे लेकर दिए। वापसी में हवाई अड्डे पर दो पैकेट देखकर वे खुश तो हुईं, पर लेकर कैसे जाएँ—प्रश्न यह था। अचानक देवानंद और दिलीप कुमार को देखकर दीदी के अधरों पर शरारत की मुसकान आ गई। बस दोनों को एक-एक पैकेट थमाया और काम हो गया।

वे तो बंबई चली गईं, पर इस प्रथम भेंट ने मुझे इस कदर आप्लावित कर दिया कि दूसरे दिन मैथिलीशरण गुप्त की 'पंचवटी' पढ़ाते समय बार-बार 'लक्ष्मण' का नाम लेते हुए जिह्वा लता की ओर फिसल रही थी। अपनी इस मोहाविष्ट दशा का वर्णन मैंने उन्हें पत्र में लिखा। उत्तर आया तो विनय और निरभिमान के भाव से सराबोर। साथ ही अतिशय अभिज्ञान के कारण सहज जीवन जीने से वंचित हो जाने का दु:ख भी मुखर हो रहा था। उन्होंने लिखा था, "क्या सचमुच आपको मेरा स्वभाव पसंद आया! फूल पसंद आए तो इनसान काँटों को तो हाथ नहीं लगाता। माना, आप मेरा गाना पसंद करती हैं, इसका मतलब यह नहीं होता कि आप मुझे भी पसंद करें। और मैं तो बिल्कुल जोकर हूँ, सारा वक्त हा, हा, हो, हो चलता ही रहता है।'''और दो-चार दिन रुक सकती तो बहुत ही मजा आता। आप के साथ आवारागर्दी कर सकती। सच, कानन मैं भूल जाना चाहती हूँ कि मैं बहुत बड़ी गायिका हूँ। यों ही दुनिया की बड़ी तोप बनी फिरती हूँ। जी चाहता है, बिल्कुल आपकी तरह एक विद्यार्थी बनकर इधर-उधर घूमती रहूँ। पर इनसान की अगर हर ख्वाहिश पूरी होती तो इस दुनिया में दु:ख के लिए जगह कहाँ से मिलती? खैर, जो कुछ भी मिला, कम नहीं था।"

दूसरी बार की मुलाकात तक हम दोनों काफी नजदीक आ चुके थे। बीच के अंतराल में हुए पत्र-व्यवहार ने हम दोनों के स्नेह-बंधन को दृढ़तर कर दिया था। इस बार वह दिल्ली आईं तो मैं उन्हें अपने घर भोजन कराने ले गई। उनके लिए बाहर का कमरा खूब सजा दिया और सारा ऊटपटाँग समान भीतर के कमरे में छिपा दिया। परंतु उनको बाहर के ही कमरे में बैठकर क्या चैन पड़ सकता था! वे तो सीधे रसोई में आ धमकीं और माँ से गप्पबाजी करने लगीं।

हमारी सारी सफाई, सजावट बेकार। मैं उनसे खूब गुस्सा हुई, वह हँसते हुए बोलीं, 'तो क्या हो गया। तुम्हें पता नहीं कानन, मैंने इससे कहीं छोटे घर में दिन काटे हैं और सुनो, मैं तुम्हारे फर्नीचर और आलीशान घर से तो मिलने नहीं आई। मैं तो तुम से और तुम्हारे घर के लोगों से मिलने आई हूँ। तुम जहाँ हो, वही स्थान मेरे लिए सुंदर है।"

मेरी आँखें भर आईं। कितना महान् व्यक्तित्व और कितना सहज स्वभाव।

उस दिन लता दी ने शाम तक रुककर खूब आत्मीयता से भर दिया। किसी ने उन्हें आते नहीं देखा, पर न जाने कैसे पूरे मोहल्ले में उनके हमारे यहाँ होने की खबर फैल गई। पता तब चला, जब उनको विदा करने बाहर निकले। पहली मंजिल पर घर था। नीचे झाँका तो भीड़ ही भीड़। हम सब लोग उनकी सुरक्षा के लिए चिंतित हो उठे। पर लता दी घबराई नहीं। उन्होंने कुछ देर बालकनी में खड़े होकर लोगों का अभिनंदन स्वीकार किया। फिर सीढ़ियों में हम लोग ब्लैक कमांडों की तरह उनको बीच में लेकर उतरे और जल्दी से गाड़ी में बिठा दिया। एक तरफ मैं दूसरी तरफ भैया। डर था कि भीड़ बेकाबू न हो जाए। उनको होटल पहुँचाकर हमें चैन की साँस आई।

गरमियों में मुझे अपने साथ काश्मीर ले जाने की उनकी तीव्र इच्छा थी। इसके लिए उन्होंने बहुत आग्रह किया। परंतु उस समय उनके खर्चे पर काश्मीर का सौंदर्य दर्शन मुझे अनैतिक सा लगा था। बाद में उनसे इतनी आत्मीयता हो गई कि आज तक मेरे मन में उस आनंद-यात्रा और उनके सत्संग के लिए मलाल है।

वे काश्मीर गईं तो मैं मन-ही-मन सोच रही थी कि वहाँ कितनी आनंदित होंगी। मैं उन्हें अपनी कल्पना में झील की हाऊस बोट पर रहते हुए देखती। पर वहाँ से उनका पत्र आया तो कुछ और कहानी कह रह था। बाहर से प्रसन्न, चंचल और मस्त रहनेवाले इस व्यक्तित्व में गहन संवेदना और विवेक का अनोखा संगम है।

काश्मीर की वादी के विलक्षण सौंदर्य की अपेक्षा वहाँ की जनता की विपन्नता ने उन्हें झकझोरकर रख दिया था। अपने पत्र में उन्होंने मुझे लिखा था, "यहाँ जगह-जगह झरझर बहनेवाले झरने मुझे वहाँ के गरीबों की आँखों से बहते आँसू नजर आते हैं। वहाँ खिले हुए फूल देखकर मुझे लगता है कि प्रकृति दरिद्र जनता को देखकर अट्टहास कर रही है। यहाँ भारी-भारी गरम कपड़े पहनकर घूमने में मुझे शर्म आती है। अपने विलास के लिए इन गरीबों के मुँह पर चार सिक्के फेंककर उनसे मजदूरी करवाने में असमर्थ हूँ। कभी-कभी लगता है, यहाँ आनेवाले प्रवासियों की भाँति मेरा हृदय भी पत्थर का होता तो मैं यहाँ शांति से दिन काट सकती थी।"

मैं सोचने लगी, ऐसे कितने लोग हैं संसार में, जिनके सामने सुख के सभी साधन प्रस्तुत होते हैं, पर वे दूसरों के दु:ख से द्रवित रहते हैं। लता दी ने इतने ऐश्वर्य में रहते हुए भी संवेदनशीलता और परदु:खकातरता के भाव को खोया नहीं। मुझे याद है, बड़े गुलामअली खाँ साहब लंबी बीमारी के बाद रेडियो पर गा रहे थे—उनकी कमजोर आवाज को सुनकर वे कितना रोई थीं।

उत्तर भारत का भ्रमण करते हुए वे एक बार फिर दिल्ली आईं। इस बार बहुत कोशिश करके अवकाश मिला और मैं उनके साथ घूमने निकल पड़ी। ऋषिकेश, हरिद्वार का नैसर्गिक सौंदर्य देखकर वे बहुत प्रसन्न हुई थीं। उनके मुखमंडल पर छाए आनंद को देखना अविस्मरणीय अनुभव था।

उनके साथ भ्रमण करते हुए उनके स्वभाव की एक विलक्षणता की ओर बार-बार ध्यान जाता था। अपने सान्निध्य में आए लोगों को क्षणभर में आत्मीय बना लेना उनकी सहज विशेषता थी। हृदयनाथ भैया नलिनी दीदी और लता दी बार-बार मराठी में परस्पर संभाषण करने लगते थे। भाषा का व्यवधान मुझे असहज कर जाता था। मैं अधिकतर मौन की शरण ले लेती थी। दीदी ने मेरे अंतर्मुखी व्यक्तित्व को लक्षित करते हुए ऐसी स्नेहसिक्त डाँट लिख भेजी कि मेरे संकोच की भित्ति कब विलीन हो गई, पता ही न चला—"लाडो, तुम्हारा चुप रहना इतना कमाल का था कि हम तीनों को मराठी में बोलना ही पड़ता था और एक बात कभी न भूलना कि हमारी मातृभाषा है तो मराठी ही न? कभी-न-कभी तो वह आ ही जाती। और जब शांत सागर में तूफानी लहर तुम्हें उछालकर दूर-दूर मझधार में डाल देती थीं, तो क्या पागल लड़की तू आवाज नहीं दे सकती थी? सिर्फ खयाली तूफानों में डूबना ही जानती थी? देखो कानन, ये झूठे अभिमान की बातें अब छोड़ दो। तुम्हारी तरह पढ़ी-लिखी लड़की को शोभा नहीं देतीं। जहाँ सच्चा प्रेम और दृढ़मित्रता होती है न, वहाँ यह किताबों की भाषा नहीं सुहाती। अरी बेजबान तितली, जिसने तम्हारे बारे में जरा भी किंतु मन में नहीं रखा, क्या वह तुम्हारी शंकाएँ दूर नहीं कर सकती थी!" इसी प्रवास में मुझे उनकी साहित्यिक अभिरुचि और विस्तृत अध्ययन का परिचय मिला। मराठी साहित्य का अध्ययन तो था ही, हिंदी, बँगला, उर्दू साहित्य के संदर्भ भी वे जिस तत्परता से देती थी, मुझे आश्चर्य होता था। परंतु बीच-बीच में उनका असंतोष का, अतृप्ति का स्वर भी सुनाई पड़ता था, 'कानन मेरे ऊपर काम का इतना दबाव था कि मैं पढ़ाई कर ही नहीं पाई।'

मथुरा-वृंदावन में स्थापित मंदिरों में श्रीकृष्ण के दर्शन करने की उनकी इच्छा थी। 'बिहारीजी' की सुंदर मूर्ति के दर्शन करके वे इतनी गद्‌गद हुईं कि भाववेश में आँखों से अविरल अश्रुधारा थम ही नहीं रही थी। हरिद्वार से ऋषिकेश के रास्ते में उनके और बालभैया (भाई हृदय नाथ) के साथ मैं अत्यंत अनौपचारिक हो गई थी।

एक प्रसंग मुझे आज भी झेंप में डाल देता है। एक पिक्चर का गीत उन दिनों बहुत लोकप्रिय हुआ था, मुझे बार-बार उस गीत की धुन का मूल स्रोत पंजाबी लोकगीत लगता था। उन्हें विश्वास दिलाने के लिए मैंने गीत का मुखड़ा गाया, अंतरा उठाते ही मेरी दृष्टि उनके चेहरे पर पड़ी और मेरी आवाज गले में ही रह गई। अरे 'लता मंगेशकर' के सामने मैं गाने का दुस्साहस कैसे कर बैठी!

मेरे मन में एक अदम्य लालसा थी कि कभी उनकी रिकॉर्डिंग होते देखूँ। मेरे सौभाग्य से वह सुयोग भी आ गया। बंबई जाकर मुझे दोहरा आनंद लाभ हुआ। उनके घर रहकर उनके अकृत्रिम आतिथ्य का परिचय मिला और उनके मधुर स्वर का अपने समक्ष अपने कानों से सीधा साक्षात्कार हुआ। मैं इस अनुभव में आकंठ मग्न थी।

रिकॉर्डिंग के समय उनका गाना सुनते ही लगता था, गीत के शब्दों की आत्मा ने आकार ले लिया। रिकॉर्डिंग यांत्रिक कार्य है, पर उनके गाते ही मानो वे उपकरण चेतन हो जाते और फिर रसिकों के हृदय को रसमग्न करते।

इस स्वर का अनुपम जादू एक बार 'ताजमहल' में देखा था। वह मार्च का महीना था। हम सब (बालभैया, बृजभैया, नलिनी) लता दी के साथ आगरा गए थे। संगमरमरी ताजमहल चाँदनी रात में स्नात था। वातावरण शांत-स्तब्ध, एक पत्ता भी हिल नहीं रहा था। भीतर प्रवेश किया तो सन्नाटा और प्रखर हो उठा, इस अपार्थिव वेला में अनायास एक स्वर फूट पड़ा—लता दी ने 'राग मारवा' में आलाप लिया, धीरे-धीरे लगा जैसे युगों से सोए दो प्रेमियों की आत्माएँ संवाद करने लगीं। ऊँचे गुंबद उस स्वर का उत्तर देने लगे। रोमांच से शरीर में कँपकँपी सी होने लगी। कुछ देर बाद उन्होंने 'कहीं दीप जले कहीं दिल' की कड़ियाँ गाईं। हम सब इस वेला की तंद्रा में खो गए थे। ताज की देखभाल करनेवाले सेवक भी इस समय मूक श्रोता बन गए थे। मृत्यु के विश्रांति स्थल को सजीव करनेवाला स्वर, कैसा विरोधाभास था। सब मंत्रमुग्ध थे। गीत समाप्त हुआ और एक सेवक आगे आकर बड़े विनम्र भाव से बोला, 'यहाँ गाने की सख्त मनाही है', पर उसके निषेध में भी प्रशंसा का भाव प्रकट हो रहा था।

'प्रभुकुंज पेडर रोड' के घर में बिताए दिनों में मैंने उनके पारिवारिक जीवन की एक अंतरंग झाँकी देखी थी। आई, तीन बहनें और एक भाई का जीवन उनको धुरी बनाकर घूम रहा था। उनके सुख-दु:ख, आशा-निराशा सब इनके अपने थे। किसी एक भी प्राणी के मुख पर चिंता या उदासी का भाव आया नहीं कि आकाश-पाताल एक करके वह समाधान करतीं।

पिता के न रहने पर उन्होंने उस आयु में उनका उत्तरदायित्व ओढ़ लिया था, जिस समय लड़कियाँ गुड़ियों से खेलती हैं। किशोरावस्था में ही भाई-बहनों और माँ के भरण-पोषण का भार उन पर आ गया था। सबसे छोटे भाई हृदयनाथ के पैर का फोड़ा दीदी लता के हृदय का नासूर बन गया था। गोद में उठा-उठाकर इलाज के लिए साधनहीन दीदी कहाँ-कहाँ नहीं भटकी थीं। वही मातृत्व आजीवन उनके व्यक्तित्व का अभिन्न अंग बन गया। इसका परिचय परिवार ही नहीं, उनके सान्निध्य में आनेवालों को निरंतर मिलता रहता है।

एक बार कल्याणजी आनंदजी के साथ उनकी और मुकेश की रिकॉर्डिंग थी। उस दिन सुबह वे केवल कॉफी लेती हैं। गाते-गाते भूख लगी तो उन्होंने सैंडविच मँगाए, भगवान् जाने उनमें क्या था कि केवल इन्हीं को अन्नविष बाधा (फूड पॉयजनिंग) हुई। मैंने भी उनके बराबर ही खाया था, पर मैं हल्की अजीर्णता के बाद ठीक हो गई। पर वे तो भयंकर रूप से बीमार पड़ीं। तीन दिन तक बेहोश पड़ी रहीं। होश आया तो सारे परिवार के प्राण लौटे। उनके सुस्थिर होने पर मैं मिलने गई। मुझे देखते ही पहला प्रश्न किया, तुम्हारी तबीयत कैसी है?

अपनी बीमारी, अपने दु:ख को वे प्राय: मजाक में उड़ा जाती हैं। गानेवालों के लिए जुकाम-खाँसी बहुत कष्टदायी हो जाती है। परंतु रोगों से अपनी मित्रता का नाता उन्होंने बड़े मजे से जोड़ा था—"यहाँ पहुँचते ही, काम और बीमारी दोनों ही शुरू हुए। वैसे तो जुकाम, बुखार, सरदर्द इन सबको मुझसे खास मुहब्बत है, दस-पंद्रह दिन न मिलो तो मौका पाते ही ऐसे प्यार से मिलते हैं कि मजा आ जाता है।"

दूसरों की पसंद-नापसंद का ऐसा सूक्ष्म निरीक्षण बहुत कम लोगों की दृष्टि में होता है। उन्हें सुंदर वस्तुओं के संग्रह का बहुत शौक था। ऐसी ही एक खरीददारी के समय कॉटेज एंपोरियम में मैंने किसी वस्तु को प्रशंसा की दृष्टि से देखा और तारीफ की। दूसरे दिन वह वस्तु मेरे सामने हाजिर और लेने का आग्रह। मेरे आनाकानी करने पर कृत्रिम क्रोध से बोली, 'नहीं लोगी तो ठीक है, मैं अभी रास्ते पर फेंक रही हूँ।'

अब तो उनके सामने किसी भी चीज के प्रति रुचि दिखाने में मुझे डर लगता था। कभी-कभी मन में आता कि कहूँ, 'आप मुझे बहुत अच्छी लगती हैं।' मुझे विश्वास है कि मेरे ऐसा कहते ही वह स्नेह की वर्षा करते हुए हँस देंगी और कहेंगी, 'मैं तुम्हें अच्छी लगती हूँ तो चलो, मुझे अपने साथ ले चलो।'

लता दी ने मुझे जीवन में सही दिशा दिखाने में मार्ग-निर्देशक की भूमिका निभाई है। मानवीय संबंधों की जटिलता को समझने की सोच दी। विवाह के प्रति मेरे मन में आशंकाएँ थीं। लगता था, विवाह बंधन है, दासता है, अंधकार है। उनका परामर्श किसी मनोवैज्ञानिक से कम न था—"तुम्हारे दो प्रश्न मेरे लिए भी थोड़े मुश्किल हैं, चूँकि मैंने भी तो शादी नहीं की!...एक काम करनेवाली लड़की को भी विवाह करना चाहिए। इसलिए कि पुरुष मन चाहे जैसे रह सकता है, मगर एक औरत के लिए यह बात नामुमकिन है।...विवाह भविष्य की तरह अंधकारमय होता है, यह तुम्हारे दिमाग में कैसे आया?...अगर वर्तमान प्रकाशमय है तो उसी प्रकाश में भविष्य को देखना सीखो। भविष्य को प्रकाशमय करना इनसान के हाथ में होता है।...अगर तुम्हें कोई पसंद आए तो, जरूर उसके जीवन की सहचारिणी बनो। उसे सुख दो।...प्रेम करना सीखो, प्रेम की आशा मत रखो। वह खुद ही तेरे पास आएगा।"

एक ओर उनके व्यक्तित्व में स्नेहासक्ति की पराकाष्ठा है तो दूसरी ओर संसार के प्रति एक विलक्षण नि:स्पृहता, निर्लिप्तता और अनासक्ति। यह विरक्ति उनकी छोटी-छोटी बातों में झलकती है, जैसे विशाल प्रदर्शन के प्रति भय, आडंबर, शब्दजाल, अभिनंदन समारोहों के प्रति उदासीनता, चापलूसी करनेवालों से दूरी बनाए रखना, भीड़-उत्सवों के प्रति अरुचि। सफलता के शिखर पर पहुँचकर मनुष्य में एक उपरति की दशा का उदय होता है। दीदी ने आत्मविश्लेषण करते हुए लिखा था, "सच कानन, अब मेरा मन, काम, घर, पिक्चर, बाग, मित्र कहीं भी नहीं लगता, सब बकवास लगता है। अजीब सी उदासी छाने लगी है। न दु:ख है, न खुशी। मैं थक गई कानन। अब मुझे आराम की जरूरत है, सिर्फ शरीर को ही नहीं, दिमाग को भी। वरना, मैं हर बात से, अपने आपसे भी नफरत करने लगूँगी।"

जो लोग उनके सामने होकर स्तुति करते हैं और पीठ होते ही उनके लिए कथ्य-अकथ्य कहते हैं, ऐसे लोगों से उन्हें संताप होता है, घृणा होती है, "आजकल रिकॉर्डिंग कम और बाकी मुसीबतें ज्यादा हो रही हैं। इसलिए सभी समझते हैं, मैं बदलती जा रही हूँ। मालूम नहीं, सचमुच मुझमें किस तरह का बदलाव हो रहा है। मैं सिर्फ एक बात जानती हूँ कि मैं परेशान रहने लगी हूँ।...अजीब सी थकान महसूस करने लगी हूँ, जो मुझे किसी भी खुशी में शरीक होने नहीं देती। निराशा की काली घटा मेरे जीवन पर छाई रहती है, जो न तो बरसती है और न ही छँटती है।"

वे स्वयं छलकपट विहीन थीं। शुद्ध सत्य की पक्षधर थीं। मन की भावनाओं को आवृत्त करके रखना उनकी प्रकृति में नहीं। तभी तो बंबई जैसे महानगर में इतना जीवन व्यतीत करने पर भी वहाँ की कृत्रिम सभ्यता का रंग उनके व्यक्तित्व पर चढ़ नहीं पाया। इस व्यायाम के कर्दम से जीवन-रस ग्रहण करते हुए भी अपने व्यक्तित्व को कमलपत्रवत् अलिप्त और स्वच्छ रख सकीं। उनके गायन में इसी पवित्रता ने प्रभाव उत्पन्न किया है। आम आदमी के कानों को सुर की पहचान देनेवाली 'लता मंगेशकर' ही थीं। कितनी नई गायिकाएँ आईं, पर उस स्थापित मानदंड के कारण आज तक लता दी का स्थान अक्षुण्ण रहा।

यह फिल्मी संसार अविश्वास का संसार है। यहाँ जीवन-मूल्य ही दूसरे हैं। सामाजिकता, आत्मीयता, गार्हस्थ्य जैसी सुंदर भावनाओं का कोई स्थान नहीं। यहाँ एक बार रास्ते अलग हुए नहीं कि कोई किसी का नहीं रह जाता। यह इतना संवेदनहीन नगर है कि नीचे गिरे हुए व्यक्ति के शरीर पर पैर रखकर आगे बढ़ने को प्रगति, उन्नति कहा जाता है। मन में घृणा, ईर्ष्या, द्वेष का विष उबलता है और चेहरे पर कृत्रिम हास्य का मुखौटा चढ़ा लिया जाता है।

ऐसी दुनिया में उनके जैसा पारदर्शी व्यक्तित्व मिलना असंभव है।

सा.अ.

४८, स्वस्तिक कुंज, सेक्टर-१३, रोहिणी,
दिल्ली-११००८५
दूरभाष : ९८१०३५३५६०

तारणहार

• सुनीता शानू

एक बड़े से हॉल में भारी संख्या में लोग उपस्थित थे, सब एक-एक कर आते और सावित्री देवी की तसवीर पर फूलमाला अर्पित कर सभा में बैठ जाते। कस्तूरी की भीनी महक से पूरा हॉल महक रहा था। पंडितजी भी गरुड़ पुराण के अंतिम अध्याय का वाचन कर रहे थे। कुछ देर बाद सबने शब्दांजलि अर्पित की।

सभी एक-दूसरे को देखने, बातें करने में व्यस्त थे, बस सोनाक्षी अपलक तसवीर को देखे जा रही थी। अचानक एक चिरपरिचित स्वर सुनाई दिया···सोनू बेटी!···सोनाक्षी ने देखा, यह उसके पिता थे। मुरझाया चेहरा, बुझी-बुझी आँखें, उसे अपनी आँखों पर विश्वास ही नहीं हुआ। वह जोर से चिल्लाई, बाबा! यह आपको क्या हो गया है? पिता से लिपटते हुए सोनाक्षी कराह उठी, "अरे आपको तो तेज ज्वर है, आपने मुझे क्यों नहीं बुलाया बाबा, आप कब से बीमार थे?" अब तक रुके आँसू बह निकले थे।

देवकिशन पिता पुत्री की बातचीत सुन रहा था, उसने तुरंत राधेश्याम को सोनाक्षी से अलग करते हुए अपने पास बिठाया और कहा, "बस अभी पगड़ी की रस्म होनेवाली है समधीजी, फिर घर चलकर पुत्री से इतमीनान से बात कीजिएगा।"

पंडितजी ने मंत्रोचार शुरू किए, पगड़ी रस्म शुरू की गई। सबसे पहले राधेश्याम ने कपड़े भेंट करते हुए पगड़ी के रूप में इक्यावन सौ रुपए थाली में रख दिए। यह देखते ही देवकिशन तुरंत उठ खड़ा हुआ और पैसे लौटाता हुआ बोला, "अरे रे समधीजी! इतने पैसे मत दीजिए, मैं आप पर भार नहीं डाल सकता, लोग क्या कहेंगे!···आप बस दस रुपए रखिए।" राधेश्याम ने आश्चर्य से उसकी तरफ देखा, और चुपचाप दस रुपए निकालकर थाली में रख दिए।

सोनाक्षी को आए अभी दो ही महीने हुए थे, मगर जानने को उसने सबकी हकीकत का अंदाजा लगा लिया था। वह जान गई थी कि उसके पति गौतम को तो अधिक बोलने की आदत नहीं थी, लेकिन उसकी सास सावित्री देवी की इस घर में बिल्कुल नहीं चलती थी। हाँ, राज था तो बस बेटियों का।

बड़ी से लेकर छोटी तक सबके अलग ही रंग-ढंग थे, दो बेटियाँ ब्याही गई थीं और दो अभी पढ़ रही थीं।

सोनाक्षी के लिए तो ब्याही-अनब्याही सब बराबर ही थीं। दोनों ससुराल छोड़ पीहर जो बैठी थीं। पड़ोसिन चाची जब कहतीं, "अरे क्या बात है लड़कियो, तुम्हें तो लगता है, बहू के हाथ के खाने की आदत ही

सुपरिचित रचनाकार। काव्य-संग्रह 'मन पखेरु उड़ चला फिर' तथा पत्र-पत्रिकाओं में व्यंग्य, कविता, कहानियाँ आदि प्रकाशित। अनेक कवि-सम्मेलनों तथा साधना टी.वी. चैनल पर काव्य-पाठ एवं संचालन।

पड़ गई है, घर कब जाओगी?" तब तमककर सुजाता कहती, "कौन सा किसी के बाप का खाते हैं! अभी तो सब हमारे बाप का ही है, जब भाई के घर आएँगे तो देखेंगे" मोनिका तुरंत बात सँभालती, "काकी! इसकी बात का बुरा मत मानना, अभी नई बहू को घर के तौर-तरीकों से अवगत करवा दें तो चले जाएँगे, पीहर में भला किसका गुजारा होता है।" यह बात बस कहने भर की ही होती थी। दो बार तो जँवाई सा को अकेले ही लौट जाना पड़ा था। सोनाक्षी सब सुनती और लंबा सा घूँघट खींचकर चुपचाप काम में लग जाती।

कई बार जब छोटी-छोटी बात पर ही सास-ससुर के झगड़े हो जाते, आस-पड़ोस के लोग दबी आवाज में सब बता जाते, "अरी बहू! ये तो इनका हर रोज का ही काम था, अब तुम आ गई हो तो कम-से-कम बेचारी सावित्री पिटने से बच गई।" सोनाक्षी आश्चर्य से सब सुनती।···कोई कहता, देवकिशन बड़ा काँइयाँ है, पैसे के लिए तो यह खुद को भी बेच देगा, अरे इसने जमीन के लिए अपने सगे माँ-बाप को नहीं छोड़ा है।" सुनकर सोनाक्षी बुरी तरह डर जाती थी। लेकिन देवकिशन का उसके प्रति अतिरिक्त स्नेह इस बात पर भरोसा भी नहीं कर पाता था। उसे लगता, लोग ससुरजी की प्रोग्रेस से चिढ़ते हैं या सास ने ही ससुरजी को बदनाम किया हुआ है।

ससुर और बहू की खूब बातें होती रहती थीं, सोनाक्षी पापाजी-पापाजी कहते नहीं थकती थी, और देवकिशन बहू की तारीफ करते नहीं थकता था। सावित्री को ही नहीं, लड़कियों को भी देवकिशन का यह देवता रूप हजम नहीं हो रहा था। कोई कहता, नई बहूँ काला जादू जानती है, कोई कहता, सोनाक्षी का भाग्य प्रबल है। असल बात तो गौतम भी नहीं जानता था।

सोनाक्षी एम.ए. पास बेहद सुशील लड़की थी, माँ बचपन में ही चल बसी थी, पिता स्कूल में अध्यापक थे, अध्यापन के साथ उन्होंने सोनाक्षी की माँ की जिम्मेदारी भी ओढ़ ली थी, घर में दो ही प्राणी।

देवकिशन के साढ़ू ने कई झूठ-साँच के साथ गौतम का रिश्ता राधेश्याम की इकलौती बेटी के साथ तय करवा दिया था। किसी को कानो-कान खबर भी नहीं हुई और रिश्ता पक्का कर सगाई कर दी गई।

गौतम भी छह फुट का बाँका जवान, अच्छी खासी सरकारी नौकरी, कोई एक नजर देख ले तो नजर हटे ही नहीं। सोनाक्षी के पिता की तो जैसे किस्मत ही खुल गई थी।

विवाह का समय भी आ गया। सारी तैयारियाँ हो चुकी थीं, अचानक एक दिन देवकिशन ने दहेज की लंबी-चौड़ी डिमांड कर दी। राधेश्याम ने घर-बार सब गिरवी रख दिया, आखिर है तो सब सोनाक्षी का ही, एक-न-एक दिन तो उसे मिल ही जाना है। बस समाज में इज्जत बनी रहे, वरना सगाई टूट गई तो बहुत बदनामी हो जाएगी।

देवकिशन सबसे कहता फिरता, देखो भई, मैं तो एक रुपया भी नहीं लेना चाहता। हीरे सा मेरा बेटा है और अब सोने सी बहू आ जाएगी। मैं तो इतने में ही खुश हूँ, अब बहू के पिता ही मानते नहीं हैं। कहते हैं, मेरे बाद सबकुछ तो सोनाक्षी का ही है।

सोनाक्षी सुनती तो स्नेह से पिता के गले लग जाती। राधेश्याम भी चुपचाप बेटी को गले लगा लेते। अब कहे भी तो क्या कहे। एक-न-एक दिन तो बेटी को विदा करना ही था। बस डर था तो एक ही कि सोनाक्षी यह जान न ले कि अनजाने में ही दहेज के लोभियों के घर चली गई है। डर तो राघेश्याम को यह भी था कि बिन माँ की जिस बच्ची को माँ-बाप दोनों का प्यार दिया, कहीं दहेज की भेंट न चढ़ा दी जाए। आखिर सोनाक्षी विदा हो गई।

बेटी को विदा करके राधेश्याम घड़ीभर को बैठा ही था कि देवकिशन का फोन आ गया, "हाहाहा! समधीजी क्या बात है, आप तो बेटी विदा करके भूल ही गए!" "क्क क्या! क्या कह रहे हैं आप?" राधेश्याम ने अचकचाकर पूछा।

"अरे भई, कल बेटी फेरमोढ़े के लिए आएगी, मैं सोच रहा था, आप कल ही जमीन के कागजात उसे सौंपकर गंगास्नान कर आइए।" राधेश्याम ने कोई जवाब नहीं दिया।

दूसरे दिन सोनाक्षी गौतम के साथ आई, वह इतनी खुश थी कि उसे पिता की परेशानी का जरा भी अंदाजा नहीं लग पाया। वह भी तो जब से आई थी, ससुराल की तारीफ करती नहीं थक रही थी। सचमुच गौतम के प्रेम ने उसे सबकुछ भुला दिया था। उस वक्त तो जैसे-तैसे राधेश्याम ने बेटी-दामाद को विदा कर दिया था।

इधर बेटी की चिंता में राधेश्याम की तबीयत दिन-पर-दिन बिगड़ती ही जा रही थी, लेकिन देवकिशन का आना-जाना बंद नहीं हुआ था। वह किसी जोंक की तरह राधेश्याम के चिपक गया था।

आश्चर्य बस इस बात का था कि देवकिशन की इस करतूत का पता घर में किसी को नहीं था, सिवाय जगजीवन राम के। एक वही देवकिशन की नीचता को जानते थे। जमीन के एक टुकड़े के लिए जो बेटा वृद्ध बाप को धोखा दे सकता है, उससे सुधर जाने की उम्मीद कौन कर सकता था, यह अंदरूनी चोट थी, जिसे वह कई सालों से ढो रहे थे।

"भाभी! सुनो, दादाजी को भी रोटी दे आओ···।" बड़ी ननद ने सोनाक्षी को आवाज लगाई। सोनाक्षी बिजली की तेजी से उठी और भोजन का थाल लेकर बाहर कोठरी की तरफ चली गई।

उम्र तो अधिक नहीं थी, फिर भी पत्नी की मृत्यु और बेटे के कुकृत्यों ने जगजीवन राम को तोड़कर रख दिया था। वह हमेशा दर्द भरी आवाज में बड़बड़ाते रहते थे···"हे तारणहार, अब देर न करो, इस दुष्ट को सबक सिखाओ।" उनकी आवाज कोठरी में गूँजती रहती।

घर के दालान में ही एक छोटा सा कमरा था जिसमें एक पुरानी चारपाई पड़ी थी और तिपाई पर पानी की मटकी रखी थी। रोशनी के नाम पर जीरो वॉट का छोटा सा बल्ब लगा था, वैसे भी दोनों आँखों में मोतिया होने से उन्हें आँखों की जरूरत ही महसूस नहीं होती थी। हाँ, नई बहू के आने से उनके चेहरे पर बच्चों की सी खुशी अवश्य देखी जा सकती थी। जैसे ही पायल की आवाज सुनते, चौकन्ने होकर दरवाजे की ओर देखने लगते। सोनाक्षी दादाजी की बगल में बैठकर उन्हें इतमीनान से खाना खिलाती, फिर उनको पानी पिला, मुँह साफ करती। इस दौरान बच्चे की तरह फूट-फूटकर रोने लगते तो सोनाक्षी आँचल से ही आँसू पोंछ देती। एक छोटी सी खुशी भी जिंदगी जीने का सबब बन जाया करती है, लेकिन कहते हैं न, खुशियाँ कुछ समय की ही मेहमान होती हैं।

ऐसे ही एक दिन किसी के चीखने की आवाज ने उन्हें झकझोर दिया। सावित्री सीढ़ियों से गिरकर शांत हो गई थी। उसके सिर से खून बह रहा था। कोई समझ नहीं पाया कि इस तरह सीढ़ियों से वह कैसे गिर गई। जबकि छत पर तो उनका जाना होता ही नहीं था। सावित्री की अचानक मौत ने सबको हिला दिया था, सिवाय देवकिशन के।

पगड़ी की रस्म के बाद घर की रसोई का कार्य तेजी से हो रहा था, घर की बेटियाँ सब सँभाले हुए थीं। अँधेरा होने को था, लगभग सभी मेहमान जा चुके थे।

कोठरी के बाहर अँधेरे में दो आकृतियाँ नजर आ रही थीं, देवकिशन ने धीमे स्वर में कहा, "देखिए समधीजी! मैंने आपको पहले भी समझाया था, वह घर हमारे नाम कर दीजिए, कहीं ऐसा न हो कि आप भी अचानक परलोक सिधार जाएँ और हम लटके रह जाएँ।"

दूसरा स्वर राधेश्याम का था, वह लगभग रोती हुई आवाज में बोले, "देवकिशनजी, सबकुछ तो आपके नाम कर दिया है, बस यह घर ही बचा है, यह मैं अपनी बेटी को सौंपकर जाऊँगा।"

देवकिशन की धीमी पर कर्कश आवाज सुनाई दी, "तो कब करोगे? मरने के बाद!" राधेश्याम के पाँव लड़खड़ाने लगे···अचानक दो हाथों ने राधेश्याम को थाम लिया, वह कोई और नहीं, गौतम और सोनाक्षी ही थे, जो दादाजी को भोजन कराने के मकसद से आए थे।

देवकिशन के कानों में पिता की आवाज पड़ी···"हे तारणहार अब देर न करो, इस दुष्ट को सबक सिखाओ!"

देवकिशन ने घबराकर हाथ जोड़ लिये, किंतु अब तो बहुत देर हो चुकी थी।

२०६/३ गली न. ५
हिंदी अकादमी के पास
पद्म नगर, किशनगंज, दिल्ली-११०००७
दूरभाष : ८८६०५९५९३७

कवि बनारसीदास के साहित्य में सामाजिक चेतना

• निशांत जैन

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने 'हिंदी साहित्य का इतिहास' की भूमिका में कहा है कि जबकि प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चितवृत्ति का संचित प्रतिबिंब होता है, तब यह निश्चित है कि जनता की चितवृत्ति के परिवर्तन के साथ-साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता चला जाता है। साहित्य का कार्य इन्हीं चितवृत्तियों का संचयन करना तथा परिवर्तन व विकास को समझना व प्रत्यक्ष करना होता है। साहित्य जितना समाज का आईना होता है, उतना ही वह समाज के आगे चलनेवाली मशाल के समान भी होता है। इसलिए किसी रचनाकार और उसके समयकाल को जानने-समझने का सबसे सशक्त माध्यम उसका साहित्य ही हो सकता है।

कवि बनारसीदास एक बृहत् रचना-संसार के सर्जनकर्ता हैं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने इनकी रचनाओं का परिचय देते हुए कहा है, "इन्होंने जैन धर्म-संबंधी अनेक पुस्तकों के सारांश हिंदी में कहे हैं। अब तक इनकी बनाई इतनी पुस्तकों का पता चला है—बनारसी विलास (फुटकल कविताओं का संग्रह), नाटक समयसार (कुंदकुंदाचार्यकृत ग्रंथ का सार), नाममाला (कोश), अर्धकथानक, बनारसी पद्धति, मोक्षपदी, ध्रुववंदना, कल्याण मंदिर, भाषा, वेद निर्णय पंचाशिका, मारगन विधा। इनकी रचना शैली पुष्ट है और इनकी कविता दादूपंथी सुंदरदासजी की कविता से मिलती-जुलती है।

सुंदरदासजी ज्ञानमार्गी परंपरा के एक महत्त्वपूर्ण संत थे, उनकी रचनाओं से बनारसीदासजी की शैली की तुलना कवि के महत्त्व को स्थापित करती है। बनारसीदासजी ने अपनी रचनाओं के विषय में स्वयं अपने आत्मकथा 'अर्धकथानक' में बताया है—

नाम सुक्ति मुक्तावली किए कवित्त सौ एक॥
अध्यात्म बत्तीसिका पैडी फागु धमला।
कीनी सिंधु चतुर्दशी, फूटक कवित रसाल॥
शिव पच्चीसी भावना सहस अठोतर नाम।
करमछतीसीझूलना अंतर रावन राम॥
बरनी आँखे दोइ विधि करी बचनिक दोई।
अष्टक गीत बहुत किए कहौ कहा लौ सोइ॥
सौलह सौ बानवै लौ कियौ नियत रसपान।
पै कबीसुरी सब मई स्यादबाद परवान॥

यूजीसी की नेट-जेआरएफ परीक्षा उत्तीर्ण। कॉलेज के दिनों में डिबेट, काव्यपाठ, निबंध प्रतियोगिताओं में उत्कृष्ट प्रदर्शन। दिल्ली यूनिवर्सिटी से एम.फिल की उपाधि। सिविल सेवा में चयनित होने से पहले लोकसभा सचिवालय के राजभाषा प्रभाग में दो वर्ष की सेवा दी। एल.बी.एस.एन.ए.ए. में आई.ए.एस. की दो वर्ष की ट्रेनिंग के उपरांत जे.एन.यू. से पब्लिक मैनेजमेंट में मास्टर्स डिग्री प्राप्त।

इस प्रकार संवत् १६६२ तक इन्होंने ये सब रचनाएँ कीं, जिनका विवरण कवि ने काव्य रूप में दिया है। इसके अतिरिक्त उनकी अन्य महत्त्वपूर्ण साहित्यिक, आध्यात्मिक रचनाएँ भी प्राप्त होती हैं। यह भी एक महत्त्वपूर्ण तथ्य है कि अपनी आत्मकथा लिखने के पश्चात् दो-तीन वर्षों के अंतराल में ही उनका स्वर्गवास हो गया था। रचनाओं का परिचय देने का प्रमुख कारण उसमें व्याख्यायित, समाज को उसके संपूर्णतम स्वरूप में देखने-समझने से है। बनारसीदास एक व्यापारी होने के साथ एक भावुक कवि भी हैं। उनकी रचनाओं में व्याप्त उनका समाज उनके जीवन के संघर्षों के साथ ही उत्पन्न होता है तथा तद्युगीन राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक स्थितियाँ भी प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष स्पष्ट होती रहती हैं।

सामाजिक चेतना से अभिप्राय यह है कि कोई भी व्यक्ति अथवा रचनाकार अपने समाज व उसमें व्याप्त संबंधों को किस प्रकार देखता और मूल्यांकित करता है। आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, राष्ट्रीय तथा अन्य परंपरागत मूल्यों के परस्पर संवेद से जो नया बोध उत्पन्न होता है, उसका विश्लेषणात्मक चिंतन ही सामाजिक चेतना है।

कवि बनारसीदास जैन ने अपनी अप्रतिम प्रतिभा को विभिन्न

रचनाओं में समेटने का प्रयास किया है। उन जैसे सहृदय कवि द्वारा अपने रचनाओं में अपने समाज का प्रत्यक्ष या परोक्ष जो रूप उपस्थित किया गया है, वह बहुआयामी है। वह न केवल सामाजिक दृष्टि से बल्कि राजनीतिक, ऐतिहासिक दृष्टि से भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। कविवर बनारसीदास ने अपने जीवनकाल में सम्राट् अकबर, जहाँगीर और शाहजहाँ के शासन को प्रत्यक्ष देखा था। किंवदंतियाँ यहाँ तक हैं कि उन्होंने शाहजहाँ के साथ शतरंज भी खेला था। पूर्वजों द्वारा बाबर और हुमायूँ की कहानियाँ भी सुनी थीं। एक औरंगजेब को छोड़ दें तो लगभग सभी प्रमुख मुगल शासकों के शासन व्यवस्था का प्रत्यक्षीकरण बनारसीदासजी ने किया था। अगर इसे इस प्रकार कहें कि बनारसीदास ने उस समय की सामाजिक व्यवस्था का बखान किया, जब मुगल शासन अपने चरम पर था तो अतिशयोक्ति नहीं होगी।

धार्मिक रूप से भारतीय समाज विभिन्न प्रकार के मिथ्या आडंबरों में बँटा हुआ था। तरह-तरह के झूठ, धोखे, छलावे धर्म की चादर में लपेटकर लोगों को परोसे जाते थे। धर्म उनके मानस से वैज्ञानिकता को समाप्त कर रहा था। स्वयं बनारसीदास के पिता खरगसेन सपत्नीक सती की जात देने के लिए दो बार तीर्थ यात्रा पर गए। इनमें से एक बार तो उनको डाकुओं ने लूट भी लिया। लेकिन तब भी वे लोग दूसरी बार फिर सती की जात देने गए। स्वयं कवि इस बात की निंदा करते हुए कहता है कि तब भी उनकी आँख नहीं खुली।

इस प्रकार बनारसीदास जैनजी की रचनाएँ स्पष्ट रूप से मुगलकालीन सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक शासन व्यवस्था का परिचय प्रदान करती हैं। बनारसी की कहानी मध्यकालीन जौनपुर, बनारस, इलाहाबाद और आगरे की गलियों में घूमती हुई, हमें जैन और हिंदू वैश्य समाज के घरों, कोठियों और दुकानों में ले जाती हैं, जहाँ हमारी बनारस के संगे-संबंधियों से मुलाकात होती है—खरगसेन, बनारसी के पिता, जो कभी अपने पुत्र पर गरजते हैं, तो कभी उसे गले लगाते हैं, नरोत्तमदास, बनारसी के सबसे प्रिय मित्र जिनकी मृत्यु की खबर सुनकर बनारसी बेहोश हो जाते हैं, बनारसी की वृद्धा दादी, जो अपने पोते की पहली कमाई पर मिठाई बाँटती हैं, पर जिसके अंधविश्वास की बनारसी कड़ी निंदा करते हैं और बनारसी की पहली पत्नी, जो बीमारी में बनारसी की सेवा करती है और बाद में जब बनारसी सब खो देते हैं, अपने बचाए हुए रुपए उनके हाथ में रख देती है। ये सभी पात्र व घटनाएँ किसी-न-किसी सामाजिक मूल्य को छिपाए हुए हैं। अर्धकथानक के आधार पर देखा जाए तो बातचीत तथा सामाजिक स्थानों में लोकमर्यादा का बहुत ध्यान दिया जाता था।

कहौ अतीत दोष गुणवाद। बरत मानताई मरजाद॥

बनारसीदास का समय ऐसा था, जिसमें धार्मिक तथा वैचारिक स्वतंत्रता की पूरी आजादी थी। बनारसीदास के साहित्य से ही पता चलता है कि उनके पूर्वज पहले राजपूत थे, जिन्होंने बाद में किसी जैन गुरु से प्रभावित होकर जैन धर्म को स्वीकार कर लिया था।

गांउ बहोली में बसै राजबंस राजपूत तै गुरुमुख जैती भए त्यागि करम अवभूत।

बनारसीदास को अपने साहित्य में इस बात का भी जिक्र किया है कि उस समय मुगल शासक, सामंत अपने कर्मचारियों को वेतन के बदले गांव, परगने अथवा भूमि दिया करते थे। साथ ही उनके सेवानिवृत्ति अथवा मृत्यु के बाद या तो उस सुविधा में कमी कर दी जाती थी अथवा, उसे छीन लिया जाता था। स्वयं बनारसीदास के दादा मूलदास की मृत्यु के पश्चात् उनके मालिक मुगल ने उनसे उनकी सारी संपत्ति छीन ली थी—

आए मुगल उतावलौ सुनि भूला को काल।
मुहर छाप घर खालसै कीनौ लीनौ माल।

बनारसीदासजी के साहित्य से पता चलता है कि जौनपुर उस समय का एक प्रमुख व्यापारिक केंद्र रहा था। वहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार के व्यापार तथा विचार के लोग एक साथ रहते थे। भारतीय समाज विभिन्न कोटियों में बँटा हुआ है। जौनपुर शहर का हाल बताते हुए बनारसीदासजी भारतीय समाज की जातिगत कोटियों का वर्णन करते हैं। वे बताते हैं—

चारों बरन बसै तिस बीच। बसहि छतीस पौति कल नीज।
बाभन, छत्री, बसै आपार। सूद्र केद छत्तीस प्रकार।
सीसगर दरजी तबोली रंगबाल ग्वाल
बढ़ई संगतरास तेली धोबी, धुनियाँ।
कंदोई कहार काछी कलाल कुलाल माली
कुंदीगर कागदी किसान पटबुनिया॥
चितेरा बिंधेरा बारी लखेरा ठेठेरा राज
पटुवा छप्परबंध नाइ भारभुनियाँ।
सुनार लुहार सिकलीगर हवाईगर
धीवर चमार एइ छत्तीस उपनियाँ।

यह भारतीय समाज की विभिन्न जातियों में बँटी उपजातियाँ हैं, जो ३६ प्रकार की हैं। दरअसल, यह भारतीय समाज का बँटवारा न होकर भारतीय समाज के व्यवसाय व व्यापार का बँटवारा हुआ करता था। प्रत्येक जाति, उपजाति के नाम के साथ उनके व्यवसाय की पहचान भी जुड़ी हुई है।

धार्मिक रूप से भारतीय समाज विभिन्न प्रकार के मिथ्या आडंबरों में बँटा हुआ था। तरह-तरह के झूठ, धोखे, छलावे धर्म की चादर में लपेटकर लोगों को परोसे जाते थे। धर्म उनके मानस से वैज्ञानिकता को समाप्त कर रहा था। स्वयं बनारसीदास के पिता खरगसेन सपत्नीक सती की जात देने के लिए दो बार तीर्थ यात्रा पर गए। इनमें से एक बार तो उनको डाकुओं ने लूट भी लिया। लेकिन तब भी वे लोग दूसरी बार फिर सती की जात देने गए। स्वयं कवि इस बात की निंदा करते हुए कहता है कि तब भी उनकी आँख नहीं खुली।

गए हुए माँगन को पूत। यहु फल दीनौ सती अऊत॥

तऊ न समझे मिथ्या बात। फिरि मानी उन ही की जात।
प्रगट रूप देखें सब फोक। तऊन समुझै मूरख लोक॥

उसी प्रकार बनारसीदास के नाम से जुड़ा एक धार्मिक प्रसंग आता है, जिसका वर्णन कवि करते हैं—

तब सु पुजारा साथै पौन। मिथ्या ध्यान कपट की मौन
घड़ी एक जब भई बितीत। सीस घुमाई कहै सुनु मीत॥
सुविनतर कुछ आयौ मोहि। सो सब बात कहो मैं तोहि॥
प्रभु पारस जिनवर कौ जच्छ। सौ मोषे आयौ पर तच्छ।

जनता इस प्रकार के विभिन्न प्रकार के धार्मिक आडंबरों में बँधी हुई थी। कई प्रकार के तंत्र-मंत्र में समाज जकड़ा हुआ था। धार्मिक संस्थानों और पंडा-पुरोहित, मौलवियों ने समाज को अंधविश्वासों में धकेला हुआ था। लोग चमत्कारों में विश्वास करने लगे थे। जादू-टोना, तंत्र-मंत्र, चमत्कार इसमें व्यापक जनता जकड़ी हुई थी। स्वयं कवि किसी साधु के कहने से धर्मलोभ में किसी मंत्र का एक साल तक जप किया। लेकिन उसका परिणाम बहुत ही हास्यास्पद रहा।

इसी प्रकार किसी जोगी ने कवि को शिव का एक शंख दिया। बनारसी ने उस शंख की पूजा बड़े मन से की, जिस दिन कुछ कमी होती तो बनारसी खुद को यथोचित दंड देते थे—

पूंजे तब भोजन करै अनपूजै पंछिताइ।
तासु दण्ड अगिले दिवस रूखा भोजन खाइ॥

लेकिन जब समय पर शिव काम न आए तो उनका यह मति भ्रम टूट गया—

जब मैं गिरयौ परयौ मुरछाई। तब सिब किछु नकरी सहाई।
यह विचारि सिव पूजा तजी। लखी प्रगट सेवा में कजी॥

अगर मुगल शासन व्यवस्था में भारतीय समाज को देखें तो मुगलकालीन समाज एक सामंती समाज था। सभी अधिकारी व स्वयं सम्राट् भी अपने भोग-विलास में रत रहते थे, ऐसे में समाज की दशा-दुर्दशा से राजा अथवा सामंत को कोई विशेष महत्त्व नहीं था। जनता स्वयं उस व्यवस्था से ज्यादा उम्मीद नहीं करती थी। ऐसे में अगर कोई शासक, सामंत थोड़ा भी उदार हुआ तो जनता उसको गहनता की पदवी प्रदान कर देती थी।

जनता की सुरक्षा और अभय की स्थिति पर जब हम विचार करते हैं तो बड़ी निराशा होती है। संवत् १६५३ में अकाल पड़ा। जनता अभाव के कारण बहुत दु:खी थी। राज्य की ओर से कोई व्यवस्था न देख जनता नगर छोड़ भागी। अकाल समाप्ति पर पुन: लौटी। इसी प्रकार संवत् १६७३ में आगरा में भरी का प्रथम प्रकोप हुआ। प्राणों के रक्षार्थ लोग घर छोड़कर सुरक्षित स्थानों को भागे। वैद्यादि कुछ न कर सके। शांति होने पर लोग लौटे। इन दोनों घटनाओं का सजीव आँखों देखा चित्रण कविवर बनारसीदास ने अपनी अर्धकथा में किया है। कविवर बनारसीदास ने अपनी आत्मकथा में बात तो अपनी ही कही है, लेकिन उससे समाज का जो ताना-बाना प्रत्यक्ष होता है, उससे यही लगता है कि मुगलकाल, कला-चिंतन, संस्कृत-सभ्यता के लिए स्वर्ण-युग रहा हो लेकिन सामान्य जन इससे मीलों दूर था। शासन की सफलता जनता के मन से चोरी, ठगी, लूट, खसोट, अन्याय के प्रति निर्भय बनाने में होती है। अर्धकथानक से हमें प्रतीत होता है कि ये सभी कुरीतियाँ उस समय विद्यमान थीं। बस शासन की क्रूरता और डर के वजह से दबी हुई थी, समाप्त नहीं हुई थी। जैसे ही शासन की बागडोर कमजोर होती समाज में ये कुरीतियाँ फैल जातीं और आम जनता इससे त्रस्त हो जाती थी। इसका सजीव चित्रण बनारसीदासजी ने अत्यंत मार्मिक ढंग से किया है—

इस ही बीच नगर में शोर। भयौ उदंगल चारिहु ओर॥
घर-घर दर-दर दिए कपाट। हटवानी नहिं बैठे हाट॥
भले वस्त्र अरू भूसन भले। ते सब गावे धरती तले॥
छुडवाई गाड़ी भहुँ और। नगदी माल निभरमी ठौर॥
घर-घर सबनि बिसाहे सस्त्र। लोगन्ह पहिरे मोहन वस्त्र
ओढे कंबल अथवा खेस। नारिन्ह पहिरे मोटे बेस॥
ऊँच-नीच कोउन पहिचान। धनी दरिद्री भए समान॥
चोरि धारि दीसै कहुँ नाहि। यौ ही अपमय लोग उरांहि॥

स्पष्ट है कि जनता में अचानक ही ऐसा हाहाकार नहीं मच गया होगा। इससे पहले जरूर उन्होंने ऐसा कोई-न-कोई मंजर अवश्य देखा होगा। मुगलकाल के समाज का जो वर्णन बनारसीदासजी ने किया है, उसका एक उदाहरण पश्चिमी विद्वान 'फ्रांसिस पोल्सकेटका' के आँखों देखा मुगल समाज के वर्णन के रूप में देखा जा सकता है। उसने अपना अनुभव बताते हुए लिखा है—"जनता के तीन वर्ग, जो वास्तव में नाममात्र से स्वतंत्र हैं, परंतु उनका जीवनधारा स्वयं स्वीकृत दासता से नहीं के बराबर ही भेद खाती है। कार्यकर्ता, चपरासी, नौकर और दुकानदार, इनका कार्य स्वतंत्र नहीं था। पारिश्रमिक अल्प था। भोजन और मकान दयनीय थे। सदैव शाही कार्यालय के दबाव के शिकार रहते थे। दुकानदार यद्यपि कभी-कभी धनवान और आदृत थे, परंतु बहुधा अपनी संपत्ति गुप्त रखते थे।"

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि जो समाज बनारसीदासजी ने अपने साहित्य में रचा है, वह ऐतिहासिक पुस्तकों से थोड़ा भिन्न और अलग नजरिए से रचा गया है। इतिहास और साहित्य के बीच सत्य और यथार्थ का जो द्वंद्व होता है, वह यहाँ भी विद्यमान है। कविवर बनारसीदासजी ने तत्कालीन समाज का जो चित्र अपनी रचनाओं में खींचा है वह ऐतिहासिक और विशिष्ट है। यहाँ समाज विभिन्न कोटियों में बँटा होकर भी एक है। आडंबर में जकड़ा हुआ होकर भी आस्थावान है।

इस प्रकार हम देखें तो मुगलकालीन समाज बहुत संतोषजनक स्थिति में नहीं था। शासन की ओर से समाज की उन्नति के प्रयास लगभग न के बराबर ही थे। अंधविश्वास, बहुधर्मिता, निरक्षरता, अज्ञान, गरीबी से भारतीय समाज जकड़ा हुआ था। स्त्रियों की दशा विशेष रूप से अच्छी नहीं थी। स्वयं कवि की तीन-तीन शादियाँ हुई थीं। "स्त्रियों की बहुत कद्र नहीं थी। पुरुष-स्त्री का प्रेम और बराबरी का नाता नहीं था। बनारसीदास की स्त्री का देहांत होता है, एक

ही नाई मरने की खबर के साथ दूसरी लड़की की सगाई लाता है। वे अपनी ब्याहता के होते हुए इधर-उधर आशिकी करते फिरते हैं। लेकिन पत्नी अपना धर्म समझती है कि पति की सेवा करे और गाढ़े समय में अपना सारा धन उसको सौंप दे।"

इतना ही नहीं, स्वयं बनारसीदास अपने दादी, प्रथम पत्नी, माता सबके प्रति अपने प्रेम-लगाव को बताते हैं, लेकिन उनका नाम हमें नहीं पता चलता। "बनारसीदास हमें किसी भी स्त्री का नाम नहीं बताते हैं, चाहे उस स्त्री का उनके जीवन में कितना भी महत्त्वपूर्ण स्थान क्यों न हो। हम उनकी माता, दादी, उनकी तीन पत्नियाँ, उनकी प्रेमिका, किसी को भी नाम से नहीं जानते। ऐसी स्थिति में यही पता चलता है कि स्त्री उस समाज में प्रथम दर्जे की व्यक्ति नहीं थी। वह हर स्थान पर होती तो थी, लेकिन वह बेनाम थी। उसका अस्तित्व उभरकर सामने नहीं आ पाता।"

कवि बनारसीदासजी की सामाजिक चेतना का एक और पहलू, जो बेहद महत्त्वपूर्ण है, वह है आम जनता की बोली में अपनी बात कहना। वे एकदम सामान्य भाषा, बाजार की भाषा में अपनी बात कहते हैं—

मध्यदेश की बोली बोलि। गर्मित बात कहौं हिम खोल॥

"बोली का अर्थ उस समय बोलचाल की भाषा है।...अर्धकथानक में उर्दू-फारसी के शब्द काफी तादाद में आए हैं और अनेक मुहावरे तो आधुनिक खड़ी बोली के ही कहे जा सकते हैं। बनारसीदासजी ने 'अर्धकथानक' की भाषा में ब्रजभाषा की भूमिका लेकर उस पर मुगल काल में बढ़ते हुए प्रभाववाली खड़ी बोली का पुट दिया है और इसे ही उन्होंने मध्यदेश की बोली कहा है।"

कवि ने अपने आत्मकथा के माध्यम से समाज में व्याप्त तमाम बारीकियों को उजागर किया है। समाज में समय-समय पर कई प्रकार की महामारियाँ फैलती रहती थीं। समाज में बच्चों की मृत्यु दर बहुत अधिक थी। सामान्य सी बीमारी से लोग मर जाते थे। स्त्रियों संबंधी रोगों का तो एक ही उपचार था, उनकी मृत्यु। अन्य जिम्मेदारियों की तरह स्वयं की जिम्मेदारी भी जनता की व्यक्तिगत थी। समाज में बीमारियों को लेकर एक भय का माहौल व्याप्त था, लोग एक-दूसरे को छूने से डरते थे। किसी बीमार व्यक्ति की सहायता तो दूर, उसके साथ उठना-बैठना भी लोग छोड़ देते थे। अच्छी स्वास्थ्य-व्यवस्था न होना और लोगों में बीमारियों को लेकर अंधविश्वास तथा असहयोग होने से यह दृश्य और भी भयावह हो जाता था। स्वयं कवि भी इस मानसिकता के शिकार हो चुके थे। बनारसीदास उस स्थिति के बारे में बताते हैं—

भयो बनारसीदास तनु कुष्टरूप सरबंग।
हाड़-हाड़ उपजी विधा केस रोम भुवभंग।
विस्फोटक अनगित भले हस्त चरन चौरंग।
कोऊ नर साला ससुर भोजन करै न संग॥
ऐसी असुभ दसा भई निकट न आवै कोइ।
सासू और विवाहिता करहिं सेव तिय दोइ॥
जल भोजन की लहि सुध दैहि आनि मुख माहि।
ओखद लावहिं अंग मैं नाक मूंद उठि जांहि॥

इस अंक के चित्रकार

लाल बहादुर श्रीवास्तव

चित्रकार, कहानीकार एवं कवि। कहानी, कविता, लघुकथा, साक्षात्कार, व्यंग्य, यात्रा-वृत्तांत, बाल कविताएँ, कहानी पत्र-पत्रिकाओं एवं समाचारों में निरंतर प्रकाशित। 'नया सवेरा', 'धूप छाँव' (बाल-संग्रह), 'मुखौटे-लघु' कथा-संग्रह प्रकाशित। जनगणना गीत लेखन के लिए राष्ट्रपति रजत पदक से सम्मानित। साहित्य सेवा सम्मान एवं कई संस्थानों द्वारा रचनाओं पर सम्मानित।

संपर्क : शब्द शिल्प, एल.आई.जी. ए-१५
जनता कॉलोनी, मंदसौर-४५८००१ (म.प्र.)
दूरभाष : ९४२५०३३९६०

इस विकट स्थिति में स्थानीय वैद्य की देशी दवाइयाँ ही एकमात्र आधार होती थीं। अगर वह काम कर जाए तो सब ठीक, वरना सब खतम। आयुर्वेद, जड़ी-बूटी, देशी अनुभव, तरीके यही सब तद्युगीन स्वास्थ्य संबंधी व्यवस्था के आधार थे।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि जो समाज बनारसीदासजी ने अपने साहित्य में रचा है, वह ऐतिहासिक पुस्तकों से थोड़ा भिन्न और अलग नजरिए से रचा गया है। इतिहास और साहित्य के बीच सत्य और यथार्थ का जो द्वंद्व होता है, वह यहाँ भी विद्यमान है। कविवर बनारसीदासजी ने तत्कालीन समाज का जो चित्र अपनी रचनाओं में खींचा है वह ऐतिहासिक और विशिष्ट है। यहाँ समाज विभिन्न कोटियों में बँटा होकर भी एक है। आडंबर में जकड़ा हुआ होकर भी आस्थावान है। अनपढ़ होकर भी भिन्न-भिन्न व्यावसायिक क्षेत्रों में कार्यकुशल है। 'अर्धकथानक' में देश-काल वातावरण का भी सजीव चित्रण हुआ है। इसमें जौनपुर, आगरा, मेरठ, पटना, इलाहाबाद, बनारस आदि स्थानों एवं उनको जोड़नेवाले रास्तों का चित्रण व्यापक रूप से हुआ है। तत्कालीन राजनैतिक सामाजिक, धार्मिक, स्थितियों का भी सहज चित्रण हुआ है। विशेष यह है कि कवि स्वयं व्यापारी थे, परिणामस्वरूप रास्तों की कठिनाइयों का सामना और समाज के मानस की समझ दोनों सहज रूप से उनको प्राप्त थी। राजनीतिक अस्थिरता, आवागमन के साधनों का अभाव एवं निरंतर तनाव में रहना उनकी नियति थी। भुक्तभोगी होने के कारण समाज, राजनीति और धर्म का जो हृदयस्पर्शी रूप उनकी आत्मकथा और रचनाओं में उभरकर आया है, वह पाठक को आंदोलित कर देता है।

९४, पंजाबी पुरा
दिल्ली रोड, मेरठ
दूरभाष : ९४१२७००९२२

पारिवारिक विघटन रोकने में रामचरितमानस की भूमिका

• श्रद्धा सक्सेना

माता-पिता का संतान के प्रति धर्म, संतान का माता-पिता के प्रति धर्म, पति-पत्नी, गुरु-शिष्य, राजा-प्रजा, भाई-बंधु—सब परस्पर धर्म का पालन करते हैं, तभी परिवार और समाज सुगठित रहते हैं। इन्हीं दायित्वों का बोध कराने के लिए, युग मनीषी गोस्वामी तुलसीदासजी ने 'रामचरितमानस' के रूप में हमें ऐसा प्रकाश-स्तंभ दिया है, जिसके प्रकाश से युग-युगों तक मानवीय समाज समस्त समस्याओं का समाधान प्राप्त करता रहेगा।

वर्तमान में परिवार-व्यवस्था जिस तरह से विखंडित हो रही है, संयुक्त से एकाकी परिवार-एकाकी परिवार में भी पति-पत्नी में अनबन और बिखराव व टूटन की घटनाएँ आम हो गई हैं। उसका कारण अज्ञान तथा दुर्बुद्धि को ही माना जाना चाहिए। तुलसीदासजी कहते हैं—"जहाँ सुमति तहाँ संपति नाना, जहाँ कुमति तहाँ बिपति निदाना।" जिस परिवार में सुमति होगी, वह परिवार भी राम-परिवार की भाँति आदर्श, यश और अक्षुण्ण कीर्ति-संपन्न होगा।

परिवारों के टूटने अथवा कलह-क्लेश का सबसे बड़ा कारण यही है। पर-नारी पर कुदृष्टि रखने वाले पुरुषों को 'मानस' में बहुत धिक्कारा गया है। बालि का प्रसंग हो अथवा रावण का। स्वयं के परिजनों द्वारा भी और समाज द्वारा भी उनके लिए अपशब्द कहलवाए गए हैं। अत्यंत शक्तिशाली होने के बाद भी चारित्रिक शिथिलता ही उनके विनाश का कारण बनी। राक्षस कुलवधू होने पर भी मंदोदरी तथा सुलोचना आदि के चरित्र यह बताते हैं कि व्यक्ति अपने चरित्र से यशस्वी बनता है, धन-वैभव से नहीं। तारा आदि विभिन्न स्त्री पात्र स्थान-स्थान पर नीति तथा धर्म की शिक्षा देते हैं, किंतु फिर भी सीता की बराबरी नहीं कर पाते, क्योंकि सीता जैसी पवित्रता तभी हो सकती है, जब राम जैसे निष्कलुष तथा एक पत्नीव्रत का पालन करने वाले पति हों—"एक नारी व्रत रत सब झारी। ते मन बचन कर्म पति हितकारी॥"

पति-पत्नी दोनों परस्पर सच्चरित्रता व सम्मान का कर्तव्य पालें। यह संदेश मानस देती है। एक पत्नी व्रत तथा पतिव्रता नारियों के धवल चरित्र मानस की यश-पताकाएँ हैं। परिवार में जब पत्नियाँ श्रेष्ठ चरित्र की होती हैं, तब परिवार का मुखिया भी दशरथजी जैसा होता है, सबको सुसंस्कार व नीति-निष्ठा की शिक्षा देता है—

मुखिया मुख सो चाहिए, खान-पान कहुं एक।
पालहिं पोसहिं सकल अंग, तुलसी सहित बिबेक॥

सुपरिचित लेखिका। निन्यानबे शोध-पत्र राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय शोध-संगोष्ठियों में स्वीकृत। ६० शोध-पत्र एवं 'साहित्य एवं लोक जीवन में हिमालय' प्रकाशित। 'आदर्श शिक्षका' सम्मान तथा अन्य कई सम्मान प्राप्त।

इस विवेकसमस्त पालन-पोषण का प्रतिफल होते हैं—राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न जैसे नर-रत्न।

किंतु आज परिवारों में विवेकशीलता का ही अभाव हो गया है, जिसका दुष्परिणाम अगली पीढ़ी भोग रही है। अनुशासन के स्थान पर स्वेच्छाचारिता, प्रेम के स्थान पर कामुकता, समर्पण के स्थान पर अहंकार, सादगी व मर्यादा के स्थान पर फैशनपरस्ती व प्रदर्शन, समानता के नाम पर नासमझी और कुतर्क, विवेकहीनता के ही परिणाम हैं, जिसका दुष्परिणाम सभी बालकों को भुगतना पड़ता है, गर्भावस्था में भी और जन्म के बाद भी। बालक आज्ञापालन नहीं करते, वे अनुकरण करते हैं, अत: परिवार के सभी जनों को 'मानस' के पात्रों के समान होना पड़ेगा।

पति द्वारा पत्नी को प्रताड़ित किया जाना पारिवारिक विघटन का महत्त्वपूर्ण कारण है। शिव-पार्वती, मनु, शतरूपा, दशरथ और उनकी पत्नियों के प्रसंगों, ऋषियों और गुरुमाताओं के प्रसंग, विवाह का उद्देश्य धर्माचरण बताते हैं, इसीलिए 'धर्मपत्नी' शब्द प्रयुक्त होता है। 'दंपति धरम आचरण नीका' जैसी चौपाइयाँ हमें बताती हैं कि परिवार के संतुलन में नारी को पुरुष से हीन समझने की मान्यता बहुत बाधक है। दांपत्य की गिरती हुई प्रतिष्ठा और मर्यादा, नारी को सम्मान दिए बिना नहीं सँभल सकती। नारी पर तरह-तरह के प्रतिबंध लगाना, उसे अयोग्य मानकर सामाजिक व पारमार्थिक कार्यों से पृथक् रखना, मानसकार की दृष्टि में सर्वथा अनुचित है। उत्तरकांड में कागभुशुंडि-गरुड़ संवाद में स्वयं भगवान् नारी के लिए रास्ता खोलते हुए कहते हैं—

पुरुष नपुंसक नारी वा, जीव चराचर कोई।
सर्वभाव भज कपट तजि, मोहि परम प्रिय होइ॥

वन-गमन के समय राम सीताजी की भावनाओं का आदर कर, उन्हें साथ ले जाने का निर्णय लेते हैं। भगवान् राम अपनी पत्नी को अतिशय प्रेम करते हैं—

जनक सुता जग जननि जानकी।
अतिसय प्रिय करुणा निधान की॥

जब इतना प्रेम होता है, तभी सुख-दु:ख में दोनों सदैव साथ रहते हैं। वन के कष्ट भी पति के सान्निध्य में सुख में बदल जाते हैं। दोनों एक-दूसरे की पीड़ा में सहभागी हैं, दोनों में संवेदना है—"सुनि सीता-दु:ख प्रभु सुख अयना। भर आए जल राजीव नयना॥"

पति-पत्नी की यह अनन्यता ही दांपत्य की सुदृढ़ता का आधार है। जहाँ ऐसा प्यार और निर्मल मति होगी, वहाँ पत्नी को प्रताड़ित करने का भाव ही कहाँ उपजेगा।

पुत्रवधुओं के प्रति सास-ससुर का स्नेह माता-पिता से कम नहीं, अधिक है। अपनी कन्याओं से अधिक स्नेह, अपनत्व, प्यार-दुलार बहुओं को देना उनका कर्तव्य है, जिसका सर्वथा अभाव आज पारिवारिक विघटन का एक मूल कारण है। चारों बहुएँ जब विवाह के उपरांत अयोध्या आती हैं, तब दशरथजी कहते हैं—"वधु लरिकिनी पर-घर आई। राखेउ नयन पलक की नाई॥"

ससुराल में ऐसे आत्मीय व्यवहार तथा माता-पिता द्वारा दी गई सीख के कारण बहुएँ भी अपने सास-ससुर का उचित आदर-सम्मान करती हैं—

तब जानकी सासु पद लागी, सुनिय माय मैं परम अभागी।

चित्रकूट में सीताजी की सेवा और राम-लक्ष्मण के उदार व आत्मीय व्यवहार से कैकेयी के मन की कुटिलता भी धुल जाती है, वे पश्चात्ताप की अग्नि में जलकर पवित्र हो जाती हैं। सीताजी की अनुपस्थिति में उनकी बहनें भी अपनी सासुओं और अन्य सदस्यों का पूरा ध्यान रखती हैं, उन्हें उचित सम्मान तथा दु:ख में सांत्वना देती हैं। महारानी बन जाने के बाद भी सीता अपने पति की तथा अन्य वरिष्ठ जनों की सेवा में तत्पर रहती हैं। यह महारानी सुनयना तथा जनकजी द्वारा दी गई सीख का ही परिणाम है। ये शिक्षाएँ बिखरते-टूटते परिवारों के लिए संजीवनी हैं, सामाजिक बीमारियों की औषधि हैं।

मायके की तरफ लड़कियों का अत्यधिक झुकाव भी परिवारों में क्लेश का एक महत्त्वपूर्ण कारण है। सती का प्रसंग, सीताजी का चित्रकूट में माता-पिता के डेरे में तब तक न जाना, जब तक सुनयना कौशल्याजी से आज्ञा न ले लें। ये सूत्र वर्तमान में पारिवारिक सुदृढ़ता और संगठन के सूत्र हैं। भाइयों का आपसी प्रेम, सेवा, त्याग, विश्वास एवं समर्पण—मानस का अनुकरणीय तत्त्व है, यह परिवारों की वह सुदृढ़ पतवार है, जो बड़े-से-बड़े तूफान में भी परिवारों को बिखरने-डूबने नहीं देती। भरत के प्रति राम का अटूट विश्वास कहता है कि चाहे ब्रह्मा, विष्णु, महेश का भी स्थान प्राप्त हो जाए, फिर भी भरत को कभी राज-मद नहीं हो सकता, जैसे मट्ठे की एक बूँद दुग्ध सागर को नहीं फाड़ सकती, उसी प्रकार भरत का व्यक्तित्व भी इतना महान् और विशाल है कि सत्ता की प्राप्ति उसके लिए मट्ठे की एक बूँद के समान है—

भरतहिं होए ना राज मद, बिधि हरि हर पद पाय।
कबहुँ कि सीकरनि बिंदु तैं, छीर सिंधु बिलगाय॥

अद्‌भुत है भाइयों का यह परस्पर प्रेम, जिसका अनुकरण करके हम अपनी कल्याणकारी परिवार-व्यवस्था को पुन: प्रतिष्ठित कर सकते हैं। चारों भाइयों का परस्पर कर्तव्य-बोध उन्हें राम के समकक्ष ही बैठाता है, ऋषियों द्वारा स्थान-स्थान पर उनके चरित्रों का गान किया गया है।

सोलह संस्कारों का विवेचन तो अनेक ग्रंथों में मिलता है, किंतु जितना वैज्ञानिक विवेचन, क्रियान्वयन तथा उनके सत्परिणामों को जीवन में चरितार्थ होते हुए तुलसीदासजी ने दरशाया है, वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। पारिवारिक संगठन एवं आदर्शों की स्थापना में संस्कार-परमार्थ का अत्यंत महत्त्वपूर्ण योगदान है। शिष्टाचार, विनय, नम्रतापूर्वक बड़ों के गौरव को स्वीकार करने से बालक के आयु, विद्या, यश और बल में वृद्धि होती है। रात्रि में जल्दी सोने और जल्दी उठने की आदत बाल-पीढ़ी को तेजस्वी बनाती है। ये आदतें दशरथजी के अनुशासनों का पालन उनके परिवार की अनुकरणीय व्यवस्था है—"प्रात: काल उठिकै रघुनाथा। मातु, पिता, गुरु नावहिं माथा॥"

राम अपनी उदारता, शालीनता, आत्मीयता एवं कृतज्ञ-भाव से अपने परिजनों को ही नहीं, निषाद, भील, रीछ, वानर, यहाँ तक कि छोटी सी गिलहरी को भी अपना बना लेते हैं। लक्ष्मण को रावण से नीति-शिक्षा दिलवाकर वे शत्रुता में भी मर्यादा की स्थापना करते हैं। 'प्रति उपकार करहुँ का तोरा' कहकर हनुमान के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं। ये सारे संदेश, प्रेरणाएँ 'रामचरितमानस' को मानव-जीवन का वह संविधान सिद्ध करती हैं, जिसके अनुकरण से वर्तमान की सभी समस्याओं का समाधान प्राप्त किया जा सकता है। श्रेष्ठ नागरिकों के निर्माण से शीघ्र ही राष्ट्र की तसवीर भी बदली जा सकेगी, हम अपने गौरव-गरिमा को पुन: प्राप्त करेंगे तथा भारत पुन: जगत्-गुरु बनेगा।

श्रीराम शर्मा आचार्यजी कहते हैं—"सूर्य कभी अंधकार से लड़ाई नहीं करता, वह केवल अपना प्रकाश फैलाना आरंभ कर देता है, अंधकार स्वत: तिरोहित हो जाता है।" आवश्यकता है, हम भी अपने धर्मग्रंथों रूपी प्रकाश-स्तंभों से वह दृष्टि प्राप्त करें, उनका पाठ इस दृष्टि से करें कि उनकी रोशनी में सभी विकार, दुष्प्रवृत्तियाँ एवं अज्ञान का अंधकार तिरोहित हो जाए। मंडली बुलाकर उसके पाठ द्वारा मात्र वैभव-प्रदर्शन और ध्वनि प्रदूषण करने की अपेक्षा उससे शुभ-संदेश ग्रहण करें। शुभ सोचें, शुभ्रता का प्रसार अगली पीढ़ी में करें और जीवन को धन्य बनाएँ।

साअ
डी-६२१ गुलमोहर सिटी, सिरोल रोड,
ग्वालियर (मध्य प्रदेश)
दूरभाष : ९८२६६१४४५१

दोहों का संसार

• उर्वशी अग्रवाल 'उर्वी'

उसने पूछा क्या हुए, सूखे हुए गुलाब।
आँखों से मैंने दिए, भीगे हुए जवाब॥

दुख भूलूँ मैं आपणे, हरूँ ग़ैर की पीर।
लिखना मेरे ईश्वर, ऐसी ही तक़दीर॥

आना तुम विश्राम को, थक जाएँ जब पाँव।
ठंडी-ठंडी छाँव है, मेरे मन का गाँव॥

रस्सी से बाँधे गए, अरमानों के हाथ।
आँखों को भी सी दिया, इन होठों के साथ॥

आँखों को सागर कहा, चेहरे को आकाश।
लिखने से पहले मुझे, पढ़ भी लेते काश॥

मैंने अपनी हसरतें, कर डाली जब होम।
पत्थर का दिल था मगर, पिघला जैसे मोम॥

मेरे तो रहते नहीं, क़ाबू में जज़्बात।
आते हो जब सामने, भूलूँ करना बात॥

सबके दिल की हसरतें, पूरी कर भगवान।
छोटे-छोटे हैं यहाँ, आदम के अरमान॥

बदलूँ तो मैं वक्त हूँ, थम जाऊँ हालात।
छू लो तो अहसास हूँ, छलकूँ तो जज़्बात॥

मीठा क्यों लगने लगा, इतना कड़वा नीम।
बीमारी है इश्क़ की, कहने लगा हक़ीम॥

शर्बत सी है ज़िंदगी, कड़वाहट मत घोल।
बेहतर हैं खामोशियाँ, चुभते हों जब बोल॥

मिट्ठु तेरी याद में, बैठी हूँ गमगीन।
क्या होती है क़ैद अब, मुझको हुआ यक़ीन॥

शहरों की इन बस्तियों, में पत्थर के बाग।
कंकरीट की झाड़ियों, से निकले है आग॥

भीतर हैं चिंगरियाँ, भले हुई हूँ राख।
फूँको मुझमें फूँकनी, रक्खो मेरी साख॥

करके जब हस्ताक्षर, तुझको किया कबूल।
काग़ज़ पर भी खिल गए, जाने कितने फूल॥

नहीं किसी की बाज़ुएँ, नहीं किसी का हाथ।
केवल मुझको चाहिए, एक तुम्हारा साथ॥

चेहरे पर चेहरा लिये, चलते सभी जनाब।
पहना सबने है मगर, दिखता नहीं नक़ाब॥

कहता था इक ज्योतिषी, पढ़ मेरी तक़दीर।
रेखाएँ हैं दर्द की, सहनी होगी पीर॥

कष्टों के सिक्के बहुत, मुझ पर दिये उछाल।
मन के दामन में प्रभो, ख़ुशियाँ भी तो डाल॥

खामोशी से ही सही, किया प्रेम का जाप।
मैं राधा तो हूँ नहीं, पर मोहन हैं आप॥

ऐसे पिघली याद में, जैसे पिघले मोम।
यानी तेरे इश्क़ में, हो जाऊँगी होम॥

खुद से जितनी दूर हूँ, उतनी उसके पास।
मुझको मेरा ही नहीं, होता अब अहसास।

सुपरिचित कवयित्री। संप्रति उप-संपादिका 'साहित्य अमृत'।

मेरी भी सुन लीजिए, दाता कभी अपील।
पेचीदा ये केस है, खुद हूँ आज वकील॥

जो बीती वो लिख यहाँ, आँसू यहीं निचोड़।
आ री मेरी ज़िंदगी, काग़ज़ पे दम तोड़॥

हर मुश्किल के प्रेम से, सुलझाए हैं केश।
जीवन सख़्ती से मगर, आया फिर भी पेश॥

करो मरम्मत हाथ की, अब तो मेरे राम।
रेखाएँ वो खींच दे, जिनमें तेरा नाम॥

पूरे तो होते नहीं, मेरे सारे ख़्वाब।
इनको तुमने तोड़कर, अच्छा किया जनाब॥

खुद में रहना भी कभी, नहीं रहा आसान।
यादों से ही भर गया ख़ाली पड़ा मकान॥

ख़ुशियाँ अपनी बेचकर, लेती दर्द उधार।
ज़रा निभाकर देखिए औरत का किरदार॥

कैसा अब अफ़सोस है, अगर जले हैं हाथ।
रक्खा मैंने सोचकर, अंगारों पर हाथ॥

दुनिया मेरे दर्द से, बिल्कुल बेपरवाह।
मैंने जब आहें लिखीं, मुझे मिली है वाह॥

आँखों पे रक्खे गए, जाने कितने नाम।
झील पियाले ताल और साक़ी सागर जाम॥

अपनों ने रोकी सदा कदमों की रफ़्तार।
सबक़ ज़िंदगी ने यही, दिया हज़ारों बार॥

मुझको तुमसे प्यार है तुमको मेरी चाह।
आकर मुझसे ही रहो, होकर बेपरवाह॥

क्यों उठता है दर्द ये, क्यों होती है पीर।
या तो सोनी जानती, या जाने फिर हीर॥

ऐसा भी गुज़रा समय, नहीं रहा कुछ होश।
आँखें चिल्लाती रहीं, पर लब थे ख़ामोश॥

जीवन का यह फ़लसफ़ा, समझे कोई काश।
ज़िंदा ही तो डूबता, जो तैरे वो लाश॥

तेरी यादों का यहाँ, रक्खा हुआ हिसाब।
छिटपुट लिक्खा था कभी, अब है एक किताब॥

मैंने गिरवी रख दिया, सब कुछ तेरे पास।
यादें-साँसें-जिंदगी, सब कुछ तेरे पास॥

तनहा मुझको देखकर, पूछें सभी सवाल।
तनहा रहना हो गया, मेरा यहाँ मुहाल॥

यही सोचकर रो दिये, मेरे सब जज़्बात।
यादें-साँसें-जिंदगी, सब कुछ तेरे पास॥

चूज़ों को जब पर मिले, भर ली तभी उड़ान।
और घोंसला हो गया, चिड़िया का वीरान॥

रिश्तों की गलियाँ यहाँ, होती अक्सर तंग।
इनमें चलने के लिए, करनी पड़ती जंग॥

मुझमें अब लहरा रहा, दुख का पारावार।
रात रुदाली हो गई, दिन भी है दुश्वार॥

तुमको चाहा टूटकर, मेरा यही गुनाह।
तुमको आना है नहीं, देखूँ फिर भी राह॥

घर के आँगन में खड़े, बरगद, पीपल, नीम।
जैसे मुझको दे रहे, जीने की तालीम॥

तुमको मेरे दर्द का, कैसे हो अहसास।
ज़ख्मों ने पहना हुआ, हँसता हुआ लिबास॥

कैसे अपनों ने यहाँ, तोड़े हैं अरमान।
मुझको जिसने भी सुना, सुनकर वो हैरान॥

जो अब तक खोया नहीं, उसकी मुझे तलाश।
जो अब तक देखा नहीं, मिल जाता वो काश॥

तेरी तू ही जानता, किसका तुझे जुनून।
मेरे दिल को तो नहीं, तेरे बिना सुकून॥

सोचा था नदिया मुझे, करवाएगा पार।
माँझी समझा था जिसे, छोड़ चला मँझधार॥

आँसू इसकी आँख में, रहते हैं मौजूद।
देखा है दीवार का, सीला हुआ वजूद॥

बोली थी ख़ामोशियाँ, छनकी थी ज़ंजीर।
तुमने समझी ही नहीं, क्या थी मन की पीर॥

अपनों की ही चोट से, मुझमें पड़ी दरार।
मुझसे लिपटी आज फिर, कहकर ये दीवार॥

कौन देखता है भला, टूटा-फूटा काँच।
मैंने क़िस्मत से कहा, आकर मुझको बाँच॥

बोला मुझसे ज्योतिषी, पढ़ करके तक़दीर।
रेखाओं में दर्द है, सहनी होगी पीर॥

चुपके से पढ़ती रही, ख़बरों को दीवार।
मेरा चेहरा हो गया था शायद अख़बार॥

रस्ता तकते जागते, रहते दर-दीवार।
तेरी यादों का यहाँ, लगा हुआ दरबार॥

खुद से ज़्यादा आपकी, करती हूँ परवाह।
लेकिन समझे आप तो, इसको एक गुनाह॥

इतरायी थी मैं ज़रा, दिखलाया अंदाज़।
बस इतनी सी बात पर, हुए आप नाराज़।

उससे नज़रे ज्यों मिली, दमका मेरा रूप।
खिड़की से ज्यों आ गई, इक मुट्ठी भर धूप॥

रस्ता तकते जागते, रहते दर-दीवार।
तेरी यादों का यहाँ, लगा हुआ दारबार॥

खुद से ज़्यादा आपकी, करती हूँ परवाह।
लेकिन समझे आप तो, इसको एक गुनाह॥

इतरायी थी मैं ज़रा, दिखलाया अंदाज़।
बस इतनी सी बात पर, हुए आय नाराज़॥

जब भी जीवन से मुझे, होने लगी थकान।
थोड़ा सा आराम कर, चुकता किया लगान॥

उससे नज़रें ज्यों मिली, दमका मेरा रूप।
खिड़की से ज्यों आ गई, इक मुट्ठी भर धूप॥

ये किसने माहौल में, बिखराया मकरंद।
मुझको तुमसे आ रही, अपने पन की गंध॥

कमरे से दहलीज़ तक, है मेरा संसार।
भीतर जब घबरा गयी, आकर बैठी द्वारा॥

साअ

४/१९ आसफ अली रोड
नई दिल्ली-११०००२
दूरभाष : ९९५८३८२९९९

मौसम के तेज-तर्रार तेवर

• गोपाल चतुर्वेदी

हमने इधर अनुभव किया है कि मौसम का मिजाज कुछ तेज हो गया है, जैसे कोई शांत प्रवृत्ति का व्यक्ति बात-बात पर गुस्सा करने लगे। गरमी है तो ऐसा लगता है, जैसे कोई सुलगती भट्ठी से अदृश्य आग निकल रही हो। तेज रफ्तार की धधकती लू किसी को भी बीमार करने में समर्थ है। जाहिर है कि कई ने गरमियों में प्राण गँवाए हों। खेत या बाजार से अच्छे-खासे लौटे। सूखते गले को पानी पीकर तर किया और कुछ देर बाद बैठे-ठाले ढेर हो गए। बारिश भी होती है तो ऐसी कि बाढ़ आकर रहे। बस्ती, गाँव, शहर, मोहल्ले सब डूबें। यदि इंद्रदेव रूठें तो ऐसे कि लोग एक बूँद पानी के लिए आकाश ताकें। बादल आएँ पर मुँह चिढ़ाते निकल जाएँ, जैसे रूस यूक्रेन से रूठा है। बारिश तो हो नहीं, पर सूखे के बम बरसें। कुछ प्यास से मरें, कुछ आस-पास की बरबादी के अवसाद से। धरती बूँद-बूँद पानी को तरसे। बुद्धिजीवी अतीत को तलाशें और निष्कर्ष निकालें कि ऐसा ऐतिहासिक सूखा कभी पड़ा ही नहीं। कुछ ग्लोबल वॉर्मिंग का हवाला दें, कुछ हरियाली के हनन का रोना रोएँ। "और छेड़छाड़ करो प्रकृति से। और वनों का विनाश कर शहर के जंगल बसाओ। यही सब तो होना है, होकर रहेगा।"

इसे क्या कहें, कुदरत की नाराजी या इनसान से उसका बदला? जाड़ा पड़े तो ऐसा कि शीत-लहर आए। कुछ फैशन में नंगे हों, कुछ अभाव में। काँपे दोनों, एक पुरस्कार की प्रतीक्षा में एक ठंड के मारे। सबसे ज्यादा दिक्कत गरीबों की हो। मोदीजी के दिए आयुष्मान कार्ड से अस्पताल में भरती तो हों, पर अधिकतर के लिए सरकारी अस्पताल निदान केंद्र न होकर सिर्फ मरघट के सफर का सराय-स्थल हैं। वह आयुष्मान कार्ड दिखाते ही दिखाते चल बसते हैं। जब तक डॉक्टर उनकी बीमारी की पहचान के लिए, दर्जनों टेस्ट लिखकर अपने ज्ञान की नुमाइश करे, ऊपरवाले का बुलावा आ जाता है। ऐसे लोग, दंगई मानसिकता के मुकाबले और उसकी तुलना में सच्चे देश-सेवक हैं। उन्होंने आयुष्मान कॉर्ड का प्रयोग तो किया, पर उसके खर्चे में बचत भी की। ऐसे वाकई वित्तमंत्री से सेवा या बचत मैडल के हकदार हैं। उन्होंने भले ही डॉक्टरों का कमीशन काटा, पर वित्तीय हित-साधन भी किया नहीं तो कॉर्ड की राशि में से कुछ ही शेष रहती इलाज के लिए।

इधर मौसम की मार हर ऋतु का समान तत्त्व है। इसके लिए कहना कठिन है कि इसमें सरकारी अस्पतालों की भूमिका अहम है कि पर्यावरण के हत्यारों की। यों यह तो निर्विवाद रूप से कहा ही जा सकता है कि भूमिका दोनों की है। कम या ज्यादा का निर्णय विषय के विद्वानों पर छोड़ना उचित है। कौन कहे, यह करते-करते कुछ ऊपरवाले को प्यारे हो जाएँ? क्या पता, उनका निष्कर्ष आते-आते कई डॉक्टर, पर्यावरण विशेषज्ञ भी स्वर्ग या नर्क सिधारें? विद्वानों की यही विशेषता है। जबतक वह अंतहीन बहसों के नतीजों पर पहुँचते हैं, कई सूरज डूब चुके होते हैं। ये कईयों का अनुभव है कि मौसम का प्रहार झेलने में ज्यादातर गरीब असमर्थ हैं। यों अब तक अपने सुनने में नहीं आया कि फलाना समृद्ध बाढ़ में डूब गया या ढिकाना लू की चपेट में आ गया, अथवा कोई सर्दी खाकर, चल बसा। गरीबी हटाने का निश्चय तो इंदिराजी ने किया था। लगता है कि उसके पहले से प्रकृति, गरीबों को हटाकर, इस शुभ कार्य में लगी है। जब गरीब ही नहीं रहेंगे तो गरीबी को हटना ही हटना? राजनेता, कई वादे अनजाने ही कर जाते हैं, जहाँ उन्हें निभाने में कुदरत भी उनकी मददगार है। उनके उत्तराधिकारी यह श्रेय तो ले ही सकते हैं कि उनके शासन-काल में गरीबी हटी न हटी हो, पर कम तो जरूर हुई है। जाने उनके वंशज इस बारे में चुप क्यों हैं?

यों बाजार, सड़क, चौराहे, रेल के स्टेशन या एयरपोर्ट पर भीड़ में कोई कमी नहीं आई है। रेलवे स्टेशन की भीड़ तो पल्ले पड़ती है कि निर्धन रोजगार की तलाश में जा-आ रहे हैं। पर हवाई अड्डों की में अभी भी, हवाई चप्पलवालों का चलन नहीं है। वहाँ भीड़ क्यों लगी है? क्या यह भारत का नया उभरता मध्य वर्ग है या फिर सरकारी कर्मचारी अथवा नव-धनाढ्य, कहना कठिन है? यों हमे बताया गया है कि असली रईस अपने खुद के जहाजों से सफर करते हैं। कौन इन सामान्य इनसानों के संपर्क में आकर प्रदूषण का खतरा उठाए? क्या पता, यह कौन-कौन से रोगों के मौन वाहक हैं? कुछ नहीं तो उन्हें सामान्य होने की बीमारी ही लगा दें?

ऐसे कोरोना की विविधता का भी कोई मुकाबला नहीं है। नाम और रूप, बदल बदलकर लोगों को ठग रहा है। जो बच गए, वे भी जीवन-पर्यंत उसकी कोई निशानी से पीड़ित हैं। जो चले गए, वे रोते-बिलखते परिवार को पीछे छोड़ खुद तो अब हर सांसारिक झंझट से मुक्त हैं। कुछ कहते हैं कि वह दुनियावी मोह में पीपल के पेड़ पर टँगे हैं, कुछ धर्मशास्त्रियों का विचार है कि वह झींगुर या मेढक का रूप धरकर पास की किसी पोखर के शृंगार हैं। जितने ज्ञानी, उतने विचार। कौन जाने,

इसीलिए सच की खोज एक कठिन कर्म है। कुछ उसे स्वीकारने पर इतराते हैं, कुछ उसे नकारकर इठलाते हैं। देखने में आया है कि कोई उनके स्वयं के प्रामाणिक ग्रंथ की घटना का जिक्र भी कर दे तो यह धर्म का अपमान है। कुछ इसका सियासी फायदा उठाते हैं, दंगे ही नहीं भड़काते, अराजकता भी फैलाते हैं। यही वह अवसर है जब कट्टर धर्मगुरुओं की चाँदी है। वह दाढ़ी लहराते उपदेश देते हैं। अपना महत्त्व प्रदर्शित करते, अशिक्षित समर्थकों के भ्रम से भावना की चिनगारी सुलगाते हैं। "हम तो अमन-चैन की राह के मुसाफिर हैं, यह भड़काऊ नफरत की आग तो किसी घोर सांप्रदायिक दल ने लगाई है।" हमें तो कभी-कभी ताज्जुब होता है कि कैसे-कैसे घोर कट्टरपंथी भी आज 'सैक्युलर' कहलाते हैं। जातिवादी हो या धर्मवादी सबके सब अपनी सेक्युलर ठौर में सुरक्षित हैं। इतना ही नहीं, फल-फूल भी रहे हैं।

जनसंख्या-नियंत्रण का अब किसी को खयाल तक नहीं आता है जब से संजय गांधी के 'हम दो हमारे दो' का नारा चुनावी अलोकप्रियता में तब्दील हो चुका है। एकाध दशक से तो उसका भूला-भटका जिक्र तक नहीं है। कोई सोचे तो सच ही है। चुनाव जीतना सियासी दलों के अस्तित्व का प्रश्न है। वह क्यों ऐसे अलोकप्रिय मुद्दे उठाकर अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारें? इससे तो बेहतर है कि इतने ही प्रयास से वह खुद की जाति का आरक्षण बढ़वा लें? राष्ट्रीयहित और जन-कल्याण ऐसे शब्द सिर्फ सार्वजनिक मंच के भाषण के लिए सुरक्षित हैं। यह केवल गजदंती आदर्श हैं। कौन सा नेता ऐसा कालिदास है, जो इन पर अमल कर, अपनी सत्ता की संभावनाओं का अंत करे?

मिजाज सिर्फ मौसम का ही नहीं, इनसानों का भी बिगड़ा है। नहीं तो यह कैसे संभव है कि बजाय हिंदुस्तानी बनने के आजादी के आठवें दशक के कगार पर आकर ये पढ़े-लिखे जनगणना भी जातिगत आधार पर करवाएँ? क्या इनका इरादा उन पश्चिमी विचारकों को सत्य सिद्ध करना है, जो भारत को एक देश न कहकर, जातियों का झुंड निरूपित करते रहे हैं? हमें कभी-कभी शक होता है कि हमारे नेता वर्तमान आरक्षण से संतुष्ट नहीं हैं। उनका लक्ष्य और इरादा सौ फीसदी आरक्षण का है। यह न गरीबों का सोचते हैं, न निर्धनता उन्मूलन का। न एक समृद्ध और प्रतिष्ठित प्रजातंत्र का। इनके चिंतन और दृष्टिकोण की सुई सिर्फ भारत को जातियों का जनतंत्र बनाने पर अटक गई है। वह भी निजी हित-साधन और स्वार्थ के वशीभूत होकर। वह खुद पिछड़े हैं तो पिछड़ों के एक छत्र नेता बने रहें, चुनाव हो तो उनकी जीत में कोई संशय न रहे। उनका अपना भविष्य सुधरे, देश के भविष्य से उन्हें क्या लेना-देना? जैसे गांधी, पटेल, नेहरू ने देश को आजादी दिलवाई, वैसे ही कोई-न-कोई अवतारी पुरुष मुल्क को स्वस्थ लोकतंत्र भी बनाएगा। उनका इकलौता ध्येय अपनी कुरसी सुरक्षित रखना है और वह इस सीमित लक्ष्य को पाने को जी-जान से हर मुमकिन जुगाड़ में लगे हैं।

जहाँ भीड़ देखकर नेता को अपनी जीत और कुरसी के स्थायित्व का ध्यान आता है, वहीं कुछ को उन्नीसवीं सदी के अंग्रेज अर्थशास्त्री माल्थस का। उनका जनसंख्या का सिद्धांत था कि आबादी की तादाद अनाप-शनाप दर से बढ़ती है, वहीं खाद्यान्न की सीमित संख्या में। जाहिर है कि इससे भुखमरी, बीमारी भी अनियंत्रित रूप में फैले। हमें कभी-कभी संदेह होता है कि कही यह माल्थस की अवधारणा, वर्तमान भारत पर तो लागू नहीं है? बेरोजगारी, मुद्रास्फीति और महँगाई आकाशीय रुख अपनाए हुए हैं और लाइलाज होते जा रहे हैं। गनीमत है कि कहीं से भुखमरी के समाचार नहीं आ रहे हैं, पर यह भी कब तक? गरीबों का, पेट फ्री सरकारी राशन से फिलहाल भर रहा है। पर इसका 'प्रभु अनंत, हरि कथा, अनंता' होना तो मुमकिन नहीं है? मुफ्तखोरी को किसी दिन रुकना ही रुकना। न अर्थशास्त्र इसके पक्ष में है, न देश के सीमित संसाधन!

जनसंख्या-नियंत्रण का अब किसी को खयाल तक नहीं आता है जब से संजय गांधी के 'हम दो हमारे दो' का नारा चुनावी अलोकप्रियता में तब्दील हो चुका है। एकाध दशक से तो उसका भूला-भटका जिक्र तक नहीं है। कोई सोचे तो सच ही है। चुनाव जीतना सियासी दलों के अस्तित्व का प्रश्न है। वह क्यों ऐसे अलोकप्रिय मुद्दे उठाकर अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारें? इससे तो बेहतर है कि इतने ही प्रयास से वह खुद की जाति का आरक्षण बढ़वा लें? राष्ट्रीयहित और जन-कल्याण ऐसे शब्द सिर्फ सार्वजनिक मंच के भाषण के लिए सुरक्षित हैं। यह केवल गजदंती आदर्श हैं। कौन सा नेता ऐसा कालिदास है, जो इन पर अमल कर, अपनी सत्ता की संभावनाओं का अंत करे? नतीजतन, परिणाम सामने है। सब अपना उल्लू सीधा करने में जुटे हैं। अपने अलावा आज कोई समाज तक का नहीं सोचता है, देश और देश-हित का तो सवाल ही नहीं है। आबादी है, जो चक्रवर्ती ब्याज की दर से बढ़ रही है, तो बढ़ती रहे। माल्थस जाएँ भाड़ में। अधिकतर ने तो उनका नाम तक नहीं सुना है। उनके ऐसे विलायती सिद्धांतों का हमसे क्या लेना-देना? जब कभी जनसंख्या विस्फोट होगा तो होगा, वर्तमान में देश के सामने कोई कम संकट है, जो हम इस काल्पनिक खतरे से जूझें? यों भी तब जाने किस दल की सत्ता हो? जिसकी भी हो, वही निबटे। हमारे शासनकाल में इस मुद्दे पर समय नष्ट करने में क्या धरा है? कई राज्यों में चुनाव हैं। उन्हें जीतना है। फिर राष्ट्रीय चुनाव हैं। उसमें विपक्षी बड़बोलों को पराजित करना है। माल्थस के मुकाबले ये अधिक महत्त्वपूर्ण मुद्दे हैं। इनका इलाज जरूरी है, बजाय जनसंख्या नियंत्रण जैसे भविष्य के प्रश्नों के। कौन जाने, तब तक ऊपरवाला कोई कोरोना जैसी महामारी न भेज दे? यह एक ऐसी विनाशक उपलब्धि है, जो सिर्फ चीन की वुहान प्रयोगशाला या वहाँ के किसी चमगादड़ के लिए ही संभव है। यदि ऐसा हुआ तो न रहेगा बाँस न बजेगी बाँसुरी।

एक जमाना था कि हमें और हमारे ऐसे कइयों को विश्वास था कि हर दल के अपने-अपने सिद्धांत और उसूल हैं। वह उन्हीं के अनुसार चुनाव लड़ते और शासन में आए, तो सरकार चलाते हैं। अब हमें कोई भ्रम नहीं है। अतीत का मोह-भंग हो चुका है। सियासी दलों का एकमात्र लक्ष्य सत्ता में आना है। दीगर है कि उसके बाद वह जनसेवा के स्वघोषित मिशन में लगें। पर कई बार का सामूहिक अनुभव है कि जनकल्याण केवल दिखाने के हाथी-दाँत हैं, न वह चबाने के हैं, न खाने के। हर दल का सीमित ध्येय अपनी और समर्थकों की जेबें भरना है। संघर्ष के दिनों में इन्हीं ने तो साथ और सहारा दिया है। सच है कि नेता कतई स्वार्थ-प्रेरित हैं, पर इतने अहसान-फरामोश भी नहीं कि सब भूलें। फिर भविष्य में भी तो इनकी जरूरत पड़ेगी। उसका भी ख्याल रखना है। यों भी कौन उनकी निजी जेब लुट रही है। जो जा रहा है, वह जनता से एकत्र टैक्स का ही पैसा है। इससे मित्रों और समर्थकों का ही कल्याण नहीं हो रहा है, नेता तथा उनके परिवार के कोष में भी नाम से, नहीं तो बेनामी दौलत, जुड़ रही है। यह पारस्परिक कल्याण भी दूसरों के साथ, अपनी खुद की कमाई का एक बड़ा कारण भी है।

इस पारस्परिक हित-साधन के अलावा जनहित के कुछ काम भी वोटरों की संतुष्टि के लिए करने ही पड़ते हैं। नहीं तो भविष्य में उन्हें कौन वोट देगा? दीगर है कि वह इस क्षेत्र में तिल का ताड़ बनाएँ। करें रत्तीभर और मनभर का प्रदर्शन करें। जो यह न करे, वह नेता कैसा? अतिशयोक्ति अलंकार खुद की उपलब्धियों और जन-सेवा का, उनकी स्वाभाविक का सामान्य आदत है। यह ऐसा नियम है, जो हर नेता पर बिना किसी अपवाद के लागू है। वह जानते हैं कि सबसे अधिक वोट पिछड़ों और गरीबों के हैं। इनको लुभाने और पटाने को आकर्षक योजनाएँ बनती हैं। भारत एक कृषि-प्रधान देश है। यही कारण है कि किसानों की भलाई सबका एजेंडा है। कोई भी दल ऐसा नहीं है जो अपने किसान-लगाव का सार्वजनिक प्रदर्शन न करे। वह भी जिनका गाँव से कोई भी ताल्लुक नहीं रहा है और वह भी जो गाँवों से जुड़े हैं। देखने में आया है कि पूरी तरह से शहरों से संबंध रखनेवाले, गाँवों की सबसे अधिक बात करते हैं। ग्राम-कल्याण की हवाई योजनाएँ बनाने में उनकी सानी नहीं है, ठीक वैसे ही जैसे गरीबी हटाओ की हुंकार भी वही भरते हैं जिनका निर्धनता से दूर-दूर तक का वास्ता नहीं है। उन्होंने बचपन से शाही जीवन बिताया है। अब तो सबकी राजगद्दी छिन गई है वर्ना राजा-महाराजाओं के युवराज भी उनका क्या मुकाबला करते? उनके मुँह से गरीब और अभाव-ग्रस्त की व्यथा-कथा सुनकर हँसी आना स्वाभाविक है। पर इधर मौसम के असर से कोई अछूता नहीं है। अब जैसे हँसना मना है।

गरमी ने जुल्म ढाया है तो जाड़ा क्यों बाज आए? जाड़ा ऐसा जोरदार है कि अपने वजन के बराबर पुलोवर-कोट लादे लोग भी घर से निकलकर कँपकँपा रहे हैं। फिर उनका क्या कहना, जो दहेज के ऐसे पुराने कोट-पैंट में सजे हैं, जिनमें समय के साथ छेद हो गए हैं। इनके अलावा कुछ ऐसे भी हैं, जिन्हें कोट-पुलोवर की विलासिता ही उपलब्ध नहीं है। उनमें से कई ऐसे भी हैं, जो बीनकर लाई लकड़ी का अलाव जलाकर भी ठंडे पड़े जा रहे हैं। ऐसों पर शीत-लहर का दुष्प्रभाव सबसे अधिक है। ऐसा नहीं है कि सरकार ने इनके लिए कुछ किया ही नहीं है। प्रधानमंत्री आवास योजना ने बहुतों का भला किया है। पर इस श्रेणी में यह अत्यधिक गरीब नहीं आते हैं। गाँव छोड़कर आने के बाद यह दिन में रिक्शा चलाते या मेहनत-मजदूरी करते हैं और रात को पार्क की बेंच पर सो जाते हैं। अब तो ऐसा जाड़ा है कि इसकी कल्पना से ही बदन ठंडा पड़े।

इनके लिए सरकार की रैनबसेरे की व्यवस्था है। चद्दरें, गद्दे, तकिया, कंबल आदि का उसमें प्रावधान है। मंत्रीजी ने जब इसका उद्घाटन किया था, तब के फोटू हमने देखे हैं। अच्छा खासा ठंड से बचने का सामान उसमें देखकर रश्क हो कि रैन बसेरा घर से भी बेहतर है। सुंदर, आकर्षक और सुविधाजनक। इसका क्या करें कि यह व्यवस्था केवल उद्घाटन समारोह तक ही है। अन्यथा, यह अल्पजीवी है। अधिकारी-कर्मचारियों को भी इसका लाभ उठाना है। यह सामान आया ही इसीलिए था कि उनके घरों के शयनकक्ष को सुशोभित करे। जो फोटो लिये गए हैं, वह प्रचार सामग्री है। यदि रैन-बसेरे ऐसे ही सजे होते तो उन्हें छोड़ता कौन? शहर में प्रतियोगिता हो जाती—उनमें रात बिताने की। कुछ सिफारिश करवाते, मंत्रियों से, तब जाकर प्रवेश मिलता। वह तो अफसरों का शुक्र है कि रैन-बसेरे केवल काम चलाऊ हैं। रात बिताकर कोई भी वहाँ से भागना चाहे। फिर भी सर्दी से बचने का उपयोगी साधन तो है ही। कइयों के जीवन का सहारा है रैन-बसेरा, वरना इस ठिठुरते मौसम में बेघर गरीब की प्राणरक्षा कौन करता? सरकार अपने कल्याण-कार्यों का ढिंढोरा पीटती है। अखबार, टी.वी. उनके गुण गाते हैं, पर सच्चाई यह है कि यदि उनमें से दस-बीस फीसदी भी जमीन पर उतरे तो गरीबों के लिए यही बड़ी राहत है।

हिंदी की लोकप्रियता का प्रमाण उसके शोधार्थियों और उनके गाइड की संख्या है। एक गाइड तो दो सौ से अधिक लोगों को पी-एच.डी. दिलाकर उनका कल्याण कर चुके हैं। उनके शोधार्थी उन्हें विवश करते हैं कि घर के काम-काज के लिए कोई मददगार वगैरह न रखें, वरना शोधार्थियों का अपमान होगा। उनके रहते और किसी की क्या दरकार है? गाइड ने इधर मौसम पर कृपा की है। उनका हालिया विषय 'तेज-तर्रार मौसम और मृतकों की संख्या' है। कोई जिज्ञासा जताए कि इसका साहित्य से क्या लेना-देना है तो उनका उत्तर है कि "सकल जीवन का प्रतिनिधित्व साहित्य करता है। दिवंगत लोगों में कई उदीयमान कवि, लेखक, कहानीकार व उपन्यासकार शरीक थे। उनकी प्रतिभा का पाठकों को पता लग पाता, इसके पहले ही वह मौसम की मार के शिकार हो गए। इस शोध के माध्यम से हम इन सबको श्रद्धांजलि दे रहे हैं।"

हमें भी उनकी शोध का उत्सुकता से इंतजार है। कम-से-कम यह तो ज्ञात हो कि गरमी, बरसात, जाड़े के कारण कितने निर्धन नागरिक शहीद होते हैं?

९/५, राणा प्रताप मार्ग, लखनऊ-२२६००१
दूरभाष : ९४१५३४८४३८

गजलें

• रैणु हुसैन

सुपरिचित कवियित्री एवं शिक्षिका। कई गैर-सरकारी संगठनों के माध्यम से समाज सेवा में कार्यरत। 'पानी प्यार' एवं 'जैसे' (कविता-संग्रह), 'गुंटी' (कहानी-संग्रह) प्रकाशित। संप्रति सरकारी स्कूल नेताजी नगर सर्वोदय विद्यालय में अंग्रेजी की शिक्षिका।

एक

दिल ए नादान है तेरा गाम कहाँ,
ज़िंदगी का तिरे मुक़ाम कहाँ।

ज़िंदगी में ज़रा सुकूँ के लिए,
दिल ए नादाँ को है आराम कहाँ।

रूह इक दिन तो छोड़ जाएगी,
है मगर रूह का एहतराम कहाँ।

दिल की तासीर पढ़ सके जो अब,
मिलते हैं ऐसे हम कलाम कहाँ।

तीरगी दिल की कर सके रोशन,
अब ऐसे ही चराग ओ बाम कहाँ।

अंजुमन तर्बियत से है ख़ाली,
अब मुसाफ़े कहाँ सलाम कहाँ।

इत्र में पैराहन तो डूबा है,
साफ़गोई को भी हमाम कहाँ।

इक इशारे पे छोड़ दे दुनिया,
आज मिलते हैं ऐसे राम कहाँ।

अब सदाएँ भी लौट आती हैं,
रेणु भेजोगी तुम पयाम कहाँ।

दो

मेरी क़िस्मत सँवरने सी लगी है,
कि बिगड़ी बात जैसे बन रही है।

मेरी पेशानी पे जितनी शिकन थी,
तेरी चौखट पे आकर के लगी है।

मैं जबसे चल रही हूँ सिम्त तेरे,
मेरी राहों में तबसे रोशनी है।

सुनी जाती हैं सबकी ही सदाएँ,
ख़ुदा का घर है ये, ये सरजमीं है।

ये मंज़र शौक़ का क्या ही बयाँ हो,
सितारों से भी अच्छी ये गली है।

मुक़र्रर माँगती हूँ ये नज़ारा,
नज़र की बढ़ती जाती तिशनगी है।

दिखाई दे रही है हर तरफ अब,
मुझे बस आपकी मौजूदगी है।

ये साँसें चल रहीं जैसे तराने,
तेरे ही दम तो ये मौसिक़ी है।

हज़ारों ख्वाहिशें हैं इल्तजा में,
मगर नायाब सबसे आशिक़ी है।

अकीदत रेणु रखती है ख़ुदा पर,
वही दाता है वो ही तो सख़ी है।

तीन

फ़िज़ा में रंग सा भरने लगा है,
मुहब्बत का असर अब हो रहा है।

मुहब्बत हो गई है जिससे मुझको,
मेरा सब कुछ उसी का हो गया है।

कहाँ से आ रही है जाने ख़ुशबू,
हवाओं का मकाँ किसको पता है।

मेरी आँखों मे है तसवीर उसकी,
मुझे हर सिम्त वो ही दिख रहा है।

बहारें लौट आई हैं चमन में,
ये शायद उसके आने का पता है।

बहाना रोज़ मिलने का बनाकर,
बहुत नज़दीक मेरे आ गया है।

मैं उससे मिल नहीं पाती हूँ जिस दिन,
मुझे वो दिन लगे जैसे सज़ा है।

मेरा दीवानगी का है ये आलम,
उसे दिल नींद में भी सोचता है।

है ऐसी अनबुझी सी प्यास रेनू,
जिसे सावन ने भी प्यासा रखा है।

१५ साउथ ऐवेन्यू
नई दिल्ली-११००११
दूरभाष : ९८९९००१०६६

मेरे आदर्श शिक्षक : मातादीन शर्मा

● भैरूँलाल गर्ग

मुझे प्रारंभिक शिक्षा से लेकर विश्वविद्यालयी शिक्षा के दौरान कई शिक्षकों का आत्मीय स्नेह और सहयोग मिला और जो कुछ आज हूँ, वह सब उन श्रद्धेय शिक्षकों की समुचित शिक्षा के परिणामस्वरूप ही। यह बात निश्चित है कि प्रारंभिक शिक्षा के समय जिन शिक्षकों का सान्निध्य मिलता है, उनका प्रभाव छात्र पर सर्वाधिक पड़ता है। आगे की कक्षाओं के अध्ययन के समय बहुत कुछ परिवर्तन आ जाता है। छात्र और शिक्षक के मध्य इतने आत्मीय संबंध नहीं बन पाते हैं। आरंभिक शिक्षा के समय छात्र अध्ययन की दृष्टि से अपने शिक्षकों पर ही अधिक निर्भर रहता है, अत: वहाँ पारस्परिक आत्मीयता भी अपेक्षाकृत अधिक होती है। हर व्यक्ति के प्रारंभिक अध्ययनकाल में कुछ शिक्षक ऐसे भी होते हैं, जिनसे वह सर्वाधिक प्रभावित होता है और वे सदा के लिए उसकी स्मृतियों में बस जाते हैं। ऐसे ही मेरी प्रारंभिक शिक्षा के शिक्षक हैं श्री मातादीन शर्मा, जो आज भी मेरी ही नहीं, मेरे पूरे गाँव की स्मृतियों में बसे हैं।

यद्यपि मुझे उनके सान्निध्य में शिक्षा ग्रहण करने का एक ही वर्ष मिला, लेकिन उनसे मैं इतना प्रभावित हुआ कि जब मैं आज उनकी तुलना अन्य शिक्षकों के बारे में विचार करता हूँ तो शीर्ष पर श्री मातादीन शर्माजी ही दिखाई पड़ते हैं। वे मेरे आरंभिक शिक्षक ही नहीं अपितु मेरे आदर्श शिक्षक हैं। यों विधिवत् उनके शिक्षण का काल मेरे लिए एक वर्ष का ही रहा, लेकिन प्रकारांतर से उनका सान्निध्य थोड़ा-बहुत पूरे सात वर्ष तक मिलता रहा। वे जुलाई सन् १९६२ में हमारे गाँव सोडार (जिला भीलवाड़ा) के प्राथमिक विद्यालय में नियुक्त हुए और जुलाई सन् १९६९ में उनका स्थानांतरण अन्यत्र हो गया। मैं पहली कक्षा से पाँचवीं तक अपने गाँव के प्राथमिक विद्यालय में पढ़ा, लेकिन बाद में छठी से आठवीं तक की पढ़ाई पास ही के कालियास गाँव के मिडिल स्कूल में की, पर गाँव से प्रतिदिन आना-जाना रहा। बाद में हाई स्कूल की पढ़ाई के लिए मैं अन्यत्र चला गया, लेकिन गाँव आना-जाना बराबर बना रहा। इस तरह उनके सान्निध्य का लाभ मुझे लंबे समय तक मिलता रहा। ऐसे शिक्षक का हमारे गाँव के विद्यालय में आना केवल सुखद संयोग ही नहीं अपितु एक वरदान ही था। अपने गाँव से लगभग ५०० कि.मी. की दूरी और छोटे से गाँव में एक अध्यापक की नौकरी विषम परिस्थितियाँ आज से लगभग ५५ वर्ष पूर्व आने-जाने और संचार के अपर्याप्त साधन, सामान्य चिट्ठियों से ही घर के हाल-चाल पता किए जा सकते थे। एक चिट्ठी के आने और जाने में कम-से-कम १५ दिन लगते थे, ऐसी स्थिति में नौकरी कर पाना बड़ा दूभर

सुपरिचित लेखक। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में शोध/आलोचना, संस्मरण, बाल साहित्य आदि रचनाएँ प्रकाशित। 'बालवाटिका' मासिक के संस्थापक संपादक। 'बाल साहित्य भारती' सहित अनेक सम्मानों से सम्मानित।

था। लेकिन यह संयोग कैसे बना, यह पूछने पर श्री शर्माजी ने बताया था कि जब वे अपने गाँव भूपसेड़ा से पाँचवीं तक की, बानसूर से आठवीं तक की और अपने ननिहाल काँसली से दसवीं की पढ़ाई कर चुके तो पिताजी ने कहा कि अब पढ़ाई तो हो गई, कोई नौकरी की तलाश करो। उस समय मैट्रिक की पढ़ाई भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं मानी जाती थी। और फिर किसी छोटे से गाँव का लड़का मैट्रिक पास कर ले तो समूचे परिवार के लिए ही नहीं, गाँवभर के लिए भी यह गर्व की बात मानी जाती थी। सन् १९५७ में वे १०वीं पास कर चुके थे। नौकरी की तलाश में थे, तभी राजस्थान सरकार के स्वास्थ्य एवं स्वायत्त मंत्री श्री बद्रीप्रसाद गुप्ता दिसंबर सन् १९५८ में बानसूर में टेलीफोन सेवा का उद्घाटन करने आए।

उद्घाटन के पश्चात् श्री शर्माजी और उनके साथी ने, जो आठवीं पास था, मंत्री महोदय से नौकरी दिलवाने के लिए निवेदन किया। मंत्रीजी ने आश्वस्त किया और जयपुर आकर मिलने को कहा। दोनों ही दूसरे दिन जयपुर पहुँच गए और मंत्री महोदय से मिले। मंत्री महोदय ने बड़ी उदारतापूर्वक इनकी योग्यता आदि के बारे में पूछकर सचिव से डी.ओ. लैटर लिखवा दिए। श्री शर्माजी को 'डिप्टी डायरेक्टर एजूकेशन जोधपुर' से मिलने को कहा और चूँकि इनका साथी कम पढ़ा था, इसलिए उसे 'ग्राम-सेवक' पद पर लगाने के लिए भरतपुर भेज दिया।

श्री मातादीन शर्मा जब जोधपुर पहुँचे तो एक ही दिन में इन्हें हाथो-हाथ ओशियाँ के निकट थोब गाँव के प्राथमिक विद्यालय हेतु नियुक्ति-पत्र दे दिया गया। गाँव से इतनी लंबी दूरी, पानी का अभाव, खाने में केवल बाजरा—इन सबसे शर्माजी को बड़ी कठिनाई हुई, लेकिन धैर्य रखा। कुछ ही दिनों में इनका स्थानांतरण बाहरा खुर्द में हो गया। वह गाँव बड़ा भी था, पानी की भी यहाँ समस्या नहीं थी। लेकिन गाँव से दूरी तो ज्यों-की-त्यों बनी हुई थी। उन्हीं दिनों २-१०-१९५९ को तत्कालीन प्रधानमंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू ने शासन का विकेंद्रीकरण करते हुए प्राथमिक शिक्षा को पंचायत समिति को सौंप दिया। इसलिए इन्हें गाँव

के पास पहुँचने की आशा जगी। उधर बाजरे का खाना और रेगिस्तानी वातावरण की प्रतिकूलताएँ भी ज्यों-की-त्यों थीं। इनका मन उचट गया। ये दीपावली की छुट्टियों में गाँव आए और पंचायत समिति बानसूर में एक नए विद्यालय में नियुक्त हो गए।

लेकिन अभी नौकरी के पक्का होने की प्रक्रिया तो बाकी थी। जब बी.एस.टी.सी. के लिए आवेदन-पत्र भरे जाने लगे तो इन्होंने भी यह प्रक्रिया पूरी की। संयोग से इनको मिला बदनोर। बदनोर भीलवाड़ा जिले में है। यहाँ से बी.एस.टी.सी. करने लगे। उन दिनों यह नियम था कि जिस जिले की संस्था से प्रशिक्षण लिया है, वहीं पर नियुक्ति होगी। सोडार ग्राम भीलवाड़ा जिलांतर्गत है, संयोग से इसी गाँव में इनकी नियुक्ति हुई और इस तरह सोडार ग्राम के प्राथमिक विद्यालय को दूसरा लेकिन एक आदर्श शिक्षक मिला। इस विद्यालय में पूर्व में जो शिक्षक थे, एक तो विद्यालय में अकेले शिक्षक पूरी पाँच कक्षाओं पर और दूसरा यह कि प्रतिदिन अपने गाँव आना-जाना। भला ऐसे में वे विद्यालय और छात्रों पर कैसे ध्यान दे सकते थे? इसलिए दो शिक्षक होना तो आवश्यक था, लेकिन इस बात का अधिक लाभ छात्रों को जितना मिलना चाहिए था, नहीं मिला। लेकिन श्री शर्माजी का समर्पण ही कहा जाएगा कि उन्होंने पूरे मनोयोग से छात्रों और विद्यालय को तो सँभाला ही, अन्य दायित्वों का निर्वाह भी पूरी निष्ठा से किया। जुलाई सन् १९६२ में उन्होंने प्राथमिक विद्यालय सोडार में कार्यभार ग्रहण किया था।

उस सत्र में मैं कक्षा पाँच का विद्यार्थी था। ग्रीष्मावकाश के बाद विद्यालय खुले कुछ ही दिन हुए थे। एक दिन विद्यालय गए तो पता चला कि एक नए मास्टर साहब और आए हैं। यह समाचार सुनते ही हम सभी छात्रों में कुतूहल जगा कि पता नहीं ये मास्टर साहब कैसे होंगे? पहलेवाले मास्टर साहब श्री देवचंदजी पारीक को तो इस विद्यालय में अब तक पाँच वर्ष हो चुके थे। इसलिए उनकी प्रकृति-व्यवहार से हम भली-भाँति परिचित हो चुके थे। प्रार्थना सभा में श्री देवीचंदजी ने इन नए मास्टर साहब श्री मातादीनजी शर्मा का परिचय कराया, उन्हें बधाई और शुभकामनाएँ दीं। बाद में श्री मातादीनजी शर्मा ने छात्रों को संबोधित किया। उन्होंने हमें आश्वस्त करते हुए कहा कि अब इस विद्यालय में दो शिक्षक हो गए हैं, इसलिए आप लोगों की पढ़ाई तो सुचारु रूप से होगी ही, खेल-कूद एवं सांस्कृतिक गतिविधियाँ भी यथासमय संपन्न करने का हम पूरा प्रयास करेंगे। बस फिर क्या था, दूसरे ही दिन से सारा माहौल बदल गया। प्रार्थना सभा में शिक्षक उद्‌बोधन, बारी-बारी से छात्रों द्वारा कुछ-न-कुछ सुनाना और सामूहिक रूप से पी.टी. का कार्यक्रम। छात्रों को तो आनंद आ गया। इतना सबकुछ पहली बार जो हुआ था।

कुछ ही दिनों बाद पंद्रह अगस्त आनेवाला था। कई दिन पहले ही श्री शर्माजी ने हमें तैयारी करवाना शुरू कर दिया था। पी.टी., प्रभात फेरी के लिए प्रयाण गीत, ध्वजारोहण के समय राष्ट्रगान, रात्रि में होनेवाले सांस्कृतिक कार्यक्रम आदि की जमकर तैयारी करवाई। विद्यालय में जैसा स्वाधीनता दिवस समारोह इस बार मनाया गया, वह अपने आप में अनूठा था। ग्रामीणजन इस बार जितनी संख्या में विद्यालय में आए, उतने कभी नहीं आए थे। तत्कालीन सरपंच श्री जानकीलालजी राठी ने ध्वजारोहण किया और अपने उद्‌बोधन में श्री मातादीनजी शर्मा की इस अवसर की तैयारी के लिए भूरि-भूरि प्रशंसा की। दिनभर खेलकूद आदि गतिविधियाँ हुईं। रात्रि में गैर का चौक में गीत-संगीत एवं एकांकी मंचन आदि कार्यक्रम हुए। इस बार पंद्रह अगस्त का आयोजन देखकर गाँववाले भी दंग रह गए।

उस सत्र में श्री मातादीनजी शर्मा ने विद्यालय में अध्यापन के अतिरिक्त कई गतिविधियों का भी संचालन किया। पहली बार विद्यालय में एक उपभोक्ता भंडार खोला गया, जिसके सदस्य विद्यालय के विद्यार्थी ही थे। सहकारिता के आधार पर गठित यह उपभोक्ता भंडार खूब चला। इसमें छात्रोपयोगी स्टेशनरी एवं खेलकूद संबधी वस्तुएँ विक्रय के लिए उपलब्ध करवाई गईं। ये वस्तुएँ भीलवाड़ा से स्वयं शर्माजी खरीदकर लाते थे। उस समय हमारे गाँव में स्टेशनरी की कोई दुकान नहीं हुआ करती थी। इस उपभोक्ता भंडार की संचालन समिति का अध्यक्ष मुझे और कोषाध्यक्ष मेरे साथी श्री बंशीलाल सेन को बनाया गया।

इसके अतिरिक्त शर्माजी ने हमें निवार बनाना, हथकरघा पर सूत कातना, खजूर के पिच्छों से चटाई बनाना, फटे-पुराने कपड़े और दर्जी के यहाँ की कतरनों में बचे-खुचे कपड़े आदि से गलीचे, दरियाँ बनाना सिखाया। हमारी हस्तलिपि (लिखावट) सुधार के लिए भी उन्होंने बहुत प्रयास किए। उसमें कलम से सुलेख लिखना विशेष महत्त्वपूर्ण था। इसी के साथ होल्डर से नकल करने पर जोर देकर हमें पढ़ना-लिखना और शुद्ध उच्चारण का विशेष रूप से ज्ञान कराया। उनकी गीत-संगीत में विशेष रुचि थी। उनके पास 'मेरा संग्रह' नाम से प्रयाण गीत और हाथ से लिखे भजनों का बहुत बड़ा संकलन था। हम सभी पाँचवीं कक्षा के विद्यार्थियों को इसे बारी-बारी से देकर लिखवाया गया। इस संग्रह के गीत, भजन आदि को हम विशेष अवसरों पर गाने लगे थे। इसी संग्रह का एक भजन 'म्हानैं अबके बचाले म्हारी माय, बटाऊ आयौ लेबाने' गैर के चौक में हो रही एक भजन संध्या में मैंने और सोहनलाल दमामी ने साथ ही प्रस्तुत किया तो सुनकर गोस्वामी श्री शंकर गिरीजी के मुँह से बरबस निकला, 'अरे कई कोयलियाँ बोली रै।' इस सुमधुर भजन की प्रस्तुति से उपस्थित जन समुदाय वाह-वाह कर उठा।

इस सत्र में एक शिक्षक और आ जाने से विद्यालय में शिक्षकों की संख्या तीन हो गई थी। उस समय हुरड़ा पंचायत समिति में आजाद साहब प्रधान थे। वे निरीक्षण पर आते ही रहते थे। जब विद्यालय की गतिविधियाँ, अध्यापन एवं खेलकूद आदि को देखा तो उन्होंने इस सत्र में पंचायत समिति का टूर्नामेंट यहाँ करने का दायित्व विद्यालय को दे दिया। श्री शर्माजी तो ऐसा चाहते ही थे, बस जुट गए तैयारी में। उस समय श्री देवचंद्रजी पारीक (रूपाहेली कलाँ) प्रधानाध्यापक थे। उन्होंने अपने चचेरे भाई श्री काशीलालजी शर्मा से टूर्नामेंट की तैयारी के लिए आग्रह किया तो वे भी तैयार हो गए। वे उन दिनों कँवलियास के प्राथमिक विद्यालय से छुट्टी के बाद साइकिल से सोडार आते और मनोयोग से तैयारी में जुट जाते। लगभग एक माह तक उन्होंने इस टूर्नामेंट की तैयारी-आयोजन में सहयोग किया। उन दिनों हुरड़ा पंचायत समिति के सभी पंचायत मुख्यालयों पर प्राथमिक विद्यालय (पाँचवीं कक्षा तक) ही हुआ करते थे, किसी बड़े गाँव अथवा कस्बे में ही मुश्किल से मिडिल स्कूल

(आठवीं कक्षा तक) होता था। इस टूर्नामेंट में कई टीमें आईं। यह पहला ही टूर्नामेंट था हमारे गाँव में, लेकिन बड़ी भव्यता और सफलता के साथ संपन्न हुआ। आज भी गाँव के बड़े-बुजुर्ग उस टूर्नामेंट को याद करते हैं। उसमें सर्वाधिक सक्रिय भूमिका श्री मातादीनजी शर्मा की रही।

गाँव में सार्वजनिक हित का कोई काम हो, श्री मातादीनजी शर्मा उसमें सदैव आगे रहे। वर्षा के दिनों में अगर धर्मी तालाब के टूटने की आशंका हुई तो वहाँ गाँव के युवा और छात्रों की फौज लेकर पहुँच गए और मिट्टी आदि डलवाकार उस आशंका को निर्मूल किया। विद्यालय के निर्माण कार्य में भी सदैव आगे रहे। उन दिनों विद्यालयों में छात्रों के लिए अमेरिकन आटा और दूध पाउडर आया करता था। इस योजना का भी उन्होंने सफल संचालन किया। हम छात्रों को आज भी उन पकौड़ों का स्वाद याद है, जिन्हें हम गरमागरम ही खाया करते थे। दूध तो भरपेट पिया करते थे।

सरकारी योजनाओं की क्रियान्विति में भी श्री शर्माजी ने सक्रिय रूप से भाग लिया। उन दिनों गाँव में प्रौढ़ शिक्षा केंद्र संचालन की बात आई तो यह दायित्व श्री शर्माजी ने उठाया और कई वर्षों तक केंद्र का सफलतापूर्वक संचालन किया। उन दिनों गाँव में बिजली नहीं थी। लालटेन के उजाले में बैठकर कई प्रौढ़ ग्रामीणों ने पढ़ना-लिखना सीखा। आज भी कई बुजुर्ग लोग उस रात्रि पाठशाला की चर्चा यदा-कदा किया करते हैं। इसी के साथ गाँव में तीज-त्योहारों, ब्रह्मभोज, रामधुन, प्रभातफेरी, भजन संध्या आदि के अवसर पर जो कार्यक्रम और गतिविधियाँ होती थीं, उनमें भी वे बड़े उत्साह से भाग लिया करते थे।

सन् १९६२-६३ के सत्र में छात्रसंघ का चुनाव भी विद्यालय में उनके कारण ही विधिवत् और सफलतापूर्वक संपन्न हुआ। उस सत्र में मैं और श्री सोहनलाल दमामी अध्यक्ष पद हेतु प्रत्याशी थे। पूरा विद्यालय मुझे ही बिना चुनाव के सर्व सम्मति से छात्रसंघ अध्यक्ष चुनना चाहता था, लेकिन सोहनलाल नहीं माना और अंततः चुनावी प्रक्रिया संपन्न हुई। जैसा कि स्पष्ट था, मैं ही अध्यक्ष चुना गया। मैं उस समय पाँचवीं का छात्र था और सोहनलाल तीसरी कक्षा का। छात्रसंघ द्वारा भी पूरे सत्र श्री शर्माजी के निर्देशन में कई गतिविधियाँ संपन्न हुईं। इस वर्ष विद्यालय की छात्र संख्या भी अन्य वर्षों की तुलना में अधिक थी। छात्रों की नामांकन वृद्धि में भी श्री शर्माजी का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। घर-घर जाकर उन्होंने अभिभावकों से संपर्क किया और ६ से ११ साल के बालकों को विद्यालय में प्रवेश के लिए आग्रह किया। आस-पास के छोटे-छोटे गाँवों के बच्चों ने भी इस सत्र में काफी बड़ी संख्या में विद्यालय में प्रवेश लिया था। विद्यालय में हर शनिवार को प्रार्थना सभा के अतिरिक्त छात्र सभा में विविध कार्यक्रम सुचारू रूप से संचालित हुए। तिमाही, छमाही और वार्षिक परीक्षाओं में छात्रों ने बड़े उत्साह से भाग ही नहीं लिया, बल्कि उस वर्ष का परीक्षा-गपरिणाम भी पूर्व वर्षों से अपेक्षाकृत कई गुना श्रेष्ठ रहा। छात्रों का आत्मविश्वास बढ़ा और कई छात्रों ने तो आगे पढ़ने की भी योजना बनाई, अन्यथा पहले अधिकतर छात्र पाँचवीं कक्षा उत्तीर्ण करने के बाद अपने घरेलू अथवा कृषि कार्य में ही संलग्न हो जाते थे। उस समय हमारे गाँव के मुश्किल से दो-तीन लोग ही राजकीय सेवा में थे।

जब हमारी वार्षिक परीक्षाएँ हो चुकीं तो श्री शर्माजी ने हमारे शैक्षणिक भ्रमण के बारे में बताया। हम सब यह जानकर बहुत प्रसन्न हुए। शीघ्र ही चित्तौड़गढ़ यात्रा के लिए शैक्षणिक भ्रमण की योजना बन गई। उसमें प्रत्येक छात्र को एक दिन का खाना साथ लेने, एक दिन के खाने के लिए (आटा, दाल, घी, तेल आदि) सामग्री सहित दो रुपए नकद जमा कराने का निर्णय लिया गया। कक्षा तीन से पाँच तक के छात्र ही इस भ्रमण हेतु जा सकते थे। इन तीनों कक्षाओं के छात्रों की संख्या लगभग ५० थी, लेकिन मुश्किल से आठ छात्र ही तैयार हो सके, क्योंकि उन दिनों लोगों की आर्थिक स्थिति बहुत कमजोर थी। दो रुपया नकद जुटाना भी बहुत मुश्किल था। जानेवाले छात्रों में मैं, रामबख्श, अल्लाहबख्श, लक्ष्मीलाल राठी, मदनलाल शर्मा, मोहनलाल सुथार, रामलाल खाती और ओमप्रकाश, बस आठ छात्र ही तैयार हो पाए। लेकिन कार्यक्रम तय हो चुका था। २ मई, १९६३ को हम सभी लोग अपना-अपना सामान, खाद्य सामग्री आदि लेकर रवाना हुए। लेकिन मेरा मित्र बंशीलाल भी जाना तो चाह रहा था, लेकिन दो रुपए की व्यवस्था नहीं होने के अतिरिक्त पहनने के कपड़ों के अभाव के चलते नहीं जा पा रहा था। श्री मातादीनजी मास्टर साहब से जब मैंने यह बात बताई तो उन्होंने मुझे कहा कि तुम उसके घर जाकर उसे ले आओ। अगर अभी पैसे नहीं है तो कोई बात नहीं, बाद में ले लेंगे। यह जानकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई, मैं भी चाह रहा था कि वह हमारे साथ अवश्य जाए। हमारा दल गाँव से बाहर निकल चुका था लेकिन मैं और रामबख्श दौड़कर बंशीलाल के घर गए। उसके पिताजी तो घर पर नहीं थे, लेकिन उसकी माताजी को सारी बात बताई तो वह भेजने को तैयार हो गईं। इस तरह नौ छात्रों का यह दल पैदल ही सोडार से सरेरी रेलवे स्टेशन के लिए रवाना हुआ। सरेरी स्टेशन से हम लोग ग्यारह बजे की रेलगाड़ी से लगभग दो बजे चित्तौड़गढ़ पहुँचे। स्टेशन से ताँगे द्वारा हम सभी चित्तौड़गढ़ दुर्ग के लिए रवाना हुए। वहाँ बिड़ला धर्मशाला में ठहरे। शाम तक कुछ स्थलों का भ्रमण किया। दूसरे दिन दुर्ग के शेष दर्शनीय स्थल देखे। फतहप्रकाश महल में हम सभी का ग्रुप फोटो हुआ।

कालियास विद्यालय से आठवीं कक्षा उत्तीर्ण कर मैंने दसवीं कक्षा तक की पढ़ाई रूपाहेली कलाँ (जिला भीलवाड़ा) से की। पिताजी ने आगे पढ़ाने से मना कर दिया तो उस वर्ष घर पर ही रहा। लेकिन अगले वर्ष जुलाई १९६९ में गांधी विद्यालय, गुलाबपुरा में ग्यारहवीं कक्षा में प्रवेश लिया। मैं प्रवेश लेकर अपने गाँव आया तो यह समाचार सुनकर स्तब्ध रह गया कि श्री मातादीनजी मास्टर साहब का स्थानांतरण हो गया है और वे कल ही यहाँ से चले जाएँगे। जानकर मुझे बहुत दुःख हुआ। दूसरे दिन श्री शर्माजी को श्री देवचंदजी मास्टर साहब, श्री जानकीलालजी राठी, श्री देवीलालजी सुनार, श्री रामप्रसादजी राठी, श्री भवानीशंकरजी शर्मा

हम सभी नए-पुराने छात्रों, गाँव के स्त्री-पुरुषों द्वारा भावभीनी विदाई दी गई। उस दिन हर किसी की आँखें सजल थीं। लोगों के मन-मस्तिष्क में श्री मातादीनजी शर्मा द्वारा सोडार में बिताया गया सात वर्ष का कालखंड चलचित्र की भाँति गतिशील था। लोग बारी-बारी से उनके चरण-स्पर्श कर भावी जीवन के लिए मंगलकामनाएँ दे रहे थे। पूर्व दिशा में गाँव के बाहर भैंरूखेजड़ा तक गाँव के लोग और छात्र विदा करके लौट गए। गाँव के एक-दो लोग उनका सामान लेकर सरेरी के लिए पैदल रवाना हुए। मुझे भी गुलाबपुरा जाना था, सो मैं भी उनके साथ हो लिया। धापू बाई जो सोडार के चिकित्सा केंद्र में चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी थी, वह भी विजयनगर अपनी बहिन के यहाँ जानेवाली थी, सो वह भी साथ हो गई। इस तरह श्री मातादीनजी मास्टर साहब, मैं और धापूबाई तीनों भी अपना-अपना सामान लेकर सरेरी की ओर चल दिए।

उन दिनों सोडार-सरेरी के बीच सड़क नहीं बनी थी। आवागमन का कोई साधन नहीं था। उस साल वर्षा बहुत हुई थी, इसलिए उस रास्ते पर साइकिल से जाना भी संभव नहीं था। हम सभी लोग रेलगाड़ी के निर्धारित समय से पूर्व सरेरी स्टेशन पहुँच गए। सामान ले जानेवाले लोगों को तो लौटा दिया गया। अब हम तीनों ही रह गए थे। रेलगाड़ी आई, तीनों सामान्य श्रेणी के डिब्बे में चढ़ गए। हमें तो बस अब आधा घंटा ही मास्टर साहब के साथ रहना था। यही सब कुछ सोचते-सोचते मैं तो फूट-फूटकर रो पड़ा। मास्टर साहब और धापू बाई ने बहुत ढाढ़स बँधाया, पर मेरा रोना बंद नहीं हुआ। मैं विजयनगर तक रोता रहा। मास्टर साहब के चरण छुए, उन्होंने दोनों हाथों से मेरे गालों को पकड़कर चूमा, आशीर्वाद दिया।

सोडार से जाने के बाद श्री शर्माजी सन् १९७२ में हमारे गाँव आए। उस समय मैं बी.ए. ऑनर्स का तृतीय वर्ष का छात्र था। मेरी प्रगति देखकर वे बड़े प्रसन्न हुए थे। इसके बाद मैं जब कॉलेज व्याख्याता के पद पर भीलवाड़ा के मा.ला. वर्मा राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय में कार्यरत था, तब वे अपने सुपुत्र राजेंद्र के साथ सन् १९९७ में भीलवाड़ा आए, तब भी मिलना हुआ। अभी सितंबर २०१४ में वे अचानक अपने पौत्र और उसके मामा के लड़के के साथ कार से भीलवाड़ा आए। मुझे श्री शिवप्रसादजी सेन ने सूचित किया। उन सभी को मैंने अपने निवास पर बुला लिया, भोजन के उपरांत हम सभी चित्तौड़गढ़ चले गए। वहाँ हम दोनों की मई सन् १९६३ के शैक्षणिक भ्रमण की यादें ताजा हो गईं। दूसरे दिन मैं उन्हें अपने गाँव सोडार ले गया। वहाँ उनके परम आदरणीय ज्येष्ठ भ्रातातुल्य श्री जानकीलालजी राठी, परम मित्र श्री मोहनलालजी राठी, श्री भवानीशंकरजी शर्मा, श्री श्यामजी राठी एवं शिष्यगण सभी ने उनका आत्मीय स्वागत किया। बारी-बारी से सभी के यहाँ भोजन आदि से उनका स्वागत-सत्कार किया गया। एक दिन मैं उनको श्री मोहनलालजी राठी के साथ आसींद, सवाईभोज, मालासेरी, बंक्यारानी आदि के दर्शनार्थ ले गया। चार दिन कैसे गुजरे कि पता ही नहीं चला। इस प्रवास में वे अपने पुराने विद्यालय भवन भी गए, सोडार और केशरपुरा में घूम-घूमकर अपने विद्यार्थियों और ग्रामवासियों से मिले, उनकी कुशलक्षेम पूछी।

हमारे कुछ साथी रामबख्श, रामलाल शर्मा, लक्ष्मीलाल राठी, रामलाल खाती आदि को दिवंगत जान उन्हें बड़ा दु:ख हुआ। शिक्षक दिवस के दिन सोडार के गैर के चौक में पूर्व सरपंच श्री जानकीलालजी राठी, श्री श्यामजी राठी, श्री मोहनलालजी राठी मेरे साथी श्री बंशीलालजी, मोहनलालजी सुथार छोटे भाई गणपत और गाँव के गण्यमान्य लोगों ने श्री श्यामजी राठी की अगुवाई में श्री मातादीनजी शर्माजी का साफा बाँधकर, शॉल, श्रीफल, माल्यार्पण और स्मृतिचिह्न भेंट कर अत्यंत भावभीना सम्मान किया।

इसके छह महीने बाद ही मास्टर साहब फिर अचानक बिना सूचना दिए सोडार आ गए। संयोग से मैं उस दिन गाँव में ही था। वे श्री जानकीलालजी राठी के सुपुत्र श्री सुरेश के साथ घर आ गए। उन्होंने बताया कि मैं सोडार का ऋणी हूँ, अत: मेरी इच्छा यहाँ कुछ दिनों रामायण की कथा करवाने और सहभोज के आयोजन की है। आप लोग बताएँ कि यह कैसे संभव है? श्री जानकीलालजी ने राठी से भी इस बारे में विचार-विमर्श किया, लेकिन व्यवस्था संबंधी कठिनाइयों के कारण उनकी यह इच्छा पूरी न हो सकी। लेकिन आज भी मेरे और श्री जानकीलालजी राठी, श्री मदनलालजी राठी, श्री मोहनलालजी राठी, श्री भवानीशंकरजी, श्री बंशीलालजी सेन, श्री मोहनलालजी सुथार, श्री शिवप्रसादजी सेन, श्री सोहनलाल दमामी, श्री श्यामजी राठी आदि सहित गाँव के सभी लोगों और अपने शिष्यों के प्रति मास्टर साहब के मन में अपार स्नेह है। हाल ही में मुझे मिले उनके पत्र में उन्होंने लिखा कि मैं सोडार को आजीवन नहीं भूल सकता। एक बार जब वहाँ मैं १७ दिन तक टाइफाइड के कारण बीमार पड़ा, तब श्री जानकीलालजी राठी की माताजी, धापू बाई और राजी बाई बलाई ने मातृवत् जो मेरी सेवा-शुश्रूषा की, मैं उसे आज भी नहीं भूला हूँ। सोडार में बीता मेरा समय मेरी धरोहर है। साथ ही उन्होंने अपने सभी साथियों के नाम सहित उन्हें प्रणाम निवेदित किया और अपने कई शिष्यों को नाम सहित शुभ आशीष लिखा।

अलवर जिले की बानसूर तहसील के एक छोटे से ग्राम भूपसेड़ा में श्री रामचंद्रजी जांगिड़ ब्राह्मण के यहाँ चैत्र शुक्ला प्रतिपदा वि.सं. १९९७ को जनमे श्री मातादीनजी शर्मा आज भी अपने सुपुत्र श्री राजेंद्र के साथ अपने गाँव में ही निवास करते हैं। उनकी सादा जीवन, उच्च विचार की जीवन और विचार-शैली अनुकरणीय है। वे इस अवस्था में भी प्रात: चार बजे उठते हैं और चार कि.मी. पैदल घूमने जाते हैं। गीता, रामायण आदि ग्रंथों के साथ कल्याण, 'बालवाटिका' एवं समाजसेवी पत्र-पत्रिकाओं को अपने अध्ययन में शामिल किए हुए हैं।

सचमुच ऐसे शिक्षक बिरले ही होते हैं। मैं अपने ही नहीं, अपने सहपाठियों और उस कालखंड में उनसे शिक्षा प्राप्त सभी विद्यार्थियों की ओर से ऐसे आदर्श शिक्षक और अनुकरणीय व्यक्तित्व के धनी श्री मातादीनजी शर्मा को शत-शत प्रणाम निवेदित करता हूँ।

नंदभवन, शिवाजीनगर
भीलवाड़ा-३११००१ (राजस्थान)
दूरभाष : ९४१३२११९००

प्रकृति का देवता

• सुषमा मुनींद्र

पहिरे पीला जामा जोड़ा बने आज बनरा,
पियरिया सोहे न,
बसामन मामा तोंहरी देहिया पियरिया सोहे न।

इस लोकगीत के मर्म को समझने के लिए टमस नदी के किनारे बसे बसामन मामा धाम को समझना होगा।

हिंदू पुराण में टमस का बहुत महत्त्व है। यह तमसा कही जाती थी। भगवान् राम ने वन-गमन की पहली रात तमसा के तट पर बसे गाँव में व्यतीत की थी। मध्य प्रदेश के बघेलखंड अंचल के जनपद रीवा की तहसील सेमरिया के गाँव बसामन मामा का अध्यात्म और पर्यटन की दृष्टि से बहुत महत्त्व है। बसामन मामा रीवा से तीस किलोमीटर, सेमरिया से नौ किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। गाँव का वास्तविक नाम पूर्वा है, जिसे स्थानीय निवासी 'पुरवा' कहते थे। अब यह गाँव 'बसामन मामा' कहा जाता है। सघन जंगल में बसा गाँव प्रकृति से पूर्ण था। यहाँ के शासक राजा ठाकुर वैभवशाली गढ़ी में रहते थे। उनके पास अच्छे डील-डौल के हाथी थे। अनुचर चहुँ दिशाओं में हाथियों को चराने ले जाते। हाथियों को हरे पत्ते विशेष प्रिय होते हैं।

विधि का विधान था या राजा ठाकुर के विनाश की अलौकिक कथा लिखी जानी थी। अनुचर पूर्वा से चार किलोमीटर दूर बसे कुम्हरा गाँव में हाथियों को ले गए। यहाँ ब्रह्मदेव शुक्ल, जिन्हें बसामन भी कहा जाता था, जो आगे चलकर बसामन मामा के नाम से ख्यात हुए, विधवा माँ और बहन के साथ रहते थे। कुछ लोगों का मानना है, ब्रह्मदेव पांडेय थे। उनकी बहन शुक्ल परिवार में ब्याही थी। ब्रह्मदेव ने बचपन में ही ध्यान, साधना, योग सीख लिया था। ब्रह्मदेव को प्रकृति से अत्यल्त प्रेम था। वे जंगल को नष्ट करने का विरोध करते थे। अपने घर के सामने उन्नत खड़े पीपल वृक्ष को अपना ईष्ट मानते हुए नित्य पूजा-अर्चना करते थे। हिंदू पुराण में पीपल को पवित्र माना गया है। इसमें ब्रह्म का निवास माना जाता है। कृष्ण ने कहा था—वृक्षों में मैं पीपल हूँ। पीपल और तुलसी रात में भी ओषजन छोड़ते हैं। अनुचरों की दृष्टि ब्रह्मदेव के घर के सम्मुख उन्नत खड़े लहलहा रहे पीपल वृक्ष पर पड़ी। हाथियों को अन्य अनुचरों की देख-रेख में एक ओर खड़ा कर एक अनुचर कुल्हाड़ी लेकर पीपल पर चढ़ गया। टहनी पर पहला वार करता, इसके पूर्व ब्रह्मदेव वहाँ आ गए। पीपल पर चढ़े अनुचर को ललकारा—"पीपल को न काटना। इसमें मेरे प्राण बसते हैं।"

सुपरिचित लेखिका। अब तक दो उपन्यास एवं बारह कहानी-संग्रह प्रकाशित। कहानियों का मराठी, मलयालम, तेलुगु, कन्नड़, पंजाबी, अंग्रेजी, उर्दू, असमिया, गुजराती भाषाओं में अनुवाद। 'सुभद्रा कुमारी चौहान प्रादेशिक पुरस्कार', 'अखिल भारतीय मुक्तिबोध पुरस्कार' सहित अनेक पुरस्कारों से सम्मानित।

अनुचर ने उपहास किया, "तुम्हारे प्राण पीपल में नहीं, छाती में बसते होंगे।"

"मैं पीपल की नित्य पूजा करता हूँ। उतरो नीचे।"

"ये राजा ठाकुर के हाथी हैं। इन्हें पीपल की पत्तियाँ खिलाने लाया हूँ।"

"जो पीपल को काटेगा, मैं उसका सर्वनाश कर दूँगा।"

अनुचर ने ब्रह्मदेव की उपेक्षा कर ज्यों ही कुलहड़ी को वार करने के लिए ऊँचा उठाया, वृक्ष से गिर गया। समझ न सका, वृक्ष में दिव्य शक्ति है या ब्रह्मदेव में। भयभीत अनुचर हाथियों को लेकर लौट गए। घटना की चर्चा लोगों से होते हुए राजा ठाकुर तक पहुँची। राजा ने अनुचरों को बुलाकर संज्ञान लिया। अनुचर ने बताया—

"अन्नदाता, वृक्ष ब्रह्मदेव का है। उसने पत्ते नहीं लेने दिए।"

"क्यों?"

"कहा—जो काटेगा, उसका सर्वनाश हो जाएगा।"

"तुम मेरे अनुचर हो। भयभीत हो गए, लज्जा आनी चाहिए।"

"अन्नदाता उसके मुखमंडल और नेत्रों में तेज है। वह साधारण मनुष्य नहीं है। उसकी गर्जना से मेरा संतुलन बिगड़ गया। मैं गिर गया।"

राजा क्रुद्ध हो गया। राजाओं में जो हठधर्मिता होती है, वह उसमें भी

थी। ब्राह्मणों का काम ज्ञान देना और दक्षिणा पर निर्भर रहना है। वे राजा ठाकुर को चुनौती देने का साहस कदापि नहीं कर सकते। मूर्ख अनुचर ब्रह्मदेव को बलशाली निरूपित कर रहा है। यदि ब्रह्मदेव बलशाली है तो उसके बल और अहंकार को निर्मूल करना क्षत्रिय धर्म है। अनुचर से बोले, "मेरे राज्य में जो अभिमान की बात करेगा, वह मेरा शत्रु होगा। संपर्क में रहो। ब्रह्मदेव जब कुम्हरा में न हो, पीपल को काट डालना।"

ब्रह्मदेव का विवाह सुनिश्चित हो गया।

वे पीत रंग का जामा जोड़ पहन, कमर में फेंटा बाँध, फेंटे में कटार रख, शीश पर मौर सजाकर दूल्हे की पारंपरिक वैवाहिक वेशभूषा में सज गए। माँ ने तिलक लगाकर वर निकासी (दूल्हे को विवाह के लिए विदा करना) की रीत संपन्न की। बारात ने प्रस्थान किया। उन दिनों बारात कन्या के घर में तीन दिन ठहरती थी। पहले दिन बसी (दुर्गम पथ की कठिन यात्रा से थके बाराती विश्राम करते थे), दूसरे दिन विवाह, तीसरे दिन विदाई होती थी। राजा ठाकुर को ज्ञात हुआ, ब्रह्मदेव विवाह के लिए कुम्हरा से बाहर गए हैं। अनुचरों को पीपल काटने का आदेश दिया। जब ब्रह्मदेव फेरे ले रहे थे, पीपल का अवसान हो रहा था। उन्हें आभास हो गया, पीपल को क्षति पहुँचाई जा रही है। वे विचलित हो गए—

"किसी ने पीपल को क्षति पहुँचाई है। मुझे कुम्हरा जाना होगा।"

मंगल में अमंगल। दूल्हा इतना विचलित क्यों है? ससुर ने पूछा—

"क्या बात है ब्रह्मदेव?"

"तत्काल कुम्हरा जाना होगा।"

विवाह-वेदी पर बैठी दुलहन अनिष्ट की आशंका से भर गई। उपस्थित लोगों ने देखा, ब्रह्मदेव के मुख पर असाधारण भाव हैं। जैसे किसी अलौकिक शक्ति से संचालित हो रहे हों। ससुर ने समझाया—"विवाह महत्त्वपूर्ण संस्कार है। इस तरह छोड़कर जाना उचित नहीं है।"

"मुझे जाना होगा।"

सास ने करबद्ध प्रार्थना की—"विवाह पूरा होने दो, बेटा। चले जाना।"

ब्रह्मदेव सयानों की बात का विरोध न कर पाए। विवाह पूर्ण होते ही कुम्हरा लौट पड़े। पीपल की दुर्दशा देख उनकी मांसपेशियों में खिंचाव भर गया। उन्हें उपस्थित देख माँ हतप्रभ हो गई। न बाराती आए न बहू।

"बेटा···बहू···बारात··· ?"

ब्रह्मदेव ने उत्तर न दे प्रत्युत्तर किया, "यह क्या है माता?"

माँ अधरों पर आँचल रख सिसकने लगीं, "बहुत विनती की। राजा ठाकुर के सैनिक नहीं माने।"

पीपल ब्रह्मदेव का संसार था। पीपल नहीं कटा था, उनका संसार सरविहीन हो गया था। उनकी भुजाएँ थरथरा रही थीं। नेत्र ज्वाला बने हुए थे। घर में प्रविष्ट न हो वे द्वार से लौटने लगे। माँ ने रोका, "कहाँ जा रहे हो?"

"राजा से भेंट करने जा रहा हूँ।"

माँ, बहन, नातेदारों, कुम्हरा वासियों ने रोका। ब्रह्मदेव ने न अरज सुनी न आदेश। राजा की गढ़ी के नाले के पास कुम्हरावासी राव (भाट) मिल गया। राव समुदाय कबित्त करते थे। ब्रह्मदेव के विवाह के उपलक्ष्य में उनके घर कबित्त करनेवाला था। उसने आवेश से भरे भागे जा रहे ब्रह्मदेव को पुकारा—"कहाँ जा रहे हो, बसामन?"

"गढ़ी। राजा के सैनिकों ने पीपल काट डाला। मैं सर्वनाश कर दूँगा।"

"राजा ठाकुर से बैर न ठानो। घर चलो।"

"आज मुझे स्वयं ब्रह्मा नहीं रोक पाएँगे।"

"भावुक हो रहे हो। राजा के सैनिकों से अकेले नहीं लड़ पाओगे। अभी-अभी तुम्हारा विवाह हुआ है। घर में मंगल हो रहा है। घर चलो।"

"कुल्हाड़ी के वार पीपल पर नहीं, मेरी छाती पर हुए हैं।"

राव समझ गया, ब्रह्मदेव आवेश में स्थिति को समझ नहीं रहे हैं। राजा को चुनौती देना अर्थात् प्राण दंड। ऐसी वक्रोक्ति कहनी होगी, जिससे ब्रह्मदेव का आवेश मंद पड़े।

"विवेकहीन हो गए हो। राजा से तुम पेट चिरवाने (फड़वाने) जा रहे हो क्या?"

"यही समझ लो।"

ब्रह्मदेव ने फेंटे में रखी कटार से अपना उदर चीर लिया। कई फीट लंबी आँत बाहर निकलकर झूलने लगी। अकल्पनीय दृश्य देख राव का सर्वांग प्रकंपित हो उठा—"यह क्या किया?"

ब्रह्मदेव के मुख पर न पीड़ा के भाव थे, न चिंता के। सहजता से बोले, "आँत को समेटकर मेरे उदर के भीतर रखो और फेंटा बाँध दो।"

"पर कैसे··· ?"

"जो कहता हूँ करो।"

राव के थरथराते हाथों से चिकनी रक्तरंजित आँत फिसल रही थी। कठिनाई से उदर के भीतर रख सका। ब्रह्मदेव के कमर में बँधे फेंटे से उदर के फटे भाग को ढाँपते हुए कमर में लपेट दिया। रक्तस्राव को देखकर राव ग्लानि और भय से ग्रस्त हो गया। यदि ब्रह्मदेव के प्राण न रहे तो मुझ पर ब्रह्म हत्या का दोष लगेगा। कुम्हरा के ज्ञानी लोग इनकी हत्या का आरोप मुझ पर लगा सकते हैं। राव ने विवेकशून्य होकर कटार का भरपूर वार अपनी गरदन पर कर लिया। ब्रह्मदेव ने कटार छीन ली।

आधी कटी गर्दन को हथेलियों का सहारा देकर धड़ पर बैठाया और उसके साफे को खोलकर गर्दन में लपेट दिया। दोनों मरणासन्न अवस्था में, एक-दूसरे को बल देते हुए पूर्वा पहुँचे। दोनों की रक्तरंजित अवस्था देखकर लोग भय से चीत्कार करते हुए भागने लगे। प्रसंग की जानकारी मिलने पर राजा ने सावधानी बतौर गढ़ी का मुख्य प्रवेश-द्वार बंद करा दिया। बंद प्रवेश-द्वार के दोनों ओर रक्तसिक्त हथेलियों के थापे लगाकर ब्रह्मदेव और राव गढ़ी के भीतर जाने का मार्ग ढूँढ़ने लगे। नदी की ओर वाली खिड़की खुली थी। ब्रह्मदेव खिड़की तक पहुँचनेवाली सीढ़ियों पर चढ़ने लगे। इस उपक्रम में फेंटा खुल गया। उदर से निकल आँत भूमि पर छितरा गई। खिड़की के नीचे ब्रह्मदेव व राव का प्राणांत हो गया। सैनिकों ने राजा ठाकुर को सूचित किया। राजा ने आँतवाले रक्तरंजित स्थान पर मिट्टी डलवा दी। सैनिकों को शवों का दाह-संस्कार करने का आदेश दिया। दाह आरंभ ही हुआ था कि चिता की लपटों में जामा जोड़ा पहने हुए ब्रह्मदेव प्रकट हो गए। टंकार करते स्वर में बोले—

"मैं ब्रह्मदेव हूँ। राजा मेरा सामना करो।"

राजा को मृतक का स्वर भ्रामक लगा तथापि ढाल, तलवार से सज्जित सैनिकों को लेकर दाह-स्थल पर पहुँचा। ब्रह्मदेव ने राजा, सैनिकों सहित संपूर्ण गढ़ी को दिव्य दृष्टि से ध्वस्त कर दिया। गढ़ी ताश के पत्तों की भाँति ढह गई। घटना के समय राजा की एक रानी अपने बारह वर्ष के पुत्र के साथ मायके में थी। कुसमाचार सुनकर उसने पूर्वा के लिए प्रस्थान किया। गढ़ी तक पहुँचने से पहले मार्ग में ब्रह्मदेव मिल गए। उनकी कायिक भाषा से रानी समझ गई, वे उसे व बच्चे को खत्म कर देंगे। पुत्र को समझा दिया, तुम इन्हें मामा कह देना। मामा संबोधन सभी को अच्छा लगता है। समीप आ गए ब्रह्मदेव से बच्चे ने कहा, "मामा, कहाँ जा रहो हो?"

मामा संबोधन सुनकर ब्रह्मदेव प्रतिशोध त्यागकर ममत्व से भर गए। रानी को अभयदान दिया—"कल्याण चाहती हो तो लौट जाओ। गंगा के उस पार निवास करो। तुम दोनों का अनिष्ट नहीं होगा।"

रानी प्रणाम कर लौट गई।

ब्रह्मदेव ने मिट्टी में तोप दी गई आँत में पीपल की सूखी टहनी दबा दी। कुम्हरा के कुछ लोगों को स्वप्न दिया, राजा ने गढ़ी की खिड़की के पास गिरी मेरी आँत में मिट्टी डलवा दी है। मैंने उसमें पीपल की सूखी टहनी दबा दी है। मैं तपस्या करने के लिए शारदा देवी की शरण में जा रहा हूँ। बारह साल बाद यदि मैं पूर्ण ब्रह्म बन जाऊँगा तो टहनी हरी हो जाएगी। मैं उस पीपल में वास करूँगा।

ब्रह्मदेव ने जिला सतना की तहसील मैहर में स्थित शारदा देवी के मंदिर में बारह वर्ष साधना की। मंदिर में उनकी मूर्ति आज भी विराजमान है। साधना पूर्ण होते ही टहनी हरी हो गई। कोंपले फूटीं। वह टहनी अब विशाल वृक्ष बनकर आस्था का केंद्र बन गई है। उनकी बहन गहिलवा गाँव में ब्याही थी। ब्रह्मदेव ने जामा जोड़ा धारण किए हुए दूल्हे वेश में बहन को स्वप्न दिया, मेरी तपस्या सफल हुई। मैं पीपल में वास करूँगा। मेरी पहली पुजाई का चढ़ावा तुम लेना। राव का भी पूजन होना चाहिए। उसने मेरे लिए प्राण न्योछावर किए हैं। बहन पूर्वा आई। स्थानीय लोगों से प्रसंग कहा। लोगों ने पीपल की विधि विधान से पूजा की। चढ़ावे में पाँच कुरुआ खिचड़ी, जनेऊ, धूपबत्ती, पीला वस्त्र, खड़ाऊँ, पाँच रोट (आटे और गुड़ से बनी पूरियाँ) चढ़ाए गए। चढ़ावा बहन को सौंप दिया गया। यह सामग्री आज भी चढ़ाई जाती है। पूजा का दायित्व बहन को मिला। बहन के वंशज आज भी बसामन मामा धाम में पुरोहिताई करते हैं।

पूर्वा गाँव का नाम 'बसामन मामा' हो गया। आज यह पूर्ण विकसित गाँव है। जहाँ गढ़ी थी, वहाँ मंदिर प्रांगण बन गया है।

सूखी टहनी से प्रस्फुटित पीपल विशाल वृक्ष बनकर उन्नत खड़ा है। पीपल के चहुँओर चबूतरा है। कहते हैं, इस वृक्ष में वास कर रहे बसामन मामा भक्तों की मनोकामना पूर्ण करते हैं। पीपल के पास पीले जामा जोड़ा, मुकुट में सुशोभित बसामन मामा की सुंदर मूर्ति स्थापित है। राव की भी मूर्ति है। दूर-दूर से श्रद्धालु आते हैं। कथा, कीर्तन, भंडारा, मुंडन, कर्णछेदन आदि संस्कार होते हैं। मनौती के लिए प्रांगण में असंख्य नारियल, चुनरी, धागे बँधे हैं। पक्की सड़क, बाजार, पार्किंग, रेस्ट हाउस, धर्मशाला, यात्री निवास हैं।

बसामन मामा धाम का एक आकर्षण पुरवा फॉल है। सत्तर मीटर की ऊँचाई से जलधाराएँ घाटी में गिरती हैं। बरसात में स्थल की खूबसूरती बढ़ जाती है। बसामन मामा धाम में बसामन मामा की कीर्ति को उद्धृत करते हुए लोकगीत खूब सुनने को मिलते हैं—

जय हो बसामन मामा, पहने हैं जोड़ा जामा,
काँधे पर रखी है कटार, द्वारे बही रक्तधार।

सा अ

जीवन विहार अपार्टमेंट्स, द्वितीय तल,
फ्लैट नं. ७, माहेश्वरी स्वीट्स के पीछे,
रीवा रोड, सतना-४८५००१ (म.प्र.)
दूरभाष : ८२६९८९५९५०

भूल-सुधार

अगस्त-२०२२ के अमृत महोत्सव विशेषांक में पृ. १८४ पर अंशु यादव के आलेख में भूलवश उनका छायाचित्र गलत छप गया। उनका मूल छायाचित्र यह है।

ग़ज़लें

● विज्ञान व्रत

'बाहर धूप खड़ी है', 'चुप की आवाज', 'जैसे कोई लौटेगा', 'तब तक हूँ', 'मैं जहाँ हूँ', 'लेकिन गायब रोशनदान', 'याद आना चाहता हूँ', (गजल-संग्रह); 'खिड़की भर आकाश' (दोहा-संग्रह); 'नेपथ्यों में कोलाहल' (नवगीत-संग्रह), 'अक्कड़-बक्कड़ इल्ली-गिल्ली' (बालगीत-संग्रह)। 'अंतरराष्ट्रीय वातायन सम्मान', 'सुरुचि सम्मान', 'परंपरा सम्मान', 'आधारशिला कलाभूषण सम्मान', 'हिंदी गौरव सम्मान', 'कंवल सरहदी सम्मान' एवं अन्य अनेक सम्मान।

: एक :

तपेगा जो
गलेगा वो

गलेगा जो
ढलेगा वो

ढलेगा जो
बनेगा वो

बनेगा जो
मिटेगा वो

मिटेगा जो
रहेगा वो

: दो :

मैं जब ख़ुद को समझा और
मुझमें कोई निकला और

यानी एक तजुरबा और
फिर खाया इक धोखा और

होती मेरी दुनिया और
तू जो मुझको मिलता और

मुझको कुछ कहना था और
तू जो कहता अच्छा और

मेरे अर्थ कई थे काश
तू जो मुझको पढ़ता और

: तीन :

पास आना चाहता हूँ
बस बहाना चाहता हूँ

आप से रिश्ता नहीं तो
क्या निभाना चाहता हूँ

सिर्फ़ मुझसे ही रहे जो
वो ज़माना चाहता हूँ

काश ख़ुद भी सीख पाता
जो सिखाना चाहता हूँ

जो मुझे हैं याद उनको
याद आना चाहता हूँ

: चार :

आप कब किसके नहीं हैं
हम पता रखते नहीं हैं

जो पता तुम जानते हो
हम वहाँ रहते नहीं हैं

जानते हैं आपको हम
हाँ मगर कहते नहीं हैं

जो तसव्वुर था हमारा
आप तो वैसे नहीं हैं

बात करते हैं हमारी
जो हमें समझे नहीं हैं

: पाँच :

वो मेरा चेहरा न हुआ
मैं भी शर्मिंदा न हुआ

मैं उसका हिस्सा न हुआ
मुझको ये धोखा न हुआ

सब उसका सोचा न हुआ
वो मेरा रस्ता न हुआ

मैं उसकी भाषा न हुआ
तो मेरा चर्चा न हुआ

होने को क्या-क्या न हुआ
मैं ही बस अपना न हुआ

: छह :

मुझ पर कर दो जादू-टोना
एक नज़र ऐसे देखो ना

इतने दिन में घर आए हो
घर जैसे कुछ देर रहो ना

बादल हो तुम या ख़ुशबू हो
बरसो खुलकर या बिखरो ना

ढूँढ़ न पाया ख़ुद को घर में
छान फिरा हूँ कोना-कोना

तुमसे ख़ुद को वापस क्या लूँ
रक्खो अब तुम ही रक्खो ना

: सात :

बच्चे जब होते हैं बच्चे
ख़ुद में रब होते हैं बच्चे

सिर्फ़ अदब होते हैं बच्चे
इक मकतब होते हैं बच्चे

एक सबब होते हैं बच्चे
ग़ौर-तलब होते हैं बच्चे

हमको ही लगते हैं वर्ना
बच्चे कब होते हैं बच्चे

तब घर में क्या रह जाता है
जब ग़ायब होते हैं बच्चे

: आठ :

दुनिया को समझाने वाले
पहले ख़ुद को तो समझा ले

तुझको लोग पुकारेंगे भी
कम-से-कम इक नाम रखा ले

कब से देख रहा सूरज को
वो अपनी आँखें न जला ले

देखो वो इक परदेसी है
इस बस्ती में घर न बना ले

कोई आनेवाला होगा
अब तक जाग रहे घर वाले

एन-१३८, सेक्टर-२५,
नोएडा-२०१३०१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९८१०२२४५७१

भारतीय शिक्षा, शिक्षण और इसकी चुनौतियाँ

● राजेश कुमार ठाकुर

बात सन् २००४-०५ की है, जब मैंने केंद्रीय विद्यालय सूरतगढ़ में अपनी पहली नौकरी में प्रवेश किया। यहाँ रोज सुबह एक गीत गाया जाता था, जिसके बोल—

भारत का स्वर्णिम गौरव, केंद्रीय विद्यालय लाएगा।
नालंदा, तक्षशिला का इतिहास लौटकर आएगा।

आज भी मेरे कानों में गूँजते हैं। यह आवश्यक है कि छात्रों को भारत की पुरातन शिक्षा पद्धति और इसका गौरव इतिहास बताया जाना जरूरी है। एन.ई.पी. २०२० शिक्षा में भारतीय ज्ञान, विज्ञान कि पुरजोर समर्थन करती है। इस इतिहास को समृद्ध बनाने में शिक्षकों की भूमिका अहम है। आज भारत में शिक्षा का वर्तमान स्वरूप काफी चिंताजनक है। इसे प्रभावी बनाने के लिए शिक्षकों को प्रशिक्षण देने की आवश्यकता है, जिससे अगली पीढ़ी को एक उन्नत शिक्षा दी जा सके, जिससे भारत अपना स्वर्णिम इतिहास पर गर्व कर सकेगा।

भारत में शिक्षक प्रशिक्षण का इतिहास उतना ही पुराना है, जितना भारतीय शिक्षा का इतिहास। लगभग २५०० ईसा पूर्व या उससे पहले ब्राह्मणों ने सामाजिक जिम्मेदारी के कार्य को संचालित करने और अगली पीढ़ी तक ज्ञान, विज्ञान, सामाजिक सद्भाव और धार्मिक ज्ञान फैलाने के लिए एक पीढ़ी तैयार करने का निर्णय लिया। कालांतर में तक्षशिला, नालंदा, विक्रमशिला जैसे विश्वविद्यालयों का जन्म हुआ, जिसमें पूरे विश्व से ज्ञानार्जन करने के लिए लोगों ने आना शुरू किया और भारत विश्वगुरु कहलाया। अंग्रेजों के शासनकाल में डॉ. एंड्रू बेल ने सबसे पहले कलकत्ता में शिक्षक प्रशिक्षण का कार्यक्रम चलाया, जिसे वुड घोषणा-पत्र (१८५४), लार्ड स्टेनले घोषणा-पत्र (१८५९), हर्टोग कमेटी (१९२९) ने भी शिक्षक प्रशिक्षण पर जोर दिया। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् देश में कई कमेटी बनीं, जिनमें आचार्य राममूर्ति कमेटी (१९९०) ने नई शिक्षा नीति-१९८६ के अनुसार शिक्षण प्रशिक्षण कि अनुशंसा की। साथ ही शिक्षा का अधिकार २००९ ने शिक्षकों के लिए एक पात्रता परीक्षा की घोषणा की, जिससे शिक्षा के साथ-साथ शिक्षकों की गुणवत्ता का ध्यान रखा जा सके।

अच्छे शिक्षण संस्थान की आवश्यकता क्यों?

अमेरिकी शिक्षक प्रशिक्षण आयोग का मानना है कि राष्ट्र का स्तर वहाँ के नागरिकों के स्तर से तय होता है और नागरिकों का स्तर वहाँ दी जानेवाली शिक्षा से। एक बड़ी मशहूर उक्ति है, 'यदि आप किसी देश को बरबाद करना चाहते हो तो पहला प्रहार उसकी शिक्षा व्यवस्था पर करो।'

सुपरिचित लेखक। साठ से अधिक पुस्तकें, गणित विषय पर सात सौ से अधिक लेख, पाँच सौ से अधिक ब्लॉग लिख चुके हैं। देश की कई प्रतिष्ठित संस्थाओं के साथ शिक्षण-प्रशिक्षण का काम करने का अनुभव। संप्रति डाइट दरियागंज (SCERT दिल्ली) में सहायक प्राध्यापक।

कुछ वर्ष पूर्व मैकिंसे कंपनी ने भारत के ९४ प्रतिशत इंजीनियर छात्रों को नौकरी के योग्य नहीं पाया, जिसे बाद में टेक महिंद्रा के सी.ई.ओ. सी.पी. गुरनानी ने भी सही पाया। अब सवाल उठता है कि ऐसा आखिर हो क्यों रहा है? कुछेक दिनों से देश में बी.ए. चायवाला, एम.बी.ए. चायवाला, इंजीनियर चायवाला जैसे दुकानों की बाढ़ सी आ गई है, जो शिक्षा के स्तर में हो रही गिरावट का प्रतीक है। मैं ऐसा नहीं कह रहा कि स्वरोजगार गलत है, इसमें कुछ भी गलत नहीं है, पर यह अवश्य ही पढ़ाई के बाद अच्छे रोजगार न मिल पाने से हताश युवाओं का दर्द भी है। आज देश में कुकुरमुत्तों की तरह प्राइवेट सस्थान बढ़ रहे हैं, जहाँ नाम लिखाकर आप डिग्री के लिए निश्चिंत हो जाते हैं। पैसे हैं तो आप ऐसे संस्थानों में आकर बिना पढ़े या बिना गुणवत्ता की पढ़ाई के अच्छे अंक प्राप्त कर सकते हैं और अंक के आधार पर अच्छी नौकरी भी पा सकते हैं तो सवाल यह है कि जो छात्र अच्छे संस्थानों में पढकर ६० प्रतिशत अंक प्राप्त कर रहे हैं, उनसे बढ़िया हम उन्हें मान रहे हैं, जिन्होंने बिना पढ़े ९० प्रतिशत अंक प्राप्त कर लिये। एक अच्छा संस्थान अच्छे शिक्षक से सुशोभित होता है, इसलिए संस्थान की यह जिम्मेदारी है कि नौकरी देते समय अंक के साथ-साथ उम्मीदवार के ज्ञान का स्तर भी देखे अन्यथा एक गलत शिक्षक के चुनाव से कई पीढ़ियाँ बरबाद हो सकती हैं।

२००६ में मैंने केंद्रीय विद्यालय की नौकरी से इस्तीफा देकर दिल्ली के एक शिक्षण संस्थान में अपनी सेवा शुरू की। प्रत्येक शिक्षक को माह के अंत में रजिस्टर में छात्रों की प्रतिशत उपस्थिति, औसत इत्यादि भरना

पड़ता है। इसी दौरान मेरी मुलाकात एक ऐसे शिक्षक से हुई, जिन्हें न तो प्रतिशत निकालना आता था और न ही औसत। मैं यह नहीं कह रहा कि मुझे बहुत कुछ आता है, पर कल्पना कीजिए कि भारत, जिसने विश्व को शून्य दिया, दशमलव पद्धति का ज्ञान करवाया, बड़ी-बड़ी संख्याओं का उद्‌गम स्थल रहा, नक्षत्र विज्ञान, खगोल विज्ञान जहाँ पैदा हुआ, वहाँ शिक्षा की यह दुर्दशा। २००९ में भारत ने पहली बार पीसा आधारित टेस्ट में भाग लिया, जिसमें ७३ देशों ने भाग लिया था और भारत का स्थान ७२वाँ रहा। असर की रिपोर्ट बताती है कि भारत में ६० प्रतिशत से अधिक कक्षा ३ के बच्चों को एक अंक का भाग तथा ५४ प्रतिशत से अधिक कक्षा ३ के बच्चों को कक्षा १ की हिंदी पढ़नी नहीं आती है। जब हम शिक्षण के न्यूनतम स्तर की बात करते हैं तो यह आवश्यक है कि हम बच्चों को इतना ज्ञान तो अवश्य दें, जो उनके लिए आवश्यक है।

शिक्षक की भूमिका का निर्धारण

भारत हमेशा से गुरुओं का आदर करनेवाला देश रहा। यहाँ आरुणि और एकलव्य पैदा हुए। हमारी परंपरा रही है कि जहाँ हम गुरु को गोविंद से भी श्रेष्ठ समझते हैं। जो कबीरदास लिखते हैं—

गुरु, गोविन्द दोउ खड़े, काके लागू पाँय।
बलिहारी गुरु आपने, गोविन्द दियो बताय॥

वही कबीरदासजी यह लिखना भी नहीं भूले—

गुरुआ तो सस्ता भया, जैसे शेर पचास।
राम नाम को बेच के, करे शिष्य की आस॥

यदि भारत को विश्वगुरु बनना है तो वास्तविकता में शिक्षकों को एक महत्त्वपूर्ण जिम्मेदारी देने की आवश्यकता है, जिससे सामाजिक संरचना, चारित्रिक ज्ञान के साथ-साथ उन्नत पाठ्यक्रम के द्वारा छात्रों को एक ऐसा वातावरण दिया जा सके, जहाँ वे शोध कर सकें, न कि रटकर परीक्षा में लिख ९५ प्रतिशत अंक लाकर विवेकशून्य बनें। आज किसी भारतीय के द्वारा, जिनकी शिक्षा-दीक्षा विदेशों में हुई, की किसी उपलब्धि पर हम फूले नहीं समाते। हमारे अखबार उनके भारतीय मूल के होने पर विजय गाथा लिखते नहीं थकते, क्या हम ऐसे छात्रों या शिक्षकों को वही सम्मान अपने देश में देकर और बड़ी गाथा नहीं लिख सकते? इसके लिए सबसे जरूरी है शिक्षण संस्थान को अहम भूमिका निभानी पड़ेगी। इसमें बी.एड, डी.एल.एड. जैसी डिग्री देनेवाली संस्थाओं की भूमिका निर्णायक है।

आज भले हम मैकाले शिक्षा को दोष देकर अपनी जिम्मेदारी से बचना चाहें, पर आजादी के ७५ वर्ष बाद भी हमने कुछ नहीं सीखा। हम शिक्षा में नए प्रयोग से डरते हैं। परीक्षा प्रणाली स्टीरियोटाइप तरीके से काम करता है, जहाँ आपके द्वारा किया एक छोटा सा प्रयोग अगले सुबह अखबार और सोशल मीडिया पर खलनायक बना देगी। इसका अनुभव मैंने बहुत बार किया है। हमारे शिक्षण संस्थाओं में शिक्षण मनोविज्ञान पर ज्यादा बल दिया जाता है और मुख्य विषयवस्तु पर हमारा ध्यान कम होता है। जब प्रशिक्षित छात्र कक्षा में छात्रों के समूहों के सामने एक कमजोर विषय-वस्तु के साथ खड़ा होगा तो पढ़ाई की स्थिति का अंदाजा आप लगा सकते हैं। मैं हजारों शिक्षक-प्रशिक्षण ले रहे छात्रों से मिला, जिन्हें स्थानीय मान, अंकित मान में अंतर, भिन्न को दशमलव में बदलना, प्रतिशत, भिन्न का योग, त्रि-विमीय आकृति में शीर्ष, फलक में अंतर, चक्रवृद्धि और साधारण ब्याज में अंतर नहीं आता है। कल्पना कीजिए, ऐसे छात्र जब अध्यापक बनकर किसी विद्यालय में पहुँचेंगे, चाहे वह विद्यालय गली-मोहल्ले का छोटा विद्यालय हो या अंक के आधार पर संविदा पर रखनेवाले विद्यालय, ऐसे में उन छात्रों का भविष्य किस तरीके से बरबाद होगा, इसकी सोचकर दिल सिहर जाता है।

शिक्षण प्रशिक्षण को कैसे सुधारा जाए?

जे.बी.एस. हाल्डेन ने एक बार कहा था—यदि रामानुजन आज भारत में होते तो उन्हें भारत के किसी सुदूर गाँव के किसी विद्यालय या महाविद्यालय में एक क्लर्क की नौकरी नहीं मिलती, क्योंकि उनके पास कोई डिग्री नहीं थी, पर जब वह इंग्लैंड से भारत लौटे तो उन्हें देश के कई विश्वविद्यालयों ने अपने यहाँ प्रोफेसर का पद देने की पेशकश की। यदि भारत में ही रामानुजन की प्रतिभा का सम्मान हो गया होता तो उन्हें विदेश जाने की आवश्यकता नहीं होती।

शिक्षक बनने के लिए आपके पास बी.एड., पी-एच.डी. जैसी बड़ी डिग्री की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए बल्कि आपके अंदर सीखने की भूख कितनी है और आप समाज को अपनी योग्यता से किस तरह शिक्षा का दान दे सकते हैं, यह योग्यता देखने की आवश्यकता है। एक ५० प्रतिशत अंक प्राप्त छात्र में पढ़ाने की ललक संभव है, ९० प्रतिशत अंक प्राप्त छात्र से अधिक हो, पर जिन शिक्षकों के हाथ में हम अपने देश की पीढ़ी को सौंपने जा रहे हैं, उनका विषय के प्रति प्रेम, सीखने की भूख और निरंतर शोध की प्रवृत्ति कम न होने का गुण होना आवश्यक है अन्यथा आनेवाली पीढ़ी को देने के लिए हमारे पास नालंदा और विक्रमशिला जैसी संस्थान के सिर्फ नाम ही रह जाएँगे। हमारा साझा प्रयास हो कि हम एक ऐसी पौध तैयार करें, जो अपने विषय को तार्किक रूप से समझे और साथ ही उसके अंदर बाल मनोविज्ञान का खाद डालकर एक उन्नत किस्म की प्रभावी पीढ़ी तैयार करें, जो भारत को आगे ले जाने का दम रखे। डॉ. कलाम ने कहा था—असफलता से डरें नहीं, सफल गणित की यात्रा भी शून्य से शुरू होती है।

एक शिक्षक को केनोपनिषद् के इस श्लोक के अनुसार काम करना चाहिए, जो निरंतर सीखने और अपने अंदर की कमियों को झाँकते हुए पुन: सीखने के लिए प्रयासरत रहने का संदेश देता है—

नाहं मन्ये सुवेदेति नो न वेदेति वेद च।
यो नस्तद्वेद तद्वेद नो न वेदेति वेद च॥

मैं न तो यह मानता हूँ कि ब्रह्म को अच्छी तरह जान गया और न ही यह समझता हूँ कि उसे नहीं जानता। इसलिए मैं उसे जानता हूँ और नहीं भी जानता।

डी-१४३२, जहाँगीर पुरी,
दिल्ली-११००३३
दूरभाष : ९८६८०६०८०४

प्रभात

नए प्रकाशन

- **परिवर्तनशील विश्व में भारत की रणनीति** एस. जयशंकर 600.00
- **जोखिम भरे हस्तक्षेप** हरदीप सिंह पुरी 500.00
- **पदचिह्न बुलाते हैं** देवेंद्र स्वरूप 600.00
- **नेपाल का संवैधानिक विकास** डॉ. राकेश कुमार मीणा 600.00
- **मेरा रंग दे बसंती चोला** मलविंदर जीत सिंह वड़ैच 600.00
- **कांग्रेस मुक्त भारत** अमित बगड़िया 600.00
- **नेहरू की 125 ऐतिहासिक गलतियाँ** रजनीकांत पुराणिक 900.00
- **स्वामी विवेकानंद का युवा जागरण** किशोर मकवाणा 600.00
- **गांधी और इस्लाम** अब्दुलनबी अलशोला 500.00
- **POK भारत में वापस** अमित बगड़िया 400.00
- **हिंदू धर्म की धरोहर : भारतीय संस्कृति** संजय राय 'शेरपुरिया' 500.00
- **आधी रात कोई दस्तक दे रहा है** के.आर. मल्कानी 300.00
- **भारतीय संविधान : अनकही कहानी** रामबहादुर राय 1100.00
- **नक्सलियों के बीच मेरे बीते दिनों की रोमांचक गाथा** अल्पा शाह 700.00
- **खालिस्तान षड्यंत्र की इनसाइड स्टोरी** जी.बी.एस. सिद्धू 500.00
- **वैज्ञानिक जगदीश चंद्र बसु के महान् विचार** सावन कुमार बाग/मेहेर वान 300.00
- **आपका सबसे अच्छा दिन आज ही है** अनुपम खेर 500.00
- **माइंड मास्टर** विश्वनाथन आनंद, सूज़न नैनन 700.00
- **लोकतंत्र, राजनीति और धर्म** ए. सूर्य प्रकाश 400.00
- **मोपला कांड** विनायक दामोदर सावरकर 250.00
- **नेपोलियन हिल के महान् भाषण** नेपोलियन हिल 250.00
- **ध्येय यात्रा (2 खंड)** सं. मनोजकांत/प्रदीप राव/उमेंद्र दत्त 999.00
- **चलते-चलते** सुरेश चव्हाणके 600.00
- **मनु की दृष्टि से हिंदू समाज** चित्रा अवस्थी 300.00
- **भारत-चीन रिश्ते : ड्रैगन ने हाथी को क्यों डसा** रंजीत कुमार 500.00
- **नेहरू की 127 ऐतिहासिक गलतियाँ** रजनीकांत पुराणिक 750.00
- **काले पानी की कलंक कथा** एस.के. नारंग 300.00
- **विनाशपर्व** प्रशांत पोल 250.00
- **अग्निपथ से न्यायपथ** देवकी नंदन गौतम 500.00

- **राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 भारतीयता का पुनरुत्थान** सं. अतुल कोठारी 400.00
- **नए भारत की नींव : राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020** अवनीश कुमार सिंह 450.00
- **आचार्य चतुरसेन की लोकप्रिय कहानियाँ** आचार्य चतुरसेन 400.00
- **जैनेंद्र कुमार की लोकप्रिय कहानियाँ** जैनेंद्र कुमार 400.00
- **पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' की लोकप्रिय कहानियाँ** पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' 400.00
- **सुभद्रा कुमारी चौहान की लोकप्रिय कहानियाँ** सुभद्रा कुमारी चौहान 400.00
- **कमलेश्वर की लोकप्रिय कहानियाँ** कमलेश्वर 400.00
- **मन्नू भंडारी की लोकप्रिय कहानियाँ** मन्नू भंडारी 400.00
- **शिवप्रसाद सिंह की लोकप्रिय कहानियाँ** शिवप्रसाद सिंह 400.00
- **शैलेश मटियानी की लोकप्रिय कहानियाँ** शैलेश मटियानी 400.00
- **रूपसिंह चंदेल की लोकप्रिय कहानियाँ** रूपसिंह चंदेल 400.00
- **कोंकणी की लोकप्रिय कहानियाँ** सं. ज्योती कुंकलकार 400.00
- **उर्दू की लोकप्रिय कहानियाँ** सं. शैख अकील अहमद 400.00
- **असमीया की लोकप्रिय कहानियाँ** सं. महेंद्र नाथ दुबे 400.00
- **बांग्ला की लोकप्रिय कहानियाँ** सं. महेंद्र नाथ दुबे 400.00
- **सिंधी की लोकप्रिय कहानियाँ** सं. रविप्रकाश टेकचंदानी 400.00
- **शेरलॉक होम्स की डिटेक्टिव स्टोरीज** सर आर्थर कॉनन डायल 400.00
- **शेरलॉक होम्स की बेस्टसेलर कहानियाँ** सर आर्थर कॉनन डायल 400.00
- **ब्योमकेश बक्शी की रोमांचकारी कहानियाँ** सारदेंदु बंद्योपाध्याय 400.00
- **ब्योमकेश बक्शी की जासूसी कहानियाँ** सारदेंदु बंद्योपाध्याय 500.00
- **लोकप्रिय जासूसी कहानियाँ** सं. भविष्य कुमार सिन्हा 400.00
- **21 अनमोल कहानियाँ** प्रेमचंद 400.00
- **31 अमर कहानियाँ** प्रेमचंद 400.00
- **एक रोमांचक कहानी कोरोनाकाल की** अजय मोहन जैन 200.00
- **जादुई बाल कहानियाँ** सत्यजित रे 300.00
- **काले पानी की कलंक कथा** एस.के. नारंग 300.00
- **आजादी @ 75 : क्रांतिकारियों की शौर्यगाथा** विवेक मिश्र 500.00
- **ऑपरेशन योद्धा** सुशांत सैनी 500.00
- **पुलवामा अटैक** विकास त्रिवेदी/स्मिता अग्रवाल 350.00
- **भारत-चीन LAC टकराव** मुकेश कौशिक 300.00
- **भारत के जाँबाज** लेफ्टिनेंट जनरल सतीश दुआ (सेवानिवृत्त) 500.00
- **ऑपरेशन खुकरी** मेजर जनरल राजपाल पूनिया/दामिनी पूनिया 600.00
- **कारगिल गर्ल** फ्लाइट लेफ्टिनेंट गुंजन सक्सेना 500.00
- **कुछ अनसुनी फौजी कहानियाँ** रचना बिष्ट रावत 400.00
- **कारगिल : एक यात्री की जुबानी** ऋषि राज 300.00
- **भारत-इजराइल संबंध** परशुराम गुप्त 400.00
- **कलियुग सर्वश्रेष्ठ है** महायोगी स्वामी बुद्ध पुरी 250.00
- **त्रिशूलधारी** सत्यम् 500.00

मूर्ति-भंजन	क्षमा कौल	500.00
कोविड-19, जिंदगी-20	मृदुला सिन्हा	400.00
अथ श्रीमहाभारत कथा	शुभांगी भडभडे	500.00
अरण्य आदिम	तरुणकांति मिश्र	400.00
हसनपुर के राम	डॉ. परशुराम गुप्त	400.00
फिर जीते श्रीराम	बलबीरसिंह 'करुण'	350.00
लॉकडाउन की रिपोर्टर	इंदीवर	500.00
लव इन लखनऊ	पार्थ सारथी सेन शर्मा	250.00
वेदांत व जीवन प्रबंधन	विक्रांत सिंह तोमर	250.00
S.I.P. के चमत्कार से Financial Freedom कैसे पाएँ?	महेश चंद्र कौशिक	300.00
धरती-पुत्र भैरों सिंह शेखावत	बहादुर सिंह राठौड़	300.00
राष्ट्रनायक नरेंद्र मोदी : राष्ट्रवाद से समाजवाद की ओर	उषा विद्यार्थी	400.00
महापराक्रमी महाराणा प्रताप	आचार्य मायाराम 'पतंग'	300.00
बैड मैन : एक आत्मकथा	गुलशन ग्रोवर/रोशमिला भट्टाचार्या	450.00
पाप और प्रायश्चित	संजय भारती	250.00
मैं शबरी हूँ राम की	उर्वशी अग्रवाल 'उर्वी'	300.00
आधुनिक भारत के दिवंगत गणितज्ञ	वीरेंद्र कुमार	750.00
सदियों का सयानापन	सं. संजीव शाह	300.00
जीवन की भेंट	सं. संजीव शाह	350.00
बिहार के 25 महानायक	अशोक कुमार सिन्हा	400.00
म्यूचुअल फंड में Investment द्वारा मुनाफा कैसे कमाएँ	डॉ. योगेश शर्मा	300.00
अभिशप्त	डॉ. किसलय पांडेय	250.00
स्माइल	संदीप कुमार यादव	250.00
जेम्स वाट	गोपीकृष्ण कुँवर	250.00
रामायण से स्टार्टअप सूत्र	प्राची गर्ग	250.00
पक्षद्रोह	प्रदीप पांडेय	250.00
रवींद्र गीता	रवींद्र जैन	200.00
कोविड रामायण	माधव जोशी	750.00
चाणक्यमेंट	चद्रेंश मकवाणा	400.00
चाणक्य से सीखें सफलता के सीक्रेट्स	ए.के. गांधी	250.00
क्लासरूम में चाणक्य	महेश दत्त शर्मा	300.00
कैलास-मानसरोवर	राजीव गुप्ता	500.00
अर्थात् राष्ट्रवाद	नीरजा माधव	400.00
फिर से जिंदगी	धीरा खंडेलवाल	200.00
रहिमन पानी राखिए	मृदुला सिन्हा	400.00
प्रियतमा	फनी महांति	200.00
सबके राम	डॉ. प्रवेश कुमार/राजीव गुप्ता	300.00
महाभारत रिसता है	डॉ. सत्यभामा	300.00
शेयर Investment हैंडबुक	सी.ए. विक्रम नरसरिया	400.00
शेयर मार्केट में रु. 10,000 की इन्वेस्टमेंट से रु. 100 करोड़ कैसे कमाएँ	श्याम सुंदर गोयल	250.00
इन्वेस्टोनॉमी : अमीर बनने की स्टॉक मार्केट गाइड	प्रांजल कामरा	300.00
ऑप्शन ट्रेडिंग से पैसों का पेड़ कैसे लगाएँ	महेश चंद्र कौशिक	250.00
लिमिटलेस	जिम क्विक	500.00
इकीगाई	राज गोस्वामी	400.00
नौकरी नहीं, Business आइडिया ढूँढ़े	एन. रघुरामन	200.00
बिजनेस में Success की चाबी है Technology	एन. रघुरामन	200.00
स्टार्टअप हो तो ऐसा हो	एन. रघुरामन	200.00
गुड वाइब्स, गुड लाइफ	वेक्स किंग	600.00
एलन मस्क के सक्सेस सीक्रेट्स	रेंडी किर्क	400.00
बिल गेट्स के मैनेजमेंट सूत्र	प्रदीप ठाकुर	250.00
वॉरेन बफे के इन्वेस्टमेंट लेसंस	प्रदीप ठाकुर	250.00
10 महान् व्यक्तियों के 100 महान् विचार	स्वाति गौतम	350.00
25 टॉप Motivators के Inspiring विचार	स्वाति गौतम	600.00
व्यक्तित्व का संपूर्ण विकास	स्वामी विवेकानंद	300.00
पर्यावरण बचाने के लिए 31 अच्छी-अच्छी आदतें	रोहित मेहरा, IRS	250.00
एक IAS Aspirant की रोमांचक सक्सेस स्टोरी	पीयूष रोहनकर	300.00
द पावर ऑफ योर सब्कॉन्शस माइंड	जोसेफ मर्फी	250.00
द पावर ऑफ पॉजिटिव थिंकिंग	नार्मन विंसेंट पील	350.00
सफल और अमीर बनने के 16 सीक्रेट्स	नेपोलियन हिल	250.00
क्या आप अमीर बनना चाहते हैं?	नेपोलियन हिल	250.00
Mastermind और सफलता	नेपोलियन हिल	250.00
वैदिक गौ विज्ञान	सुबोध कुमार	400.00
शादी का लड्डू	चैताली हातीसकर	400.00
यायावर शब्दशिल्पी पं. बनारसीदास चतुर्वेदी	सं. आशुतोष चतुर्वेदी	350.00
टोक्यो ओलंपिक के खिलाड़ियों की प्रेरक कहानियाँ	दिलीप कुमार	250.00
मानस में लौकिक ज्ञान	एस.के. गुप्ता	400.00

प्रभात प्रकाशन
नवनूतन प्रकाशन की गौरवशाली परंपरा
इ-मेल : prabhatbooks@gmail.com
4/19 आसफ अली रोड, नई दिल्ली-110002
फोन : 011-23257555
हेल्पलाइन नं. ✆ 7827007777

बिना पूर्व-सूचना के मूल्यों में परिवर्तन किया जा सकता है।

पूमातै पोन्नम्मा

मूल/अनुवाद : **उण्णिकृष्णन मनक्कल**

पूमातै एक खूबसूरत युवती थी। उसका जन्म 'पूलुव' नामक अछूत जाति में हुआ। न माता, न पिता, न कोई परिवार। वह अकेले-अकेले रहती थी।

मकरं महीने (पौष-माघ) में पेड़-पौधे तक ठर रहे थे। आम के पेड़ बौरों से भर गए थे। रात का समय। पाला-ही-पाला। पेड़ों के कोटरों में चिड़ियाँ आपस में चिपककर सो रही थीं।

तब कटलुंकरा राई भोजन करने बैठे। केले के पत्ते में पत्नी कुट्टित्तेई अम्मा ने गूमा फूल जैसा चावल परोसा। सालन तो एक-दो नहीं, चार प्रकार के थे। चाटने के लिए अदरक की चटनी, साथ ही अंबिया व पापड़ तथा सेंके केले के टुकड़े भी थे।

वह डकारें लेते हुए उठा, हाथ-मुँह धोया और अपनी पत्नी के दिए पान-सुपारी चबाने लगा। वह छत पर जाकर टहल रहा था, तब एक सुरीली आवाज हवा में तैरती आई और उसके कानों में जा पड़ी। वास्तव में वह आवाज हृदय को छू गई थी।

वह पूमातै थी। उसने चावल की कंजी बनाई और नाले के केकड़ों का सालन भी पकाया। खाने के बाद उसने चटाई बिछाई, फिर लेटे-लेटे गायन में रत हो गई। धीमी आवाज क्रमश: ऊँची होने लगी।

कटलुंकरा राई ने चिंडन को बुलाया। वह उसके प्रबंधक का काम करता था। उसने चिंडन से पूछा, "चिंडा, वह कौन है, जिसकी आवाज इतनी सुरीली है?"

"मालिक, वह हमारी पूमातै है, जो रबी के खेत के किनारे एक झोंपड़ी में रहती है। वह भूतों और नागों का गीत गा रही है।" चिंडन ने उत्तर दिया।

"क्या वह पूलुव परिवार की है?"

"जी हाँ, मालिक।"

"कल की कटनी में वह भी आएगी क्या?"

"जी, जरूर।"

□

सुपरिचित लेखक अनुवादक। 'पंतिरुकुलत्तिंटे अम्मा' (बारह कुलों की माता) उपन्यास प्रकाशित। 'अखंड ज्योति मासिका' (मलयालम एडिशन) के लिए खंडशः अनुवाद। अनेकानेक लघु-कथाएँ और कविताएँ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। संप्रति हाई स्कूल हिंदी अध्यापक पद से निवृत्त।

सुनहरे रंग का धान का खेत। धान की कटनी के लिए पूलुव परिवार के नर-नारी, बच्चे-बूढ़े, सब-के-सब खेत के किनारे कतार में खड़े हो गए। उनके चेहरों पर खुशी की छवि उभर रही थी। करता खानदान एलन पूलुवन ने हँसिया लेकर पूरब की ओर घूमकर, हाथ जोड़कर प्रणाम किया। तब बाल सूर्य मुसकरा रहा था।

एलन पूलुवन ने 'लगन कटनी' का आरंभ किया। धान की फसल मुट्ठी भर काटकर वह छाती से लगाया। बस पूलुवों की हँसियाँ चमकने लगीं। धान की फसल का ढेर लगने लगा। पूमातै का गायन धीमें से आरंभ हुआ और धीरे-धीरे तेज होने लगा। उसके पश्चात् बाकी सब भी गा रहे थे।

पूमातै ने अपनी धोती की पूँछ कमर में खोंस ली थी। कपड़े का किनारा मुश्किल से घुटनों तक पहुँचता था। सीनावंद पसीने में लथपथ हो रहा था। तब मेंड़ पर खड़ा कटलुंकरा राई पूमातै के जोबन को ललचाई नजरों से देख रहा था। वह ओढ़नी से बार-बार काँख पोंछ रहा था। उसके मन में लड्डू फूट रहा था। 'पूलुव नारी पूमातै के सामने मेरी पत्नी कुट्टित्तेई कुछ भी नहीं, कोई भी नहीं।' वह मन में बड़बड़ाने लगा।

रात हो गई। कटलुंकरा राई को न खाना चाहिए, न पानी। उसकी नींद भी कहीं खो गई। विवश होकर उसने चिंडन को बुलाया।

"चिंडा, नींद नहीं आ रही। मन अशांत है। पूमातै को भूलना असंभव है।"

"मालिक, परेशानी छोड़ दीजिए, कोई रास्ता निकलेगा।" चिंडन ने दिलासा दिया।

"रास्ता! जाकर पूछना ही एक रास्ता है। पूमातै से पूछना चाहिए कि मैं पैदल आऊँ तो क्या झोंपड़ी की अगड़ी खोलेगी? क्या मनचाही बातें करेगी? क्या एक बार साथ लेटने की सहमति देगी?"

रातोरात चिंडन पूमातै की कुटी में पहुँचा और दरवाजा खटखटाने लगा।

"इस आधी रात में आप कौन हैं? क्या चाहिए? जानते नहीं क्या, मैं अकेली रहती हूँ? लौट जाइए! नहीं तो मैं चिल्लाकर सबको बुलाऊँगी।"

वह गुस्से और डर के मारे काँप रही थी, फिर भी किसी-न-किसी तरह उसने कहा।

"पूमातै, डरो मत, मैं चिंडन हूँ।" वह धीमे से बोला।

"आप इस समय, इधर?"

"राईजी ने तुझे आज देख था, पूमातै। तेरा गाना भी सुना था। सच कहूँ, वे तुझ पर मोहित हो गए हैं। वे पूछते हैं—पैदल आएँ तो क्या तू दरवाजा खोलेगी? मनचाही बात करेगी क्या? एक बार, कम-से-कम एक बार साथ लेटेगी क्या?" चिंडन बेशर्म होकर कह रहा था।

"चिंडनजी, कुटी में मैं अकेले रहती हूँ। रात में कोई आए तो लोग क्या कहेंगे। मेरा मान उतर जाएगा। मैं गरीब हूँ, जाति से नीच हूँ। लेकिन चिंडनजी, मान है न, मान, वह किसी को न बेचूँगी।"

"मान की बात छोड़ दे। मेरे-तेरे सिवा और किसी को कुछ पता नहीं चलेगा। हाथ में आया सौभाग्य है। इसे मत ठुकरा!" चिंडन उसे ललचाने लगा।

"मैं अपने पुरखों का, कुलदेवता की कसम खाकर कहती हूँ—मैं किसी के सामने अपनी झोंपड़ी खोलूँगी नहीं। यह शरीर एक समर्पण की वस्तु है। यदि कोई पुरुष कभी मेरे पति के रूप में आए तो उनको सौंप दूँगी।" पूमातै ने साफ-साफ कह दिया।

चिंडन खाली हाथ लौट आया।

फिर एक दिन कटलुंका राई ने चिंडन से पूछा, "चिंडा, मैं स्वयं पूमातै से पूछूँ तो क्या वह हामी भरेगी?"

"मालिक, मालूम नहीं!"

एक महीना बीत गया। एक दोपहर को केवड़-वन में पूमातै पत्ते काट रही थी। अचानक न जाने कहाँ से कटलुंकरा राई वहाँ पहुँच गया। वह ललचाई नजरों से उसे ताकता रहा। उसके नसों में कुछ नशा की भाँति ऊपर-नीचे दौड़ने लगा—"री···पूमातै!"

कामांध कटलुंकरा राई की आवाज सुनकर पूमातै चौंक गई। उसकी दशा शेर के मुँह में पड़े हिरण सी हो गई!

"जलती धूप है, आराम कर, पूमातै।"

"गरमी, सर्दी, बारिश—सब हम लोगों को पसंद है, मालिक! इसलिए आराम की आवश्यकता ही नहीं।"

"पूमातै, सुन, मेरे मन में सिर्फ तू है। तेरी छवि ने मेरी नींद चुरा ली है। सिर्फ एक बार···"

"जी नहीं, हुजूर। यह संभव नहीं। इस अछूत को छोड़ दीजिए। आप अपनी कुट्टित्तेई अम्मा के साथ खुशी मनाइए।"

"सोने का हार, कंकण, खेत, इमारत, क्या चाहिए? सबकुछ दूँगा मैं। मन-मुटाव छोड़ दे!"

"ये सब मान के सामने निस्सार हैं, हुजूर। यदि कोई पुरुष कभी जिंदगी में पति के रूप में आएगा तो उसके लिए मैं अपना शरीर समर्पण कर दूँगी, वह भी निर्मल मन के साथ। आप अपनी राह देखिए।"

कटलुंकरा राई गुस्से से किचकिचाया—"मैं बदला लूँगा!"

"परवाह नहीं।"

"जीते-जी जला दूँगा।"

"जला दीजिए, तो भी हामी न भरूँगी। मौत से महत्त्वपूर्ण मान है।"

लंपट कटलुंकरा राई अपने महल की ओर चल पड़ा।

सिसकती पूमातै अपनी कुटिया की ओर चली।

फिर न जाने क्यों किसी ने लौनी के लिए उसे नहीं बुलाया। बेकार हो गई। कोई मजदूरी नहीं। उसने सिर्फ गड और नाले के केकड़े खाकर अपनी भूख मिटाई। वर्षा और सर्दी चली गई। फिर गरमी आई। गाँव में चरवाहे आ पहुँचे। पुलुओं ने उनको टोकरियाँ दीं। बदले में चरवाहों ने उनको दूध दिया। इस प्रकार देवा-लेई चली। उन लोगों ने आपस में हँसी-ठट्टा किया।

महीना बीत गया। चरवाहे चौपायों को हाँकते हुए कहीं और चले गए। तब कटलुंकरा राई ने सोचा कि यही सुवर्णावसर है। वह पूमातै के विरुद्ध षड्यंत्र रचने लगा। चिंडन को आज्ञा दी कि कैतक्कुटि आयित्तिरा को बुला लाए।

चिंडन चोरी-छिपे आयित्तिरा नामक पूलुव स्त्री के पास दौड़ा गया और हाथोहाथ उसे बुला लाया। वह राई के सामने हाथ जोड़कर खड़ी हो गई।

"आयित्तिरे, मुझे तेरी सहायता चाहिए!"

"फरमाइए, बदचलन मालिक!"

"तुम कुटिया में जाकर बोलना कि पूमातै बदचलन है। एक चरवाहा उसका लगवार है।"

"जी नहीं, हुजूर। जान जाने पर भी वह मान नहीं देगी। वह कुल्टा नहीं। मेरे जैसी औरत नहीं। आपको याद होंगे कि आप अपनी जवानी

में कितने दिनों तक मेरी कुटी में सोए थे। लेकिन पूमातै, वह औरतों में सितारा है।" आयित्तिरा बेबाकी से बोल रही थी।

"आयित्तिरे, जो मैं कहता हूँ, वह करोगी तो मैं तुझे सोने का एक हार दूँगा। चावल जितना चाहिए, अभी ले ले। चिंडन देगा।"

उसने लाचार होकर सहमति दी।

वह अवसर तलाश पूलुवों की बस्ती में गई और कहा कि पूमातै को एक चरवाहे से अशिष्ट लगाव है।

वन-दाह की तरह यह बात सब ओर फैल गई।

एलन पूलुवन के नेतृत्व में सब कटलुंकर राई के सामने पहुँचे। एलन ने शिकायत की। हव मुँह पर हाथ दबाए बोला, "मालिक, हमारी पूमातै कुलछनी है, कुलटा है। उसे किसी चरवाहे से लगाव है। उसे उचित दंड दीजिए। नहीं तो कुलदैया रूठेगा और कुल का सर्वनाश होगा।"

"उसे हमारे सामने हाजिर करो।"

वह घसीटकर लाई गई। वह सिर पीटकर रो रही थी।

"नहीं···नहीं, मैं कुलटा नहीं। मैंने कोई कसूर नहीं किया। यह धोखा है, धोखा।"

"कोई गवाह है क्या?" राई ने पूछा।

"जी हाँ, मालिक! मैंने अपनी आँखों से देखा है।" आयित्तिरा की झूठी गवाही सुनकर कटलुंकरा राई मन-ही-मन हँस पड़ा।

उसका निर्णय सुनने के लिए सब कान दे रहे थे कि तभी कटलुंकरा राई ने हुक्म दिया, "पूमातै की कुटी में आग लगा दो। उसके हाथों में टूटी हुई झाड़ू और गोबर की हाँड़ी दे दो। गले में अपराध-चिह्न लटका दो और गधे पर बिठाकर भँड़ौआ गाकर, रबाना बजाकर घुमाओ। फिर कुटी के हाते के आम के पेड़ से बाँध दो। साँकल से बाँधना। अगले शुक्रवार दोपहर को। मशाल से उनके बाल और स्तनों पर आग लगाओ, उस दिन हम भी पधारेंगे।"

पूमातै पिट्टस मचाने लगी, दहलने लगी। लेकिन क्या फायदा! तब भी वह चिल्ला रही थी—मेरा कोई अपराध नहीं। लेकिन वह नक्कारखाने में तूती की आवाज हो गई।

पूलुवों ने अक्षरश: आज्ञा पालन किया। अंत में उसे पेड़ से बाँध दिया। फिर सरपूलुव एलन ने मशाल तेल में डुबोकर उसमें आग लगा दी। तब कटलुंकार राज के सभी लोग वहाँ उपस्थित थे।

"आयित्तिरे, मैंने तेरा क्या बिगाड़ा है? इस धोखे से तुझे क्या लाभ मिलेगा? क्या तेरा दिल लोहे या पत्थर का है?"

"चुप रह कुलच्छिनी, बदचलन।" आयित्तिरा ने सोचा, यह खड़ा जवाब है।

कटलुंकरा राई ने पूमातै के बदन को आग लगाने का इशारा किया। सरपूलुव की जलती मशाल उसके सिर और स्तनों को बार-बार जलाने लगी। इस सीनाजोरी को देखकर पेड़ों पर बैठी चिड़ियाँ भी रो पड़ीं। मशाल बुझ गई तो युद्ध जीते वीर की तरह एलन लौटा।

जले बाल व मांस की बदबू से लोगों को अपनी नाक बंद करनी पड़ी। उस नारी की चीख-पुकार से लोगों के हृदय पिघल गए। किसी ने आकर जंजीर खोल दी। पूमातै नीचे जमीन पर गिर पड़ी। सिर और उसके स्तन जले केले की तरह हो गए थे।

चारों तरफ सन्नाटा छा गया। रुलाई नहीं। हवा नहीं। चिड़ियों की चहक नहीं। फिर किसी तरह अपने विकृत शरीर को सँभालकर पूमातै उठ बैठी। उसके मुँह से ये शब्द निकले—"आयित्तिरे, भूलो मत! मैं पिशाचिनी बनकर आऊँगी, तब तुम्हारी जान ले लूँगी।"

आयित्तिरा डर गई। उसे अपनी कहनी और करनी पर बड़ा पछतावा हुआ। वह जोर से बोली, "पूमातै ने अपराध नहीं किया। मैंने झूठ कहा, झूठ। कटलुंकरा राई की आज्ञा पाकर मैंने झूठ कहा। मुझे झूठ कहना पड़ा। पूमातै, माफी···माफ!"

वह रो पड़ी। एलन रो पड़ा। सब-के-सब रो पड़े। एलन ने माफी माँगते हुए उसके लहूलुहान माथे पर अंतिम चुंबन दिया। तब आयित्तिरा मार खाकर दौड़ने लगी। कटलुंकरा राई बुत की तरह खड़ा हो गया।

पूमातै किसी प्रकार उठ खड़ी हुई। उसने तीखे स्वर में कटलुंकरा राई से पूछा, "जले सिर और जली अंठलियों से छिनारा करने आते हो, कटलुंकर राईजी?"

वह चुप रहा और आँख बचाकर निकल गया। लेकिन उसका महल जल रहा था। उसको ऐसा लगा कि आग की लपटें उसकी ओर आ रही हैं। वह पीछे मुड़कर भाग रहा था, बेतहाशा···अलक्ष्य।

पूमातै के चारों ओर खड़े लोग आँसू बहा रहे थे।

उसके होंठों से शब्द फूटे—"वे···माँ-बाप बुला रहे हैं, कुलदेवी को देख रही हूँ।···माता दुर्गा···!"

वह निकट के चौकोर कुएँ में कूद गई। सब जोर-जोर से पुकारने लगे—"पूमातै पोन्नम्मा···पूमातै पोन्नम्मा!"

लोगों का विश्वास है कि पूमातै चंडी देवी में विलीन हो गई। तब से पूलुव लोग उनकी पूजा करने लगे।

चेलन्नूर, कोषिकोड
केरल-६७३६१६

साहित्य की समृद्ध विधा 'दोहा' और कर्नल वशिष्ठ

• विजय कुमार तिवारी

सुखद संयोग है, हाल में ही कर्नल परमेश चंद वशिष्ठजी के साथ साहित्य की समृद्ध विधा 'दोहा' के बारे में बातचीत हुई और जानकर खुशी हुई, उनका सृजन अधिकांशत: दोहे और कहानियाँ हैं। भक्तिकाल के लगभग सभी कवियों ने दोहे लिखे हैं और उनके दोहे जीवन के हर पक्ष को लेकर हैं। दोहे दो पंक्तियों और चार चरणों में होते हैं। सम और विषम उनके दो उपभेद हैं। दोहा सशक्त विधा है, जिसका प्रभाव समाज पर खूब पड़ता है। रीतिकाल और भक्तिकाल के बाद के साहित्य में दोहा लेखन किंचित् कम हुआ और आधुनिक काल की भी लगभग यही स्थिति है। इसका मतलब यह नहीं है कि दोहे लिखे नहीं जा रहे हैं। खुशी है, वशिष्ठजी न केवल दोहे लिख रहे हैं बल्कि उनका लिखा हुआ 'मेरे २२२ दोहे' नामक संग्रह भी उपलब्ध है।

कर्नल वशिष्ठ ने भारतीय सेना में सैन्य प्रशिक्षण अधिकारी, हिंदी-अंग्रेजी अनुवादक, पटकथा लेखक जैसे श्रम-साध्य काम किए हैं। श्री नरेश शांडिल्य ने भूमिका के रूप में 'अनूठा है इन दोहों का सौंदर्यबोध' में लिखा है, 'दोहा अपने आप में एक संपूर्ण कविता है। दोहा एक मंत्र की तरह होता है, यदि सध जाए तो इसकी मारक-क्षमता में गजब का प्रभाव आ जाता है।' उन्होंने विस्तार से दोहा के छंद, चरण और मात्रा के बारे में बताते हुए लिखा है, वशिष्ठजी के दोहों में अलंकार, प्रेम, शृंगार और भक्ति है। अंत में शांडिल्यजी लिखते हैं, 'दोहा लेखन में वशिष्ठजी का अपना अंदाज है, अपना तेवर है, अपनी शैली है और अपनी प्रांजल-सी भाषा है।'

लेखक-संपादक प्रेमपाल शर्मा ने संग्रह के बारे में 'गागर में सागर' शीर्षक से दूसरी भूमिका लिखी है। उन्होंने लिखा है, 'कर्नल वशिष्ठ कम शब्दों में अधिक कहने की क्षमता रखते हैं। कहीं-कहीं तो उन्होंने गागर में सागर भर दिया है।' शर्माजी आगे लिखते हैं, 'कर्नल पी.सी. वशिष्ठ की दृष्टि लीक से हटकर देखती है, इनका चिंतन दूसरे रचनाकारों से भिन्न है।' वे बताते हैं, 'कर्नल पी.सी. वशिष्ठ नारी को अबला नहीं मानते, उसे दीन-हीन रूप में प्रस्तुत नहीं करते बल्कि उसे आदिशक्ति और सृष्टि-रचना की सूत्रधार मानते हैं।' अंत में प्रेमपाल शर्माजी लिखते हैं, 'प्रांजल भाषा और बोधगम्य शैली में रचित कर्नल पी.सी. वशिष्ठ के दोहे संप्रेषणीयता से ओतप्रोत हैं, जो पाठक के मन में गहरे उतरने की क्षमता रखते हैं।' डॉ. ब्रजेश कुमार मिश्रजी का 'शुभशंसा' संदेश महत्त्वपूर्ण है, वे लिखते हैं, 'श्री वशिष्ठजी के दोहों में सफल कथ्य संप्रेषण हेतु सटीक व समुचित शब्द-कौशल का प्रयोग अभिधा के साथ ही लक्षणा और व्यंजना विधा में चारुता से किया गया है। अर्थ-गांभीर्य एवं अनिरुद्ध व्यंजना उनका वैशिष्ट्य है।' कवयित्री और लेखिका पूनम माटिया ने भूमिका के तौर पर लिखे अपने लेख 'दोहों की रसभरियाँ' में वशिष्ठजी के दोहों की उदाहरणों के साथ व्यापक चर्चा की है। उन्हें इनमें छायावादी रहस्य की झलक मिलती है। वे लिखती हैं, 'दोहा सनातनी छंद की श्रेणी में अवश्य रखा गया है किंतु यह सांस्कृतिक छंद नहीं है। यह फारसी से आई हुई विधा है।' बहुचर्चित वरिष्ठ साहित्यकार सुश्री माला वर्माजी अपने लेख 'पठनीय-चिंतनीय दोहे' में लिखती हैं, 'दोहे तो लगभग प्राचीन शिलालेख की भाँति विलुप्तता के कगार पर पहुँच रहे हैं। आज कर्नल साहब की लेखनी से निकली रोशनाई ने दोहों की शैली की उस याद को पुन: ताजा करने के साथ ही दोहे की परंपरा को पुनर्जीवित करने का अद्‌भुत प्रयास किया है।' उन्होंने आगे लिखा है, 'उनके इस संकलन में सबसे अच्छी बात यह लगी कि हर दोहे के नीचे विस्तार से उसकी व्याख्या की गई है।' डॉ. सुमन चौरे ने लिखा है, 'पद्य की एक विशिष्ट शैली है दोहा, जो काव्य के अनुशासन में चलती है। अनुशासन वशिष्ठजी के सेवा काल का जीवन रहा है। आपके दोहे भी सामाजिक और मानवीय संवेदना से लबालब है।' डॉ. विनय कुमार शुक्लजी ने 'कौतूहल से परिपूर्ण दोहे' में वशिष्ठजी के दोहों की विशिष्टता रेखांकित की है।

सुखद है, एक साथ इतने विद्वज्जनों की भूमिकाएँ, टिप्पणियाँ या आशीर्वचन रचनाकार की स्वीकार्यता दरशाते हैं। शायद ही कोई संग्रह छपा होगा, जिसमें इतने लोगों के विचार सम्मिलित होंगे। मेरे लिए कहने, समझने के लिए कुछ बचा ही नहीं, सब तो कहा जा चुका है तथा वशिष्ठजी के लेखन और इन दोहों के बारे में सार्थक विवेचना हुई है। 'आत्म-कथ्य' में स्वयं वशिष्ठजी अपने लेखन को करुणा से जोड़ते हुए आदिकवि वाल्मीकि, सुकुमार कवि पंत, नीरज, तुलसीदास, सूरदास, कबीरदास और अनेक परवर्ती कवियों को याद किया है। वे लिखते हैं, 'साहित्य एक ऐसी सदानीरा, सतत प्रवाहित नदी है, जो चिंतकों और मनीषियों के मानस से गुजरकर भूतल पर अपना स्थायी प्रभाव छोड़ती है और बुद्धिजीवियों के मन को सिंचित एवं आह्लादित करती है।' दोहों के प्रचलित मानदंडों के प्रति अपनी भावना से अवगत करवाते हुए लिखते हैं, 'किसी भी प्रकार की रूढ़ता काव्य-सौंदर्य या भावपक्ष को प्रबल नहीं करती।' उपरोक्त आधारों, विचारों को साथ लेकर इतना अवश्य कहना चाहता हूँ, वशिष्ठजी दोहा-विधा लेखन के क्षेत्र में बड़ा काम कर रहे हैं। उन्होंने झंडा तो गाड़ ही दिया है और वह झंडा साहित्य के आकाश पर फहरा रहा है।

कर्नल वशिष्ठ ने अपने संग्रह को १२ खंडों में बाँटा है, जिसमें सातवें खंड तक भक्ति के दोहे हैं—महादेव मानस, नाग वंश, राम रट, हनुमान हेतु, सीता नारी रूप, महाभारत कृष्ण प्रसंग और सूरज शौर्य। उसके बाद श्रृंगार रस, उलाहने, भाव भूमि, विचार सागर और अलंकार आँचल जैसे साहित्यिक प्रभाववाले दोहे हैं। यह दिखाता है, कवि वशिष्ठ का अनुभव-संसार बहुत व्यापक है और उन्होंने अपने लेखन से हिंदी की दोहा-विधा को खूब समृद्ध किया है।

'महादेव मानस' खंड में भगवान् शंकर से संबंधित दोहे हैं। यहाँ उनके नाना स्वरूपों, प्रभावों और कृपायुक्त भक्ति का चित्रण है। शिव से जुड़े नाना प्रसंग वशिष्ठ के चिंतन में हैं, वे पौराणिक कथाओं पर प्रश्न करते हैं और उत्तर तलाशते हैं। शिव का वेश सबके लिए भय और कौतूहल का विषय है। उनकी शक्तियाँ अपार हैं और वे भक्तों पर सदैव कृपालु रहते हैं। 'नाग वंश' खंड में उनका शिव से प्रेम है, वे लिपटे रहते हैं, अन्य जीव शिव पर अपना अधिकार जताते हैं, शेषनाग पर लक्ष्मी के साथ विष्णु का शयन अनुचित है, मेघनाद ने लक्ष्मण को नागपाश में बाँध लिया, विष धारण करनेवाले भी शिव की संगति में पूजे जा रहे हैं।

'राम रट' खंड में भगवान राम से जुड़े अनेक प्रसंग-मारीच का स्वर्ण मृग बनना, भगवान् का मानवोचित विपदाओं को झेलना, सीता स्वयंवर में परशुराम का क्रोधित होना, अहल्या प्रसंग, लक्ष्मण और विभीषण, जगत् पिता प्रभु राम से विमल बुद्धि की याचना आदि-आदि पर लिखकर कर्नल वशिष्ठ ने दोहा विधा को जीवंत किया है। राम त्रिकालदर्शी हैं, फिर भी लोकहित में लीलाएँ करते हैं। कवि वशिष्ठजी अपने दोहों में प्रश्न करते हैं, अध्यात्म का चिंतन करते हैं और सारा रहस्य दो पंक्तियों में खोलकर रख देते हैं। वैसे ही 'हनुमान हेतु' खंड के दोहे हैं। जहाँ राम हैं, वहाँ हनुमान हैं, दोनों पूजे जाते हैं। हनुमानजी द्वारा किए गए कार्य और श्रीराम के प्रति उनकी भक्ति ने उन्हें सर्वप्रिय बनाया है। उनसे जुड़े प्रसंगों को कर्नल वशिष्ठ

सुपरिचित कवि, लेखक, कहानीकार, उपन्यासकार तथा समीक्षक।

ने अपने दोहों में प्रस्तुत किया है। उनमें अद्‌भुत सामर्थ्य है और कारनामे चमत्कृत करते हैं। वे राम के सबसे प्रिय भक्त हैं।

कर्नल वशिष्ठ के चिंतन में नारी का ऊँचा स्थान है। 'सीता-नारीरूप' के सारे दोहे इसका प्रमाण हैं। सीता के दुखों और संघर्षों से जुड़े दोहे अद्‌भुत हैं। कवि के चिंतन और दृष्टि से सीता का चरित्र-चित्रण, करुणा से भर देता है, संवेदनाएँ जागती हैं और मन भावुक होता है। नारी की महत्ता बताते हुए वशिष्ठजी ने लिखा है—'राधा, यशोदा, देवकी, कैकेई, द्रौपदी, सीता, कौशल्या और मंथरा के बिना त्रेता और सतयुग सब शून्य है। धान के पौधे की तरह नारी का जीवन है। वह एक घर में जन्म लेती है और संपूर्ण विकास के लिए, नारी का गौरव पाने के लिए दूसरे कुल में ब्याही जाती है। वह दो कुलों को जोड़ती है। कवि ने अपने दोहों में सीता से जुड़े अनेक प्रसंगों को खूब सजाया-सँवारा है। 'महाभारत कृष्ण-प्रसंग' हमारे पौराणिक काल की विशिष्ट घटना है। कर्नल वशिष्ठ ने छोटे-छोटे दोहों में उन सारे संदर्भों को, महान् चरित्रों और घटनाओं को जीवंत किया है। महाभारत काल के अंतर्द्वंद्व, अंतर्विरोध, चक्र-कुचक्र और तत्कालीन समाज का चित्रण कवि के भीतर की भक्ति दिखाती है। कवि मनोविज्ञान समझता है और दोहों के माध्यम से सारा दृश्य प्रस्तुत करता है। कवि भावनाओं और परिस्थितियों के अनुरूप दोहे रचता है और साहित्य के सभी रस मूर्त होकर पाठकों को आनंदित करते हैं।

कर्नल वशिष्ठ ने कहीं-कहीं व्यंग्य, उलाहना, उपहास का भी सहारा लिया है और उनके दोहे अलग प्रभाव डालते हैं। 'सूरज शौर्य' खंड का अंतर्विरोध देखिए, एक ओर सूर्य ग्रीष्म में सबकुछ झुलसा देता है परंतु पेड़-पौधे व वनस्पतियाँ उसके ताप को सोख लेते हैं, अपने भीतर समाहित करते हैं और पथिकों को छाया प्रदान करते हैं। दीपक रातभर जलता है, प्रकाश देता है, प्रात: होते ही सूर्य उसके प्रभुत्व का हरण कर लेता है। वशिष्ठजी के बिंब बड़े प्रभावशाली हैं, दोहों में साहित्यिक चमत्कार पैदा करते हैं, भाषा अलंकृत और मारक क्षमता बहुगुणित होती है। कर्नल वशिष्ठ बिंबों का मानवीकरण करते हैं और उनके संबंध या विरोध प्रदर्शित करते हैं। दोहे सौंदर्य और अर्थवान होते हैं। सूर्य इस सौर मंडल का मुख्य ग्रह है, शेष सभी ग्रह उसकी परिक्रमा करते हैं, उससे शक्ति प्राप्त करते हैं और उसकी श्रेष्ठता स्वीकार करते हैं। यहाँ शक्ति-संतुलन की भी चर्चा है, सूर्य सबको जीवन देता है परंतु कवि को पसंद नहीं कि वह कोमल तन का स्पर्श करता चले। सूर्यदेव का बड़ा परिवार है और वे सबको साथ लेकर चलते हैं।

'मेरे २२२ दोहे' संग्रह के शेष खंड पाठकों को जीवन के अन्य रसों की ओर ले जाते हैं। 'श्रृंगार रस' खंड के दोहे भिन्न तरीके से चमत्कृत करते हैं। कर्नल वशिष्ठ महाकवि बिहारी की तरह नायक-नायिका के स्वीकार-

अस्वीकार, आँखें बोल रही हैं या मुँह से आवाज आ रही है, आँसुओं के दर्द या खुशी की व्याख्या कैसे हो, प्रेमजनित क्रियाएँ, ना में ना समझने की मूर्खता जैसे शृंगारिक चित्रण में किसी सुजान की तरह उलझे हुए हैं। प्रेम की दशा में वे लिखते हैं—

फागुन सावन सा लगे, जेठ लगे मधुमास।
रूप तुम्हारा देखकर, मौन लगे परिहास॥
मैं हूँ दीया प्रेम का, जलना मेरी जात।
बुझा सके आँधी मुझे, क्या उसकी औकात॥

'उलाहने' दिए जाते हैं, कवि ने अपने दोहों में अद्‌भुत साहित्य लिखा है। उलाहना का अपना रस व मनोविज्ञान होता है और लोग बहुअर्थी भाव में इनका प्रयोग करते हैं। वशिष्ठजी ने सृष्टि रचनेवाले से लेकर सामान्य जनों के बीच सारे संदर्भों को चित्रित करने का प्रयास किया है और यहाँ धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष सारी अवधारणाएँ हैं। काम, क्रोध, मद, लोभ के चलते मनुष्य का जीवन जटिल होता गया है और वह मन के भावों को इन्हीं के सहारे अभिव्यक्त करता रहता है। वशिष्ठजी ने उलाहना के इन दोहों में ईश्वर से खूब बातें की हैं और अपनी संपूर्ण पीड़ा का बयान किया है।

कर्नल वशिष्ठ ने कहीं-कहीं व्यंग्य, उलाहना, उपहास का भी सहारा लिया है और उनके दोहे अलग प्रभाव डालते हैं। 'सूरज शौर्य' खंड का अंतर्विरोध देखिए, एक ओर सूर्य ग्रीष्म में सबकुछ झुलसा देता है परंतु पेड़-पौधे व वनस्पतियाँ उसके ताप को सोख लेते हैं, अपने भीतर समाहित करते हैं और पथिकों को छाया प्रदान करते हैं। दीपक रातभर जलता है, प्रकाश देता है, प्रातः होते ही सूर्य उसके प्रभुत्व का हरण कर लेता है। वशिष्ठजी के बिंब बड़े प्रभावशाली हैं, दोहों में साहित्यिक चमत्कार पैदा करते हैं, भाषा अलंकृत और मारक क्षमता बहुगुणित होती है। कर्नल वशिष्ठ बिंबों का मानवीकरण करते हैं और उनके संबंध या विरोध प्रदर्शित करते हैं। दोहे सौंदर्य और अर्थवान होते हैं।

'भाव भूमि' खंड में कर्नल वशिष्ठ के दोहे ईश्वर-भक्ति से ओतप्रोत हैं। कबीर की तरह उनकी भावना है, कहते हैं, मैं तो बहुत कुछ माँगता रहता हूँ, परंतु हे ईश्वर! उतना ही देना, जो मेरे लिए बहुत हो। कवि को ईश्वर मिलन की आस नहीं है, वे थक चुके हैं, दौड़ने में समर्थ नहीं हैं, कैसे ईश्वर तक पहुँच सकेंगे। मन चंचल है, अवगुणों में फँसा रहता है, मन, वाणी और कर्म से विषय-वासना में डूबा हुआ है, हे प्रभु! बस आपका ही सहारा है। मेरी सारी कामनाओं का हरण कर लीजिए, मुझे इच्छाहीन कर दीजिए, मुझे पाप विहीन कर दीजिए। मैंने स्वयं को भक्त का नाम दिया है, तू भी मेरा भगवान् बन जा। वशिष्ठजी आर्त होकर, अपनी संपूर्ण कमजोरियाँ गिना, दया-याचना करते हैं। 'विचार सागर' ४० दोहों के साथ सबसे बड़ा खंड है। कमल कीचड़ में रहते हुए खुशबू देता है, सुख की सीमा होती है, सीमा से अधिक दुःख का कारण होता है, प्रकृति में ताप नियंत्रण से जीवन का निर्धारण होता है, उसके नियम शाश्वत हैं, सब काम समय से होते हैं, विधि की विडंबना ही है, एक ही पौधे में फूल और काँटे हैं, स्त्री अनेक रूपों में आती है, बहन, माता, पत्नी और पुत्री का व्यवहार करती है, स्त्री अपने जन्म-स्थान से दूर अन्यत्र घर बसाती है आदि विषयों पर दोहे ज्ञान देते हैं। इन दोहों में भक्ति है, महाभारत आदि पौराणिक काल के संदर्भ हैं। सूर्य जग हित में उदित होता है और सर्वत्र जीवन देता है। ईश्वर पाँच तत्त्वों से निर्माण करके हमारी सारी व्यवस्था करता है। मनुष्य ईश्वर से उऋण नहीं हो सकता। संग्रह का अंतिम खंड 'अलंकार-आँचल' का है, जिसमें कवि का दार्शनिक चिंतन उभरता है। यहाँ अंतर्विरोध है, अंधकार आहत है और सूर्य को याद करते हुए जलता रहता है। सारा संसार भावनाओं से जुड़ा है और भावों से ही संचालित है—

भव की भारी भीड़ में, भाव भरे भरपूर।
जग के सारे जीव हैं, भावों से मजबूर॥

मन में किसी के प्रति नेह पैदा होता है तो वह हर हालत में पाना चाहता है। उसका व्यवहार नदी की तरह होता है, वह हर बाधा को पार करते हुए आगे बढ़ जाती है। उसे रोकना संभव नहीं है। वह मिलन, रुदन और हास-परिहास में समान भाव से लगी रहती है। हर जीव की अपनी बोली और भाषा है। वे संदेश देते रहते हैं। नायिका का सजा-सँवरा रूप नायक को खुश करता है, परंतु वह समझ नहीं पाता कि नायिका के अंगों के सौंदर्य से सारे अलंकार अच्छे लगते हैं या अलंकारों के कारण नायिका के अंग सौंदर्यवान हैं। कवि हास्य करता है, नायिक के मादक, मोहक, मधुरतम, मधुमय, मखमल देह को देखकर नायक कहीं मधुमेह का शिकार न हो जाए।

संग्रह के दोहों की भाषा-शैली, शब्दों का तालमेल और उनके भावार्थ विशेष प्रवाह में हैं। भाषा आलंकारिक है। हिंदी, उर्दू, भोजपुरी आदि के शब्द भाषा को अर्थवान बनाते हैं और अपना मारक प्रभाव दिखाते हैं। दोहों में कथ्य-कथानक और व्यंजना अपना स्वरूप बदलते हुए दिखते हैं। कवि ने स्वयं स्वीकार किया है, वह बँधा हुआ नहीं है, बल्कि बहुत कुछ अपनी समझ, ताल-लय के साथ लिखा है। वशिष्ठजी ने सनातन और पौराणिक आख्यानों को बहुतायत आधार बनाया है। संपूर्ण संग्रह भक्तिमय है। यह उस साधक की सर्जना है, जो भक्त अधिक है। कहीं-कहीं हास्य है, व्यंग्य है और कवि ने प्रश्न-उत्तर का भी सहारा लिया है। बिंब जीवंत और जाग्रत् हैं। कवि में रसिकता है, नायक-नायिका की मनोदशा का जीवंत चित्रण हुआ है। जो सबसे महत्त्वपूर्ण है, वह है इन दोहों की साथ-साथ व्याख्या। यह व्याख्या साधारण नहीं है क्योंकि कवि ने स्वयं किया है। कवि अपने द्वारा रचित दोहों के मर्म को समझता है, इसलिए उसके द्वारा की गई व्याख्या सार्थक है। यह इसलिए भी बेहतर है, कवि ने अपने भावार्थ में वह सब जोड़ा है, जो कहना चाहता है।

टाटा अरियाना हाउसिंग, टावर-४, फ्लैट-१००२
पोस्ट-महालक्ष्मी विहार
भुवनेश्वर-७५१०२९ (ओडिशा)
दूरभाष : ९१०२९३९१९०

तपन में डूबा उदास सूरज

● अंजीव अंजुम

मानव से जब भी मिला, लगा—एक उगते सूर्य के सामने आ खड़ा हुआ हूँ। जाने कितनी अरणिमाएँ उनकी मुसकराती आँखों से मेरे रोम-रोम को सिंचित कर जातीं। और तब मन के सुप्त बीज एकाएक लहलहाने को तत्पर हो उठते। उनके शब्दों की ताजगी में छिपी असीमित ऊर्जा मस्तिष्क की जड़ता का विलोम बन जाती। उनके स्पष्ट, मुखर और मधुर शब्दों की खनखनाहट मेरी ही नहीं, हर एक मिलनेवाले की इच्छाशक्ति को नवता के पथ पर ला खड़ा करती।

यह मैंने उस दिन अनुभव किया, जब मैं पहली बार डॉ. मानव से मिला। भाई राजेंद्र यादवजी ने अपने घर पर डॉ. मानव के आने की सूचना दी तो मन रोके नहीं रुका। शायद पवनदेव ने अपनी गति दी हो, तभी तो पलभर में राजेंद्रजी के घर पहुँचा। बैठक का दरवाजा खुला था। डॉ. मानव किसी कार्यक्रम में जाने को तैयार खड़े थे। एक असीम सादगी की मूरत। तपा-तपाया कुंदन स्वरूप। पतले इकहरे बदन की काया। न लंबी, न गट्टी। पूर्ण मध्यम वर्ग का प्रतिनिधित्व करनेवाली एक इकाई। मुख पर अपूर्व तेज। चिंतन के विविध प्रकारों को स्वयं में समेटे एक शांति के आवरण की मानवीय मुद्रा। स्वयं में मगन। आँखों में पूरे परिवेश को पीने की लालसा। संपूर्ण को स्वयं में स्थापित कर लेने की वृहद जिज्ञासा। रहन, सहन और कहन सामान्य में भी असामान्य। अंतर्मुखी कम, बहिर्मुखी ज्यादा। उनके निश्छल शब्दों से बहिर्मुखता स्वत: ही फूट पड़ती।

हँसी की खिलखिलाहट में न बनावट थी न मिलावट। न सजावट थी, न दिखावट। उन्हें देखकर मैं अकसर विचार करता था कि हँसी उनसे उपजती है या वे हँसी में फले-फूले हैं।

प्रथम मैंने उनके चरण स्पर्श किए तो उन्होंने 'जुग-जुग जीयो' का आशीर्वाद दिया। राजेंद्रजी ने मेरा परिचय आने से पूर्व ही करवा दिया था। इसीलिए उनके मुख से विस्फारित शब्द शृंखला 'कैसे हो अंजीव?' ने जैसे मेरी समूची चेतना को स्वयं से बाँध लिया। उस समय लगा, एक अनजानेपन के एक असीमित फासले को मानो उन शब्दों से मैं नापकर

सुपरिचित साहित्यकार। गीत, गजल, कविता, दोहा, कहानी, लघुकथा, संस्मरणात्मक रेखाचित्र आदि अनेक विधाओं में ९५२ कृतियाँ प्रकाशित। राजस्थान ब्रजभाषा अकादमी, जयपुर की त्रैमासिकी 'ब्रजशतदल' एवं साहित्य मंडल श्रीनाथद्वारा की पत्रिका 'हरसिंगार' का सहयोगी संपादन कार्य। अनेक साहित्यिक संस्थाओं द्वारा सम्मानित।

उनके हृदय तक पहुँच गया हूँ। मेरा मन उन शब्दों से जुड़ गया। शायद उसी दिन एक अटूट रिश्ते में मैं डॉ. मानव से बँध गया था।

उस समय डॉ. मानव की उम्र लगभग पचास वर्ष थी। उनके रक्त वर्णी चेहरे पर जोश और उत्साह की लहरें उमड़ती दिखाई दे रही थीं। उभरे उन्नत ललाट पर अतिव्याप्ति करते अलोल कृष्ण केश इस तरह सधे थे, जैसे किसी ने उन्हें अचंचलता का पाठ पढ़ाया हो। पतली धनुषाकार भौंहों के अवलंब पुतलियों से झलकते चेतन चक्षुओं में ऊर्जा, ऊष्मा, हिम्मत, कुब्बत और आशाओं की अनगिन रश्मियाँ अविरल फूटती दिखाई पड़ रही थीं। उन भौंहों के मध्य गुरुत्व हो उठी पतली सुघड़ नासिका, चेहरे की सुंदरता के साथ-साथ उनके पारदर्शी फ्रेम के चश्मे के भार को भी सहजता से उठा रही थी। चेहरे की मुग्धता को चार चाँद लगानेवाले लालिमा लिये होंठों की पतली लकीरें ऐसी लगतीं, जैसे दोनों पतले गालों को मिलानेवाला कोई अद्‌भुत सेतुबंध है या सुंदर ठोड़ी का शिरोबंध हो।

सूट-बूट में सजे-सँवरे डॉ. मानव ने कश्मीरी टोपी पहनी थी। गले में बादामी रंग का कश्मीरी मफलर उनको अतिविशिष्ट बना रहा था। लेकिन उनसे कुछ देर बातें करने पर लगा, यह सूट-बूट तो महज दिखाने के लिए है। यह तो इस शरीर का धर्म निभाने के लिए है। व्यक्तित्व के लिए तो व्यक्ति की बोली-भाषा और उसके विचार सर्वोपरि होते हैं। डॉ. मानव को देखकर ही मैं जान पाया कि व्यक्तित्व के लिए ऊपरी सजावट कोई महत्त्व नहीं रखती।

डॉ. मानव के मन में सहज आत्मीय प्रेम, संवेदनशीलता, सहयोग की भावना आदि ऐसे गुण थे कि मैं अपने आप ही उनका हो गया। उनके व्यक्तित्व में एक कशिश थी, जिसके कारण उनकी ओर मुखातिब होना स्वाभाविक था। उनकी हर बात का चुंबकत्व सभी को अपनी ओर आकर्षित करने में सक्षम होता था। तभी तो उस दिन मुलाकात के पश्चात् मुद्गल बाबा ने उन्हें 'करिश्माई व्यक्तित्व' की संज्ञा दी थी।

सच डॉ. मानव एक करिश्माई व्यक्तित्व थे। बोली में हरियाणवी नजाकत के साथ हर विषय पर विशद व्याख्या मैंने उनसे सुनी। एक अटूट क्रम अकसर दिखाई देता। समय पर अपनी बात कहने का और दूसरे की बात सुनने का। बिहारी के दोहे की उपमा 'नावक के तीर' पर उन्होंने 'नावक' का अर्थ मधुमक्खी बताया। इस पर कई विद्वानों ने सवालों की बौछार कर दी। लेकिन विद्वत्ता के साथ उन्होंने उन झलकती गगरियों के अज्ञान बिंदुओं को पूर्ण कर शांत बैठा दिया। उस दिन उनकी सरलता और सहजता का मन पर गहरा प्रभाव पड़ा।

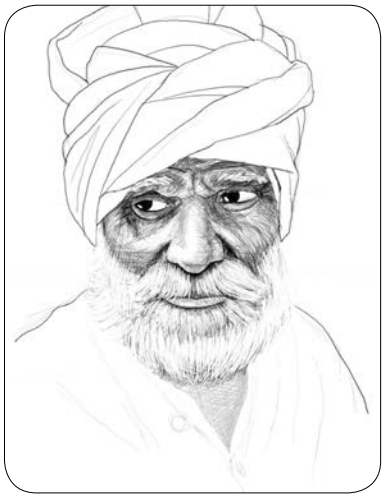

उस रात्रि डॉ. मानव विश्राम के लिए मेरे घर पर ही रुके। रात्रि में उनसे साहित्य को लेकर काफी चर्चा हुई। हर क्षेत्र, प्रदेश के साहित्यकार के कृतित्व और व्यक्तित्व पर इतनी अगूढ़ जानकारी मैंने किसी अन्य साहित्यकार में नहीं देखी थी। सच, डॉ. मानव साहित्य का चलता-फिरता विकिपीडिया लगे। तब मैंने भी अपनी कुछ पुस्तकें उनके सामने रखीं। उन्होंने मेरी पुस्तकों पर आँखें जमा दीं। मेरे उन टूटे-फूटे शब्दों में उन्हें क्या रुचा कि उन्होंने मुझे हिसार, मंडी अटेली, खटीमा, देहरादून, उज्जैन सहित न जाने कितने ही कार्यक्रमों में शामिल होने का मौका दिया।

अनेक साहित्यिक कार्यक्रमों में मैंने उनका स्नेह पाया। लेकिन उनके सान्निध्य में मुझे जो मिला, वह था साहित्यिक भाषागत और व्याकरणिक ज्ञान। उन्होंने जाने-अनजाने अनेक बातें बताईं। उन्होंने साहित्य में ये दोष किसी भी साहित्यकार के विकास में घातक बताए। मैंने अनायास ही अनेक बार उनका गुरु और शिक्षक का स्वरूप बड़ी नजदीकी से देखा। हालाँकि डॉ. मानव पेशे से प्रोफेसर थे, लेकिन सरकारी अव्यवस्थाओं के खिलाफ उन्होंने समय से काफी पहले सेवानिवृत्ति ले ली थी।

जितने वे सहज और सरल थे, उतने ही वे मुखर एवं सत्यनिष्ठ थे। वे गलत बात को सुनना पसंद नहीं करते थे। तभी तो एक विशिष्ट माने जानेवाले साहित्यकार के अतार्किक वक्तव्य को वे सहन नहीं कर सके। उस साहित्यकार ने जब पन्ना धाय और चंदन के बलिदान को गरीब की हत्या बताया। देशप्रेम को ढोंग कहा। इस बात पर जहाँ अन्य साहित्यकार मुँह पर पट्टी बाँधकर बैठे रहे, वहीं डॉ. मानव ने कम्युनिज्म में रँगी-पुती विभूतियों को अपने राष्ट्रवादी वक्तव्य से चेताया। उनके इस वक्तव्य को किसी ने नासमझी कहा तो किसी ने व्यर्थ दुस्साहस। लेकिन डॉ. मानव ने विकृत मानसिकता भरे विचारों को अपने स्पष्ट एवं नैतिक मूल्यों में बाँधकर उच्चारित कथनों से निर्मूल कर दिया। उनकी इस निर्भीकता का पारितोषिक यह मिला कि उन्हें साहित्य अकादमी सहित अनेक सरकारी संस्थानों द्वारा मौन बर्खास्तगी दे दी। लेकिन डॉ. मानव को मैंने इस परिणाम पर तनिक भी विचलित होते नहीं देखा। वे अटल हिमालय की तरह फिर भी तने रहे।

एक बार कारोही भीलवाड़ा में आयोजित सम्मान समारोह में डॉ. मानव के सान्निध्य का सौभाग्य प्राप्त हुआ। सौभाग्य से जयपुर से भीलवाड़ा तक साथ जाना एवं एक ही कमरे में रहने का मौका मिला। मैं कुछ सकुचाया हुआ था। काफी देर तक उनसे साहित्य को लेकर चर्चा रही। दिसंबर का महीना था। हो सकता है, मेरी कुछ लापरपाही रही, जो मैं सर्दी की चपेट में आ गया। अर्धरात्रि को तेज छींकें और जुकाम से मैं परेशान हो उठा। मेरे समक्ष स्थिति गंभीर थी। मुझे लग रहा था कि कमरे में रहा तो डॉ. मानव को परेशानी होगी। अत: मैं कमरे से बाहर चला गया। लेकिन बाहर की ठिठुरन से स्वयं को बचा पाने में अक्षम था। मेरी इस परेशानी पर डॉ. मानव ने मुझे कमरे में बुलाया। डाँटा और मुझे रजाई में बैठने के लिए कहा। स्वयं गरम कपड़े और मफलर पहनकर बाहर निकल गए। मैंने रोकने की कोशिश की, लेकिन बिना बोले वे बाहर चले गए। थोड़ी देर में दो कप चाय लेकर लौटे।

'रात के एक बजे चाय!'

वे बस इतना ही बोले, 'पहले चाय पीयो।'

शायद उन्हें पता था कि मुझे चाय का शौक है और सर्दी या जुकाम में मुझे चाय बहुत आवश्यक है। मैंने चाय खत्म की। लेकिन जब जुकाम व छींकों का दौर खत्म नहीं हुआ तो उन्होंने अपने बैग से दवा की दो गोलियाँ निकालीं। मुझे दीं। उस दवा के असर से जुकाम के दानव पर जीत दर्ज कर मैं चैन से रात्रि विश्राम कर सका।

उस दिन मैं डॉ. मानव की सेवा और समर्पण भाव के समक्ष नत हो गया। अपने बच्चे की तरह उस दिन मेरी देखभाल कर मुझे लगा, जैसे डॉ. मानव मेरे साहित्यिक अभिभावक हैं। मैं जब-जब उनके साथ रहा, तब-तब उनसे हर बात को सीखना चाहता था तो हर गुण को अपने अंदर परिवर्द्धित करने का इच्छुक भी रहा।

यह भी सच था कि उनके विचारों के खाद-पानी से अनेक लोगों के मन में सद्गुण के बीज लहलहा उठते थे। उन्होंने अनेक साहित्यकार कवियों को दिशा ही नहीं दी, बल्कि अपना पूर्ण सहयोग कर उन्हें रातोरात ख्याति अर्जित करवाई। उन्हें सम्मान दिलवाया। उनको देखकर मुझे अनुभव होता कि डॉ. मानव एक ऐसे सूरज हैं, जो नवांकुरों के लिए सदैव आशाओं की रश्मियों से नवीन चादरें बुनते हैं। लेकिन ओरों के लिए चादरें बुनते-बुनते व्यक्ति समय के धागों में खुद भी बँध जाता है। यही डॉ. मानव के साथ भी हुआ।

जो सूर्य परिस्थितियों के बादलों को छिन्न-भिन्न करता हुआ सभी

को प्रकाशित करता रहा था, उसे एक अप्रत्याशित घटना ने सुप्त कर दिया। वह यकायक पश्चिम के मुहाने पर अस्ताचल की गोद में बैठ गया था। वह बड़ी हृदय विदारक घटना थी। उनके इकलौते आई.पी.एस. पुत्र की असामयिक मृत्यु का ग्रहण उस निशानाथ को तार-तार कर गया।

उस समय उनके जीवन की खुशियों का कारवाँ यकायक रुक गया। उल्लसित हवा के झोंके मानो जड़ हो गए। शब्दों के बढ़ते विन्यास का अर्थ खंड-खंड हो अनर्थ में बदल भाव में बँधा हर अक्षर काली स्याही बन गया। दुनिया को दिवा करनेवाला सूरज इस तपन से स्वयं बेचैन हो उठा। युवा मनु की मृत्यु से डॉ. मानव के जीवन पर गहरा वज्राघात हुआ। इस घटना के बाद जब मैं उनसे मिलने हिसार पहुँचा, वे घर के ऊपरी कमरे में मनु की तसवीर को दीपक की रोशनी में अपलक निहार रहे थे। उनकी आँखें स्थिर थीं, लेकिन शायद मन में कोई कहानी अवश्य थी। उनके शरीर पर कमजोरी साफ दिखाई दे रही थी। चेहरे पर सिर्फ हताशा और निराशा छाई थी। पनीली आँखें करुणा के टूटे-फूटे कोश को सँभालने का प्रयास कर रही थीं। यों लग रहा था, मानो असामयिक तूफानों के थपेड़ों से टूटा जहाज मृत स्वप्नों के छिन्न-भिन्न बंदरगाह पर आ टिका है। उस समय उन्हें मेरे आने का कोई भास नहीं हुआ था।

उस दिन सिर्फ मनु की ही बातें हो पाईं। न मेरे पास कुछ पूछने को था, न ही उनके पास कुछ अतिरिक्त बताने को। उस दिन उनकी उनींदी आँखों को बस मनु की तसवीर का ही सहारा था। न जाने मनु की कितनी ही बातें उन्होंने मुझे बताईं। कभी रुँधे गले से तो कभी भर्राई आवाज में। उस दिन मैं एक सुबकते सूरज को उसी हाल में उस तसवीर के सामने एकाकी छोड़ आया। इसके पश्चात् उनसे अनेक बार मोबाइल पर बातें हुईं। दर्द साझा करने का मैंने अनेक तरीकों से प्रयास भी किया। अनेक बार उनसे पुन: लिखने का आग्रह किया, लेकिन उस समय सब व्यर्थ रहा।

कहते हैं, समय की मार के घावों को स्वयं समय ही भरता है। यही डॉ. मानव के साथ हुआ। एक दिन दोपहर में डॉ. मानव ने फोन पर सूचित किया कि मनु की स्मृति में एक साहित्यिक आयोजन है। उसमें मेरी सहभागिता भी उन्होंने रखी थी। उस दिन काफी देर तक मैंने डॉ. मानव से बातें कीं। उनकी वाणी में कुछ चहक थी। उनके मन के भार को कम जान मन प्रफुल्लित हो उठा। मैं जान गया कि दावानल के बाद की राख में नवांकुर फूट पड़ा है। मैं कार्यक्रम में पहुँचा। आज उनके साथी और उनके पुराने साहित्यिक मित्र दिखाई नहीं दिए। वे आज अकेले थे। एक-दो युवा जरूर उनके साथ थे। मैं जितना कुछ उद्योग व सहयोग कर सकता था, मैंने किया। लेकिन उस दिन मैंने देखा, थके पाँव आज भी साहित्य-निधि की समृद्धि को लालायित हैं। उन हालातों में उनका समर्पण अद्‌भुत था।

सच में, उस एक घटना ने डॉ. मानव को ही नहीं तोड़ा, बल्कि शब्दों की छलछलाती एक नदी को शुष्क कर दिया। असीम आकाश को छूने का प्रयास करते बाज के पंखों को नोंच डाला। इस घटना ने पूरब से उगनेवाले दिवाकर को हमेशा के लिए पश्चिम की ओर धकेल दिया।

मैं आज भी डॉ. मानव के द्वारा आयोजित होनेवाले कार्यक्रम में सहभागी होता हूँ। मैं हर बार देखता हूँ तपन में थके हुए उस उदास सूरज को, जो आज भी आशा भरी लालिमा मेरी झोली में चुपचाप रख जाता है और मैं सिर्फ उसके समक्ष हाथ जोड़कर उसे प्रणाम भर कह पाता हूँ।

साअ
राधाकोल्ड के पीछे, सादाबाद रोड,
राया, मथुरा-२८१२०४
दूरभाष : ७०१७३२८२११

लेखकों से अनुरोध

- मौलिक तथा अप्रकाशित-अप्रसारित रचनाएँ ही भेजें।
- रचना फुलस्केप कागज पर साफ लिखी हुई अथवा शुद्ध टंकित की हुई मूल प्रति भेजें।
- पूर्व स्वीकृति बिना लंबी रचना न भेजें।
- केवल साहित्यिक रचनाएँ ही भेजें।
- प्रत्येक रचना पर शीर्षक, लेखक का नाम, पता एवं दूरभाष संख्या अवश्य लिखें; साथ ही लेखक परिचय एवं फोटो भी भेजें।
- डाक टिकट लगा लिफाफा साथ होने पर ही अस्वीकृत रचनाएँ वापस भेजी जा सकती हैं। अतः रचना की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- किसी अवसर विशेष पर आधारित आलेख को कृपया उस अवसर से कम-से-कम तीन माह पूर्व भेजें, ताकि समय रहते उसे प्रकाशन-योजना में शामिल किया जा सके।
- रचना भेजने के बाद कृपया दूरभाष द्वारा जानकारी न लें। रचनाओं का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय होगा।

अभी नींद से जागे हैं

• प्रशांत उपाध्याय

सुपरिचित कवि-लेखक। 'शब्द की आँख में जंगल' (नई कविता-संकलन), 'गीतों में झाँकते दोहे' (दोहा-संकलन) तथा विभिन्न प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में दो सौ से अधिक रचनाएँ प्रकाशित एवं आकाशवाणी, दूरदर्शन से रचनाओं का प्रसारण। 'व्यंग्य सम्राट्', 'साहित्य सम्मान' सहित अनेक सम्मानों से सम्मानित।

: एक :

विश्वासों को आय लिखो
थोड़ा सा अब न्याय लिखो

मुट्ठी भर सुविधाओं को
खुशियों का पर्याय लिखो

यौवन आए सपनों पर
ऐसा भी अध्याय लिखो

भ्रम के खूँटे बँधी हुई
जनता को अब गाय लिखो

समीकरण की प्रेयसी को
अब तो टाटा-बाय लिखो

समय बड़ा संवेदित है
सबको हैलो-हाय लिखो

अभी नींद से जागे हैं
सिर्फ एक कप चाय लिखो

: दो :

जीवन में मुसकान बहुत है
कहना ये आसान है बहुत है

भौतिकवादी इस दुनिया में
संबंधों का ज्ञान बहुत है

सबके मन की सुनने वाला
घर में इक इंसान बहुत है

कोलाहल है मन के अंदर
भीड़ों में सुनसान बहुत है

जख्म हमारे नहीं कुरेदो
इतना ही अहसान बहुत है

टूटे सपने बिखरी यादें
जीने का सामान बहुत है

गजलें तो हम खूब सुनाते
लेकिन अभी थकान बहुत है

: तीन :

क्या पिछड़े क्या अगड़े हैं
राजनीति के लफड़े हैं

जिनके मोटे चमड़े हैं
वो ही कुरसी जकड़े हैं

दौड़ में अव्वल हैं वो ही
जन्मजात जो लँगड़े हैं

लोकतंत्र को चबा रहे
कितने मोटे जबड़े हैं

झूठों के सरदार यहाँ
फिरते अकड़े-अकड़े हैं

आचरणों पर कालिख है
सिर्फ चमकते कपड़े हैं

: चार :

अब सियासत हुई मसखरी
छोड़ दे तू बिछाना दरी

है उतरना दिलों में अगर
सीख गजलों की जादूगरी

नींद के पृष्ठ पर हाशिए
जिंदगी इस कदर है डरी

पूजते जो यहाँ कुरसियाँ
जुर्म से हो गए हैं बरी

सत्य सुनकर उछलने लगे
खा गए मिर्च जैसे हरी

मान जाना भले तुम बुरा
बात कहते सदा हम खरी

सादगी भा गई है हमें
कर रहे आजकल दिलबरी

: पाँच :

दुनिया की परवाह लिये हैं
रोज नई अफवाह लिये हैं

बिना पैर भी यात्रा में हैं
मन में जो उत्साह लिये हैं

अक्ल के अंधे गाँठ के पूरे
अपनी ही बस वाह लिये हैं

विष तो उनको पीना ही है
शंकर सी जो चाह लिये हैं

चमकेंगे इक दिन कुंदन सा
संघर्षों की राह लिये हैं

: छह :

मेरे आँसू हर्ष तुम्हारे
कैसे हैं निष्कर्ष तुम्हारे

जहर बो रहे संबंधों में
तथ्यहीन निष्कर्ष तुम्हारे

और कहाँ तक अभी गिरेंगे
सत्ता के संघर्ष तुम्हारे

लिखवा देते हैं रामायण
राघव चौदह वर्ष तुम्हारे

: सात :

सत्य के तो कान गायब हो गए हैं
शब्द के संधान गायब हो गए हैं

हर शहर में साजिशों की बस्तियाँ हैं
आजकल इंसान गायब हो गए हैं

गाड़ियाँ हैं भीड़ है बाजार है
रास्ते सुनसान गायब हो गए हैं

कच्ची मिट्टी से बनाते थे कभी घर
आज वे सामान गायब हो गए हैं

हैं मशालें जुगनुओं के हाथ में अब
काव्य के दिनमान गायब हो गए हैं

जन्म से ही सीखते चालाकियाँ बस
बच्चे सब नादान गायब हो गए हैं

ये हमारे संस्कारों की प्रगति है
देह से परिधान गायब हो गए हैं

घूमता है आदमी अभिशाप लेकर
कालजय वरदान गायब हो गए हैं

जिंदगी को जिंदगी सा जी रहे हम
मान या अपमान गायब हो गए हैं।

३६४, शंभू नगर
शिकोहाबाद-२८३१३५
दूरभाष : ९८९७३३५३८५

ऑनरेरी पी-एच.डी. का खुला रहस्य

● आलोक सक्सेना

रामपुर पहुँचते ही मैं अभी अपनी बड़ी दीदीजी के ड्राइंगरूम में बैठा ही था कि वह मुझसे बोलीं, "पता है, तुम्हारे जीजाजी ने भी तो पी-एच.डी. कर ली है। अब वह भी तुम्हारी तरह से अपने नाम के आगे 'डॉक्टर' लगाते हैं।" फिर तुरंत ही ड्राइंगरूम की वॉल पर लगे एक 'फ्रेमयुक्त सर्टिफिकेट' की ओर इशारा करते हुए उन्होंने उसे देखने हेतु मुझसे कहा, "देखो, यह है उनका सर्टिफिकेट।" मैं तुरंत ही सोफे से उठकर उस 'फ्रेमयुक्त सर्टिफिकेट' को गंभीरता से देखने लगा, क्योंकि मुझे पता था कि हमारे जीजाजी ने तो अपने जमाने में बड़ी मुश्किल से केवल ग्रैजुएशन ही कर पाई थी। वे पोस्टग्रैजुएट नहीं थे। फिर बिना पोस्टग्रैजुएशन किए हुए आज सीधे ही पी-एच.डी.। मेरे दिमाग में प्रश्नचिह्न था, अत: मेरे शोधी एवं खोजी दिमाग में पत्रकारिता जाग उठी। जीजाजी का मामला था तो क्या हुआ, अंदर-ही-अंदर मेरा दिल और दिमाग बड़ी सी रहस्यमयी जाँच-पड़ताल में जुट गया। मैंने पाया कि उनका उक्त सर्टिफिकेट किसी विश्वविद्यालय का नहीं था बल्कि कनाडा की एक पी-एच.डी. गाइडेंस फाउंडेशन नामक निजी संस्था का था और जिस पर जीजाजी के नाम के आगे 'ऑनरेरी पी-एच.डी.' लिखा हुआ था।

अब मुझे सारा मामला समझते देर न लगी, लेकिन इससे पहले मैं दीदीजी से कुछ कह पाता, मुझे बड़ों के आगे अधिक न बोलने के जड़ संस्कार ने रोक दिया। मैं स्वयं अपने मुँह पर चुपचाप रहने की उँगली रखते हुए पुन: सोफे पर आकर वापस बैठा ही था कि आदरणीय दीदीजी ने चाय-नाश्ता कराने से पहले हमारे प्रिय जीजीजी की एक फोटो अलबम हमारे हाथ में देते हुए कहा, "लो, यह देखो तुम्हारे जीजाजी के कॉन्वोकेशन की फोटो हैं, पहले इसे देख लो। पता है, उनका यह कॉन्वोकेशन कनाडा से दिल्ली आकर स्वयं ही अध्यक्ष महोदय और अन्य गण्यमान्य व्यक्तियों और साथ में देखो, भारत की ब्यूटी क्वीन के मध्य हुआ। देखो भारत की ब्यूटी क्वीन तुम्हारे अति प्यारे सुंदर-सलोने जीजाजी के साथ और भी सुंदर लग रही है न!"

मैंने फोटो में देखा कि हमारे प्रिय जीजाजी को मेरी नजर में एक साधारण सा प्रिंटिड रंगीन-पत्र, जो उनके लिए बहुमूल्य सर्टिफिकेट था, वह दिल्ली के एक पाँच सितारा होटल के रंगीन रोशनी के मध्य जगमगाते हुए विशाल सभागार में कॉन्वोकेशन ओवरकोट जैसा ओवरकोट और कैप लगाकर मिला था और उस दीक्षांत समारोह में विश्वविद्यालय के

सुपरिचित साहित्यकार। प्रयोगधर्मी व्यंग्यकार के रूप में ख्याति प्राप्त। अनेक वर्षों से हिंदी भाषा एवं व्यंग्य साहित्य के संरक्षण एवं संवर्धन में प्रयासरत।

कुलपति और कुलसचिव पर उक्त कनाडियन फाउंडेशन/संस्थान के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष मौजूद थे। वे भी पूरी तरह से सुसज्जित रंगीन कॉन्वोकेशन ओवरकोट और कैप में थे। हमारे आदरणीय प्रिय जीजाजी को तो बस इस समारोह की गरिमामयी उपस्थिति में पधारने से पहले और उपाधि प्रमाण-पत्र प्राप्ति के लिए संबंधित फाउंडेशन/संस्थान के अकाउंट में भारतीय होने के नाम पर उन्हें मिली तीस हजार रुपयों की विशेष छूट के बाद केवल सत्तर हजार नौ सौ निन्यानबे रुपए जमा करने पड़े थे। जिसमें नौ सौ निन्यानबे रुपए उस ओवरकोट और कैप थे, जो हमारे जीजाजी को कॉन्वोकेशन के दिन फाउंडेशन/संस्थान द्वारा पहनने हेतु उधार दिया गया था।

यह सब देखकर और जानकर हमने गहरी साँस ली और हिम्मत करके अपनी ज्यादा पराई नहीं, यानी अपनी सगी उम्र में बड़ी दीदी से कहा, "दीदी, जिसे आप जीजाजी की डिग्री मान रही हैं, वह वास्तव में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के नियमानुसार और प्रक्रियानुरूप शैक्षिक योग्यता के आधार पर मिलनेवाली मूल 'डॉक्टरेट' की उपाधि नहीं है। केवल एक ऐसा सर्टिफिकेट मात्र है, जो किसी भी व्यक्ति को उसके उत्कृष्ट कार्यों के संबंध में या समाज में बेहतरीन विशेष योगदान के लिए 'ऑनरेरी डिग्री यानी मानद उपाधि' के रूप में दिया जाता है। ये तो बस एक प्रकार का सम्मान होता है और इस प्रकार के सम्मान को कभी भी किसी विश्वविद्यालय से परीक्षा उपरांत प्राप्त पी-एच.डी. डिग्री की तरह से मूल स्थाई मान्यता नहीं दी जा सकती। सच कहूँ तो ऑनरेरी डिग्री यानी मानद उपाधि पानेवाले लोग अपने नाम के आगे 'डॉक्टर' शब्द भी नहीं लगा सकते, क्योंकि शैक्षिक योग्यता के आधार पर वे 'डॉक्टरेट' होते ही नहीं हैं।"

मैंने अपने सामने रखी टेबल पर रखे पानी भरे गिलास का पूरा पानी पीकर फिर आगे कहा, "दीदी, मेरे प्रिय आदरणीय जीजाजी को उनकी शिक्षा के क्षेत्र में सराहनीय योगदान के लिए उन्हें यह 'ऑनरेरी डिग्री यानी

मानद उपाधि' दी गई है। यह उपाधि भी उन्हें इसलिए दी गई है, क्योंकि अपनी स्कूली शिक्षा के क्षेत्र में उनका अतुलनीय योगदान रहा। वे खुद १०वीं में तीन बार, १२वीं में दो बार और फिर आर्ट ग्रैजुएशन में एक बार फेल हुए, लेकिन उन्होंने अपनी योग्यता हासिल करने में भारतीय मकड़ी से प्रेरणा लेकर कभी हार नहीं मानी। इसलिए कनाडियन फाउंडेशन/संस्थान उन्हें यह प्रमाण-पत्र देकर स्वयं को गौरवान्वित महसूस कर रहा है और साथ ही मेरे सीधे-सादे और बेचारे इन विदेशियों की चालाकी भरी बातों की समझ न रखनेवाले नासमझ प्यारे जीजाजी से पूरे सत्तर हजार नौ सौ निन्यानबे रुपए ऐंठकर खुद ऐश कर रहा है। केवल मानद उपाधि के नाम पर साधारण लोगों को ठगने का धंधा कोई इनसे सीखे।" तभी कॉलबेल बजती है और मेरी आदरणीय बड़ी दीदीजी का मुझसे ऑर्डर स्वरूप कहना था कि लगता है, तुम्हारे जीजाजी आ गए हैं। चलो, उनके तुरंत पैर छूना और उन्हें मुसकराते हुए बधाई भी देना। उनके सामने अपनी भारतीय यू.जी.सी. मान्यता प्राप्त विश्वविद्यालय से की हुई पी-एच.डी. मत झाड़ने लगना बस। दीदी दरवाजा खोलती हैं और मैं अपने भोले-भाले आदरणीय प्यारे जीजाजी को देखकर तुरंत भारतीय सभ्यतानुसार अपनी बड़ी दीदीजी की आज्ञा का पालन करता हूँ और फिर अपने मुँह को जीजाजी के सामने अत्यधिक स्पष्ट रूप से न खुलने के लिए एक अदृश्य, यानी गुप्त लॉक लगाने के गुप्त प्रयास में जुट जाता हूँ।

जे.डी.-१८-ई/सी, तृतीय मंजिल,
खिड़की एक्सटेंशन, मालवीय नगर, नई दिल्ली-११००१७
दूरभाष : ८०७६३०५२०२

आई नई हवाएँ

कविता

• रामगोपाल शर्मा 'दिनेश'

ले लो मशाल कर में

मौसम नया, सुबह की
आई नई हवाएँ।
नूतन कदम उठाओ, क्यों पंथ पूछते हो?

इतिहास का उजाला,
बाजार में न बिकता।
पथ-चिह्न तक मिटाकर, परिणाम पूछते हो?

जो भीड़ बन समय का
रथ रोकने खड़े हैं
क्यों पंख बेच उनसे, आकाश पूछते हो?

काँटे बिछा रहे जो
हर पंथ पर तुम्हारे
क्यों फूल के बगीचे तुम उनसे पूछते हो?
जो जानते नहीं हैं,
सूरज किधर निकलता,
क्यों उम्र रोशनी की, तुम व्यर्थ पूछते हो?

चलना कठिन नहीं है
दो पैर तो उठाओ।
अंकुर बिना सुमन की, क्यों गंध पूछते हो?

धरती नहीं है बंजर
आकाश में हवा है।
क्यों श्वास से मरज का संसार पूछते हो?

सागर न पी सकोगे
तूफान आ रहे हैं।
भूचाल से सृजन का, क्यों राज पूछते हो?

यों ही नहीं खड़े हैं
हम द्वार पर तुम्हारे
ले लो मशाल कर में, क्यों उनसे पूछते हो?

गीत वर्षा के गाएँ

मेघों की बाँहों में,
झूलती हवाएँ।
शिखरों के पास चलो,
दिव्य गीत गाएँ।

चपला की चितवन से,
फूट रहे रंग।
आओ कुछ देर उड़ें,
परियों के संग।

सतरंगे धनुषों के
सप्त स्वर सुनाएँ॥

धरती के रोमों में
अँकुराई दूब।
लतिकाएँ नाच उठीं
अलसाई धूप।

सुपरिचित लेखक। १२६ मौलिक ग्रंथ, जिनमें पाँच प्रबंध-काव्य, दस गीत-संग्रह, पाँच नई कविता, दस नाटक, चार कथा-साहित्य, पाँच निबंध-संग्रह, बारह शोध एवं आलोचना-ग्रंथ प्रकाशित। भारत सरकार से नाटक पुरस्कार, राजस्थान साहित्य अकादमी से तीन बार काव्य-पुरस्कार तथा अन्य कई सम्मान। अनेक देशों की यात्रा। संप्रति भीली भाषा पर शोध-कार्य एवं स्वतंत्र लेखन।

फूलों के पास चलो
गंध में नहाएँ॥

सरिता में झूम रहे,
भँवरों के जाल।
दादुर ऋतु-गान भरे,
सरगम के ताल।
निंबा-हिंडोल दिव्य
गीत हम सुनाएँ।
मेघों की बाँहों में, झूलती हवाएँ।

सी-७१२, गरिमा विहार
सेक्टर-३५, नोएडा-२०१३०७
दूरभाष : ८३७३९१३४५५

लोक-जीवन में देश-काल का चिंतन

• मयंक मुरारी

भारतीय दर्शन की पुस्तकों में 'योग वशिष्ठ' का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसमें वर्णन आता है कि हम जिस आकाश के भीतर रहते हैं, उसमें और भी कई आकाश हैं। उनका क्षेत्रफल भिन्न-भिन्न होता है। हमारा आकाश भी किसी और आकाश के अंदर है। यह प्रत्येक व्योम का अपना गणित है, अपना रसायन है और प्रत्येक व्योम की अपनी भौतिकी यानी प्रकृति है। सबका देश यानी क्षेत्र और काल अर्थात् समय एक-दूसरे से भिन्न है। देश और काल को केंद्र में रखकर एक कथा का भी वर्णन है। दो ऋषियों ने उँगली बराबर जगह से अपनी योग-शक्ति के बल पर धरती के अंदर प्रवेश किया। वे तीनों लोकों में विचरण करते रहे, जिसमें कई जन्म बीत जाते हैं। फिर जब धरती पर वापस आते हैं, तो देखते हैं कि अभी दिन के कई पहर शेष है। यह देश यानी क्षेत्र की विराटता का परिचायक है। भारतीय चिंतन में एक कथा काल की अपरिमित सीमा के संबंध में भी आती है। काकभुशुंडी खुद श्रीराम के शिशु रूप में उनके मुख में प्रवेश करते हैं, उनके भीतर वह तीनों लोक को देखते हैं, वहाँ हजारों वर्ष निवास करते हैं और फिर बाहर आते हैं। बाहर आने पर पता चलता है कि अभी दो घड़ी का समय ही व्यतीत हुआ है। अतएव देश और काल का सूक्ष्मतम रूप है, तो उसका विराटतम स्वरूप भी है। जन्म से अमरत्व की यात्रा ही व्यक्ति का अंतिम पड़ाव है। उसी प्रकार सूक्ष्म से विराट् की यात्रा में कल्प देश और काल का अंतिम सोपान है।

एक पौराणिक कथा है। एक राजा थे—ककुद्मी। उनकी पुत्री थी रेवती। जब वह विवाह योग्य हो गई, तो उसके लिए उपयुक्त वर की तलाश में वे ब्रह्माजी के पास गए। ब्रह्मजी उस समय इंद्र की सभा में व्यस्त थे। जब अवसर मिला तो ककुद्मी ने अपनी बातें रखीं। इस पर ब्रह्माजी मुसकराए और बोले कि राजन्, आपके चुने वर तो कब के मृत्यु को प्राप्त हो गए। इसके बाद कई पीढ़ियाँ पृथ्वी पर बीत चुकी हैं। तुम्हारे राजपाट का कोई नामोनिशान तक नहीं है। यह है समय की सापेक्षता का सिद्धांत। कथा के माध्यम से ब्रह्मांड के पटल पर काल के विवेचन की यह भारतीय विशेषता है। हम एक पल में वर्तमान के देश और काल तथा उसके विराटतम एवं अनंत रूप का स्मरण करते हैं। भारतीय चिंतनधारा कहती है कि काल को खंड में देखेंगे, तो हम खुद इतिहास के अंग हो जाएँगे। जो भारतीय परंपरा नहीं रही है। यह समझना होगा कि विश्व ब्रह्मांड का व्योम (स्पेस) ठहरा हुआ नहीं है। निरंतर घूम रहा है और परिणामस्वरूप काल भी ठहरा हुआ नहीं है। वह भी निरंतर घूर्णायमान है। स्पेस और टाइम (व्योम और काल) दोनों एक सम्मिलित प्रत्यय है। काल तो अमूर्त है। इसे मूर्त रूप से व्योम यानी स्पेस अभिव्यक्त करता है। यह कैसे होता है? दिनमान जो काल की एक इकाई है, उसके माध्यम से। इस व्योम में सूर्योदय से पुनः सूर्योदय के प्रदृश्य द्वारा। इसी में निरंतर घूर्णायमान है। होरा यानी घंटा चक्र, दिवस चक्र, पक्ष चक्र, मास चक्र, ऋतु चक्र, संवत्सर चक्र, नाक्षत्रिक या सप्तर्षि संवत्सर चक्र, युग चक्र और कल्प चक्र आदि। प्रत्येक छोटा वृत्त किसी वृहत्तर वृत्त की परिधि का बिंदु है। इस प्रकार ये सारे वृत्त यानी समस्त व्योम वृत्त किसी अमूर्त्त महाकाल (जिसे शाश्वत कहते हैं) के वृत्त का बिंदू है। भारतीय चिंतन में इसी क्रम में भव चक्र, जन्म-मरण चक्र, कर्म चक्र, धर्म चक्र आदि की कल्पना की गई है। काल का अर्थ ऋत या प्रवाहशील सत्य भी है, क्योंकि सारे क्रिया प्रवाह काल और धर्म के अधीन चलता है। काल का प्रत्येक बिंदु अपनी धुरी पर इसी तरह दुहरी-तिहरी या असंख्य गुणा गति से चलता है। पृथ्वी अपनी धुरी पर दैनिक गति से घूमती है, पर हर एक दैनिक बिंदु पर वह वार्षिक गति से भी घूमती हुई सूर्य की परिक्रमा कर रही होती है। फिर समस्त सूर्यमंडल के साथ किसी वृहत्तर सूर्य की परिक्रमा कर रही है। इस प्रकार यह चक्रीय गति आगे बढ़ती जाती है।

इसी कारण काल की रेखीय गति का विकास होता है, ऐसा माननेवाले भी समय की इस विराटता को अनुभव नहीं कर पाएँगे। ऐसी स्थिति में समय का अतिक्रमण करना और भी आश्चर्यजनक होता है। पहला, यह कि वास्तव में जो कालचक्र है, वह रेखीय नहीं होता। हमारे सामाजिक

सुपरिचित लेखक। पत्र-पत्रिकाओं में अब तक ४०० से अधिक आलेख एवं आधा दर्जन से अधिक पुस्तकें प्रकाशित। झारखंड रत्न अवार्ड सहित अनेक सम्मानों से सम्मानित। संप्रति उषा मार्टिन लि. में वरीय उपप्रमहाप्रबंधक-जनसंपर्क पद पर कार्यरत।

एवं सांस्कृतिक आचार-व्यवहार में देशकाल का प्रत्येक पग-चाल जुड़ा है, जो चक्रीय है। हर संकल्प में सृष्टि की आदि से जुड़ा हुआ समय आता है, समस्त भू-मंडल से जुड़ा स्थान आता है, गोत्र के प्रवर्तक ऋषि से जुड़ा व्यक्ति आता है और जीवन की अमरता से जोड़ता सत्य आता है। अपनी गति को काल के अनंत प्रवाह के साथ जोड़कर हम चलते जाते हैं। याद कीजिए, जीवन में हर सुबह-शाम होनेवाले संकल्प रूपी उपासना एवं कर्म मंत्र को। इस संकल्प को हम नित्य कर्मकांड और उपासना के समय स्मरण करते हैं। हर शुभ कार्य के पूर्व में संकल्प पाठ के मनन द्वारा हम देश काल का अतिक्रमण कर महाकाल और शाश्वत महाव्योम से जुड़ जाते हैं। एक अटूट और अविच्छिन्न संबंध उस अनंत एवं अगम्य अछोर से समय के वर्तमान तक बन जाता है। इस संबंध को जोड़नेवाला मंत्र है—

समय की दो गतियाँ हैं। देश में यह गति हमारे कर्म और हमारे अनुष्ठानों से जुड़ी होती हैं। अनुष्ठान में भी यह गति है और समय की यात्रा में भी है। यज्ञ हो, जप हो, कर्मकांड हो, प्रार्थना हो, या कीर्तन और गान, इन सब क्रियाओं में देश काल का समागम होता है। कई बार अतिक्रमण भी हो जाता है, कौन देव है और कौन भक्त पता ही नहीं चलता है। तुलसी का विष्णु से विवाह हो या शालिग्राम का शुद्धीकरण। अनुष्ठान के माध्यम से हम अपने इष्टदेव को शुद्ध और सात्त्विक करें या नहीं करे, लेकिन इस क्रम में स्वयं अपने जीवन का पवित्रीकरण अवश्य करते हैं।

"ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः, श्री मद्भगवतो महापुरुषस्य, विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य, अद्य श्री ब्राह्मणों द्वितीय परार्धे, श्री श्वेतवाराहकल्पे, वैवस्वतमन्वन्तरे, अष्टाविंशतितमे कलियुगे, कलिप्रथमचरणे, बौद्धावतारे, भूर्लोके, जम्बूद्वीपे, भारतवर्षे, भरतखण्डे, आर्यावर्तैक देशान्तर्गते।" और अंत में गोत्रे, परिवार एवं वर्तमान समय के साथ स्वयं के वर्णन के साथ संकल्प की घोषणा। अर्थात् श्री भगवान् महापुरुष विष्णु की आज्ञा से प्रारंभ होनेवाले ब्रह्मा के दूसरे परार्ध में, श्वेतवाराह नामक कल्प में, (श्वेतवाराह कल्प के भी छह मन्वंतर-स्वायंभुव, स्वारोचिष, उत्तम, तामस, रैवत और चाक्षसु व्यतीत हो चुके हैं। सातवाँ वैवस्वत मन्वंतर चल रहा है)। वैवस्वत मन्वंतर में, अट्ठाईसवें महायुग के वर्तमान कलियुग के प्रथम चरण में, बुद्धावतार में, भूलोक के जंबूद्वीप में, भारत वर्ष में, भरतखंड में, आर्यावर्त देश के अंतर्गत, अमुक महानगर में, अमुक उपनगर में, अमुक युगाब्द में, अमुक नामक संवत्सर में, अमुक विक्रमी संवत् में, अमुक शक संवत् में सभी मासों में उत्तम मास अमुक मास में, अमुक पक्ष में, अमुक तिथि में, अमुक दिन में, सूर्य के उत्तरायण दक्षिणायन में अर्थात् अमुक अयन में, अमुक नक्षत्र में, अमुक नामक योग में, अमुक नामक करण में, अमुक गोत्र में उत्पन्न हुआ मैं, श्रुति-स्मृति-पुराण फल प्राप्ति हेतु, भगवान् के प्रिय हेतु अमुक शुभ कार्य करूँगा।

बात काल के वर्णन पर ही समाप्त नहीं होती है। काल के साथ देश का स्मरण है, और अपनी वंश-गोत्र का वंदन भी इसी से संबंधित है। इस प्रकार भारतवर्ष के सभी नागरिकों का अपने आदि पूर्वजों के साथ गर्भनाल संबंध जुड़ा हुआ है, जो सहस्राब्दियों के बीत जाने के बाद भी परंपरा में लगातार चलता आ रहा है। इसके साथ में लोक का स्पंदन भी है। एक साथ काल, देश और लोक की यात्रा। लघुता में समय और भूखंड के अनंत यात्रा की शाश्वत अनुभूति और उस लोक स्पंदन के साथ स्वयं की धड़कन को जोड़ना ही हमारी चैतन्य भारत की परिकल्पना है, जो चिरंतन यात्रा पथ पर चलती जा रही है। यहाँ के हर निवासी की उत्पत्ति किसी-न-किसी ऋषि से हुई है, जिसकी अभिव्यक्ति संकल्प मंत्र के साथ की जाती है। धार्मिक साहित्यों में सामान्यतः सात ऋषियों का वर्णन आता है—वसिष्ठ, भृगु (शौनक), वामदेव-गौतम, भरद्वाज, अत्रि, कण्व और विश्वामित्र। बाद में इसमें और कई महान् ऋषियों का नाम जुड़ता गया, जैसे शांडिल्य, पराशर आदि। द्रविड़ों के संरक्षक संत के रूप में अगस्त्य का नाम जुड़ा। इस ऋषियों ने अपने गोत्र, वंश के नाम पर देशभर में आश्रम, विद्यापीठ और गुरुकुल की स्थापना की। इनके वंश परंपरा के साथ गोत्र की परंपरा चली। इस गोत्र में भी लोग अपने कर्म और हुनर के अनुसार दैनिक और पारिवारिक कार्यों को अपनाया। कोई ब्रह्म, वेद और ज्ञान के प्रचार और प्रसार में लगा, तो वह ब्राह्मण हो गया। किसी ने सुरक्षा का कार्य अपनाकर क्षत्रियत्व धर्म को अपनाया। शिल्प, कौशल और कला में लगे लोगों को वैश्य कहा गया और सेवा कार्य करनेवाले को शूद्र कहा गया। यह हरेक गोत्र, वंश और कुल में था। अलग-अलग कर्म और व्यवसाय को अपनाकर एक ही परिवार में कोई क्षत्रिय, कोई वैश्य और कोई ब्राह्मण हो सकता है।

जब महादेव द्वारा माता पार्वती को श्रीराम के चरित्र का कथावाचन होता है, तो कथा आगे बढ़ती है। कथा श्रवण के दौर में एक भक्त और पक्षी काकभुशुंडिजी समूची कथा को हृदयंगम कर लेते हैं। इसके बाद वह पक्षियों के बीच गरुड़ के माध्यम से इस रामकथा को आगे बढ़ाते हैं। रामकथा का क्रम आगे जारी रहता है। ऋषि याज्ञवल्क्य के माध्यम से ऋषि भरद्वाज सहित समूचे ऋषि, मुनि एवं महापुरुषों की जीवन परंपरा के यह जीवन को अनुप्राणित करनेवाली रामकथा प्राप्त होती है। स्वयं तुलसीदास ने उसी राम के चरित का मानस गान कर भक्ति युग में भारत के जनों को सुनाई, ताकि समाज में जो भय, डर और अंतर्मन की व्याकुलता है, वह दूर हो सके। अब देश काल का अतिक्रमण देखिए—शिव की कथा में काकभुशुंडि आते हैं, याज्ञवल्क्य के वाचन क्रम में महादेव उपस्थित हो जाते हैं। मानस के सुंदरकांड में एक दृष्टांत आता है। माता सीता की भावदशा का वर्णन जब हनुमान करते हैं, तो श्रीराम अश्रुपूरित हो जाते हैं। जो मर्यादापुरुषोत्तम है, वह माया के अधीन हो जाए। यह बात भक्त हनुमान को बेचैन कर देती है। उनको लगता है, गलती हो गई। कहीं भगवान् भी भाव-विह्वल होंगे। वे करुणरस के कारण भाव-विह्वल हो जाते हैं। यह देख शिवजी अपने को रोक नहीं पाते हैं, वे समाधि में चले जाते हैं। एक कथा के कितने भेद, कितने भाव और कितने रूप प्रकट होते हैं। देश और काल विविध रूपो में लोक के माध्यम से प्रकट होता है।

महाभारत में एक सूत्र है—मुहूर्तं ज्वलितं श्रेयः। इसमें तीव्रता की बात है। ऐसी तीव्रता, जिसमें अनंत ऊँचाई हो और अछोर गहराई हो। रामकथा में हनुमान, महादेव और श्रीराम की भावदशा क्षण में परिपूर्णता का परिचायक है। एक मुहूर्त। यानी सेकंड का वह हिस्सा, जो अविभाज्य है। ऐसे मुहूर्त में जीवन की समग्रता का संदेश हैं—श्रीराम के चरित्रों की ये कथाएँ। जब व्यक्ति क्षण में अपने अस्तित्व की अनुभूति कर लेता है, जब चंद पलों में शाश्वत का स्वाद लेता है, तब ही हम देश और काल की सीमा से परे जाते हैं। इसके लिए तीव्रता जरूरी है। इसिलिए कहा गया कि जीवन लंबी नहीं, बड़ी होनी चाहिए। लंबे कालखंड में धुआँ-धुआँ होते रहना सामान्य बात है। कहा गया—न तु धूमायितं चिरम्। जीवन के बड़े कालखंड में कोई बड़ा काम नहीं किया, तीव्रता से शाश्वत का अनुभव नहीं किया, प्रकाश की तलाश नहीं की, तो केवल धुआँते रहने से क्या लाभ होगा। खाया, पीया, सोया और चला गया।

भारतीय चिंतन संपूर्ण काल के महाप्रवाह को देखता है। यानी वह अखंडता में विश्वास करता है। भारतीय जीवन चिरंतन के पथ पर चलता है, जिसमें आदि स्वयं ही शामिल होता है और वर्तमान को समावेशित किया जाता है। यानी अविच्छिन्नता ही उसका रूप है। भारतीय लोक में शाश्वत जीवन को प्रश्रय मिलता है, जिससे मूल्य, आदर्श, जीवन के उदात्त भाव को संपोषित और संवर्द्धित किया जा सके। यह शाश्वत ही विराटता को प्रकट करता है। चैतन्य भारत के निर्माण में चिरंतन की अंतर्यात्रा के साथ शाश्वत जीवन की अभिव्यक्तियों एवं अनुभवों को अनुप्राणित और अंतर्निहित करने की परंपरा ही भारतीय जीवन की विशेषता रही है। इस चैतन्य भारत में लोक, परंपरा, परिमान के साथ काव्य, दर्शन, यूटोपिया और मिथकशास्त्र सबकुछ मिलता है। इस प्रकार भारतीय चिंतन अखंडता, अविच्छिन्नता, शाश्वतता और चैतन्यता का पोषक रहा है। हालाँकि मनुष्य के मानस में सामंजस्य है, लेकिन उसका व्यावहारिक जीवन इतिहास के अपेक्षा काव्य, दर्शन, यूटोपिया और मिथकशास्त्र से अधिक प्रचोदित और विर्निमित होता है। खंडकाल के बोध से धर्म, भाषा, संस्कृति या रचनात्मक समाज का निर्माण नहीं होता। इसके निर्माण में काव्य, दर्शन और मिथकीय घटना, व्यक्ति और जीवन का प्रभाव होता है। अशोक, अकबर और नेहरू से ज्यादा प्रभाव पतंजलि, चाणक्य, तुलसी और महात्मा गांधी का हमारे जीवन पर रहेगा। शिव, राम, कृष्ण और बुद्ध होने के बावजूद भी उनकी ऐतिहासिकता का कोई महत्त्व नहीं। सामान्य जन अपने सार्वजनिक जीवन में, तो बौद्धिक जन अपने रचनात्मक जीवन में राम-कृष्ण के मूल को ही अस्वीकार करते हैं। इसके बावजूद २०वीं सदी के सबसे उर्वर व्यक्ति तिलक, गांधी और लोहिया के जीवन पर इनका प्रभाव परिलक्षित होता है। जनमानस को इससे कोई भेद नहीं होता कि गांधी के राम, दशरथी पुत्र है या नहीं। लोहिया को समाज एवं संस्कृति के निर्माण में शिव, राम और कृष्ण की निर्णायक भूमिका व महत्त्व को लेकर कोई शंका नहीं थी। ये बातें देश और काल के परे है, कदाचित् इसीलिए उन्होंने चित्रकूट मेले का आयोजन प्रारंभ कराया था, ठीक उसी प्रकार जैसे तिलक ने गणेशोत्सव।

भारतीय जीवन में देश काल की सीमा है और उसका अतिक्रमण भी है। सीमा के अंदर आदर और समर्पण का भाव है तो अतिक्रमण की अवधि में शाश्वत को स्पर्श करने पर विराट् के स्पंदन को अनुभूत करने का आग्रह है। जीवन में सीमा और अतिक्रमण के बीच सदैव संतुलन का प्रयास चलता है। इन प्रयासों का हम दैनिक जीवन के सामान्य कर्मकांड, पूजन पद्धति और स्तुति में भी अवलोकन कर सकते हैं। जब हम शिवालय में जाते हैं, तो उस अव्यक्त और अविनाशी के शरीर को धोते हैं, माँजते हैं, चमकाते हैं, बार-बार उनको दूध, जल, घी, मधु और फल तथा मिष्टान्न से भरते हैं। ईश्वर के विग्रह को जहाँ अपने समर्पण भाव से भरते हैं, वहीं दूसरी ओर अपने जीवन के अनंत प्रवाह को रस से आप्लावित करते हैं। जब इससे मन नहीं भरता है तो घर में कर्मकांड के समय गोबर, मिट्टी और कसैली से गौर-गणेश और शिव का निर्माण करते हैं, एक निराकार को आकार देते हैं। उसमें प्राण प्रतिष्ठा करते हैं, उसके बाद स्वयं ही उससे अपने प्राण में रस और रंग के लिए भक्ति का निवेदन करते हैं। भीतर की भक्ति का प्रकटीकरण बाहर के कर्मकांड मे होता है और बाहर के कर्म के उमड़ाव से भीतर को भरने का प्रयास जीवनभर चलता रहता है। शिव, राम और कृष्ण विराट् है लेकिन उनको लोक जीवन में उतार लाते हैं। उनके विग्रह के साथ ही उनका जन्मोत्सव, विवाहोत्सव और कर्मांत्सव मनाते हैं। असीम अनंत को उत्सव, पर्व और दिवस के अनुष्ठान के साथ बाँध देते हैं। इसलिए हमारी पहचान केवल देश और काल की सीमा में व्यक्त घटनाएँ और स्मृतियाँ भर नहीं होती हैं, इसमें प्रलोभन और वासना से अधिक जीवन के सत्य का प्रकटीकरण होता है। यही कारण है कि नचिकेता द्वारा यम के सारे प्रलोभन और वासना के सुख को ठुकरा दिया जाता है। उसे तो बस शाश्वत का दर्शन चाहिए होता है। मूल्यबोध का निर्माण और मर्यादा के बीच जीवन के सत्यों का उद्घाटन ही भारतीय जीवन की शाश्वत परंपरा की कसौटी रही है। इसलिए हमारे यहाँ कहा गया, 'तस्य भासा सर्वमिदं विभाति, तमेव भान्तामनुभाति सर्वम्, यानी उन्हीं के प्रकाश से सब प्रकाशित होता है। उन्हीं के प्रकाशित होने पर सब उनके प्रकाश से प्रकाशित होते हैं।'

समय की दो गतियाँ हैं। देश में यह गति हमारे कर्म और हमारे अनुष्ठानों से जुड़ी होती हैं। अनुष्ठान में भी यह गति है और समय की यात्रा में भी है। यज्ञ हो, जप हो, कर्मकांड हो, प्रार्थना हो, या कीर्तन और गान, इन सब क्रियाओं में देश काल का समागम होता है। कई बार अतिक्रमण भी हो जाता है, कौन देव है और कौन भक्त पता ही नहीं चलता है। तुलसी का विष्णु से विवाह हो या शालिग्राम का शुद्धीकरण। अनुष्ठान के माध्यम से हम अपने इष्टदेव को शुद्ध और सात्त्विक करें या नहीं करे, लेकिन इस क्रम में स्वयं अपने जीवन का पवित्रीकरण अवश्य करते हैं। अनुष्ठान जीवन का तालमेल है तो विश्व और सृष्टि के साथ भी तालमेल है। अपने कर्म और क्रियाओं के माध्यम से लौकिक व्यवस्था को अलौकिक आधार देना ही भारतीय जीवन की विशेषता हैं। जब हम अलौकिक देश काल की व्यवस्था बनाते हैं, तब कोई हस्तक्षेप नहीं होता है। सब हमारे मन के अनुकूल होता है। हरेक खंड के कर्म में अखंड

समाहित हो जाता है और अखंड के चिंतन में वह शाश्वत स्वयं को लघु और व्यक्त बना लेता है। लोक में यह देश की गति है।

समय की एक गति काल की होती है। इसमें वह चक्रीय गति करता है। समय की सूक्ष्मतम इकाई परमाणु से लेकर दिन, रात, ऋतुएँ, आकाशीय तारामंडल, ग्रह, नक्षत्र यहाँ तक की ब्रह्मांड भी चक्रीय गति का अनुसरण करते हैं। इसी प्रकार जीवन भी, चक्रीय गति से चलता है। जन्म, विकास, बचपन, युवा, प्रौढ़, बुढ़ापा, मृत्यु और पुन: जन्म। चक्रीय गति। लेकिन व्यक्ति क्या देखता है? मानव को, उसकी गति को, उसको गतिमान करनेवाले काल को नहीं। इसके कारण ही उसे सबकुछ रेखीय विकासमान प्रतीत होता है। जबकि यह समय की गति नहीं, मानव की गतिशीलता है। मानव की गतिशीलता में व्यक्ति की मृत्यु को प्राप्त होना एक खंडित बिंदु या पड़ाव स्थल हो सकता है, एक नए विकास के लिए, लेकिन काल के लिए यह सतत यात्रा है। गतिमान, चक्रीय रूप में। ठीक उसी प्रकार जैसे विराट् का सूक्ष्मतम से लेकर अनंत रूप गतिमान है। इसे समझने के लिए एक उदाहरण। हम धरती पर चलते हैं, तो लगता है कि रेखीय या एक दिशा में या सीधा और थोड़ा इधर-उधर चलते हैं, लेकिन तब भी हम चक्रीय चल रहे होते हैं, क्योंकि यह पृथ्वी तो गोल है, और इसकी विराटता के सापेक्ष हमारे पैर या वाहन की गति तो न्यूनतम और सूक्ष्मतम या नगण्य है।

चक्रीय गति में वही घटनाएँ कैसे आती हैं? सृष्टि को जीवन लीला क्यों कहा गया? गीता के (८-१८) श्लोक में कहा गया कि जब "ब्रह्मा का दिन प्रारंभ होता है, सभी अभिव्यक्तियाँ अव्यक्त स्थिति से उत्पन्न होती हैं, रात्रि आने पर, वे निश्चत ही केवल उसी में लुप्त हो जाती हैं, जिसे अव्यक्त कहा जाता है।" अव्यक्त यानी? ठीक उसी प्रकार जब लकड़ी यानी अव्यत की रगड़ से आग निकलती है। बीज से वृक्ष निकलता है। अल्प काल में हम भी तो वही करते हैं। दिन में कर्म करते हैं और उसी शरीर के साथ रात को सोने चले जाते हैं। समस्त शक्तियाँ सुषुप्तावस्था में चली जाती हैं और जागरण के साथ शक्तियाँ व्यक्त होती हैं।

समय की वर्तुलकार दृष्टि भी है। इस कारण जीवन की सारी गति वर्तुलकार यानी शंखीय रूप में चक्रीय है। भारतीय दर्शन में कदाचित् इसीलिए जीवन को जीवन-चक्र कहा गया। वर्तुल या चक्रीय का तात्पर्य कि जहाँ से हम आरंभ करते हैं, वहीं पुन: एक समय के बाद पहुँच जाते हैं। दिन है श्रम, और रात है विश्राम। उसी प्रकार जन्म है गति, यानी कर्म, और मृत्यु है पड़ाव यानी विश्राम। इसी प्रकार सृष्टि है श्रम, और प्रलय है विश्राम। भारतीय जीवन में इसी कारण कल्प और मन्वतर को गति कहा गया। सृष्टि को ब्रह्मा का दिन और प्रलय को ब्रह्मा की रात कहा गया। दिन यानी जीवन के साथ कर्म, धर्म और गति। रात यानी मृत्यु के साथ विश्राम। पुर्नजन्म के साथ वही गति, कर्म और धर्म की राह। इसी कारण गीता में कहा गया कि—मैं ही सृजन करनेवाला और मैं ही उसे समाप्त करनेवाला हूँ। यह गति ही प्रमुख है। यह गति, जो हमारे जीवन में है, वही सृष्टि में है। जो सृष्टि में हो रहा है, वही हमारे अंदर भी गतिमान है, इसलिए यहाँ जीवन के बाद मृत्यु नहीं है। जीवन के बाद पुन: जीवन है। जीवन का नवीनीकरण है। निरंतर साधना है। नित्य नया होनेवाला चक्र है। ऋतुचक्र। ऋत बराबर गति, प्रवाह और निरंतरता का अनुभव।

जहाँ देश और काल है, वहाँ ऋतु है, सत्य है। सावधि में घटनाएँ होती हैं। पुन: वह निरपेक्ष काल में समा जाती है। चूँकि सबकुछ सूर्य सापेक्ष है। अतएव सबकी गति भी सत्य है। चंद्र का पृथ्वी के, पृथ्वी का सूर्य के चहुँओर चक्रीय गमन-एक घूर्णन, दूसरा परिभ्रमण। जैसे पृथ्वी अपने अक्ष पर सूर्य का लगभग २४ घंटे में घूर्णन करती है और ३६५ दिन में परिभ्रमण। इस परिक्रमण के कारण ही ऋतु परिवर्तन होते है। घूर्णन से दिन-रात और परिभ्रमण से साल बनता है। दिन-रात के बनने में चंद्र, पृथ्वी का परिभ्रमण का भी कार्य करता है। इस सृष्टि की विशालता का अनुमान इसी से लगाया जाता है कि पृथ्वी द्वारा सूर्य का चक्कर एक लाख सात हजार एक सौ साठ किलोमीटर प्रति घंटे की चाल से लगाया जाता है, तब एक साल लगता है। जबकि सौरमंडल में सूर्य से पृथ्वी तीसरा निकटतम ग्रह है। प्लेटो अधिकतम दूरी पर अवस्थित है तथा शनि ग्रह के सर्वाधिक २१ उपग्रह हैं। सब एक-दूसरे का चक्कर लगाते है। अब सवाल यह है कि पृथ्वी, चंद्र और अन्य बड़े तारे-नक्षत्रों को गति देनेवाला और इतने समय से अंडाकार मार्ग पर चलानेवाला कौन है? न्यूटन के नियम के अनुसार बाहरी शक्ति के बिना कोई भी प्रकृति का कण कहाँ खड़ा रहेगा!

देशकाल की सीमा में सबकुछ चक्रीय है। सूर्य और ऐसे ही सौरमंडल का आकाशगंगा के केंद्र पर घूर्णन और परिभ्रमण, आकाशगंगाओं का ब्रह्म के केंद्र पर परिभ्रमण। यह गतिशीलता ही संपूर्ण सृष्टि की क्रियाशीलता का परिचायक है। ये ही गति नहीं, बल्कि पृथ्वी सहित पूरा सौरग्रह द्वारा सूर्य का चक्कर लगाया जाता है। सब ग्रह एक साथ सूर्य की गति एवं चक्कर करते हुए एक बार एक ही दिशा में आते हैं, तो इस अवधि को ऋषियों ने चतुर्युग नाम दिया। सूर्य भी आकाशगंगा का चक्कर लगा रहा है। उसका एक चक्कर मनु काल के बराबर होता है। आकाशगंगा, अपने ऊपर के आकाशगंगा यानी ध्रुव का चक्कर लगा रहा है, और ध्रुव जिसका चक्कर लगा रहा है, वह कौन है? ध्रुव के उस चक्कर के समय का मान एक कल्प के बराबर होता है। यानी ब्रह्मा का एक दिन। वैदिक ऋषि भीतर और बाहर के संसार में पिंड और ब्रह्मांड में एक संवाद ढूँढ़ते थे। जो बाहर है, वह भीतर भी होगा। इतना बड़ा विश्व बाहर है, उसका लघु रूप भीतर भी होगा। मानव देह के भीतर जैसे एक-दूसरे से जुड़े संस्थान हैं, वैसे ही कुछ दूर-दूर दिखनेवाले ग्रह-नक्षत्र और तारों में भी होगा। सबका ऋत अगल-अलग हो सकता है, लेकिन सत्य एक होगा, उसकी सत्ता एक होगी। तभी तो ऋषियों ने कहा, 'एकं सद्विप्रा: बहुधा वदन्ति' यानी 'एक सत्ता का ही दर्शन करते हैं, जिसके अनेक नाम और रूप हैं।'

भारत में काल के मापन का ज्ञानबोध असाधारण है। इस ज्ञान को ऋग्वेद, उपनिषद् एवं अन्य वाङ्मय में बार-बार उल्लेखित किया गया।

आज से पाँच हजार साल पूर्व श्रीमद्भगवद्गीता के माध्यम से श्रीकृष्ण ने उसी सत्य को उद्घाटित किया था। श्रीमद्भगवद्गीता (अध्याय ०८ के श्लोक १७) में कहा गया कि "वे जो दिन और रात के सही मापन को जानते हैं, वे जानते हैं कि ब्रह्मा का एक दिन हजारों युग में समाप्त होता है, और एक रात्रि भी हजारों युगों में समाप्त होती है।" जब हमने कहा कि पृथ्वी एक ग्रह है और इसकी अपनी धुरी पर घूमने और सूर्य के चक्कर लगाने से दिन-रात और वर्ष आता है। तब किसी दूसरे स्तर पर वह एक क्षण भी हो सकता है। इसलिए पृथ्वी की कालगणना को लौकिक समय के माध्यम से व्यक्त किया गया। मनीषियों ने गणना कर बताया कि ४३२ करोड़ मानव वर्ष से मिलकर ब्रह्मा का केवल एक कल्प बनता है। इस प्रकार हमने संकल्प मंत्र के माध्यम से समय और दूरी के अनंत विस्तार का चिंतन एवं मनन किया।

चक्रीय गति में वही घटनाएँ कैसे आती हैं? सृष्टि को जीवन लीला क्यों कहा गया? गीता के (८-१८) श्लोक में कहा गया कि जब "ब्रह्मा का दिन प्रारंभ होता है, सभी अभिव्यक्तियाँ अव्यक्त स्थिति से उत्पन्न होती हैं, रात्रि आने पर, वे निश्चत ही केवल उसी में लुप्त हो जाती हैं, जिसे अव्यक्त कहा जाता है।" अव्यक्त यानी? ठीक उसी प्रकार जब लकड़ी यानी अव्यत की रगड़ से आग निकलती है। बीज से वृक्ष निकलता है। अल्प काल में हम भी तो वही करते हैं। दिन में कर्म करते हैं और उसी शरीर के साथ रात को सोने चले जाते हैं। समस्त शक्तियाँ सुषुप्तावस्था में चली जाती हैं और जागरण के साथ शक्तियाँ व्यक्त होती हैं। इसे और स्पष्ट तरीके से गीता के (८-१९) में कहा गया है कि "प्राणियों का वही विशाल समूह गीता के (जो ब्रह्मा के पहलेवाले दिन में था) रात्रि के प्रारंभ होने पर अपनी अनिच्छा के उपरांत भी विलीन हो जाता है, और फिर दिन के प्रारंभ होने पर बाहर आ जाता है।" यह अस्तित्व संपूर्णता में है। विकास और संकोचन उसके स्वभाव हैं। सब अपनी भूमिका निभाकर चले जाते हैं। जीवन एक पुनरावृत्ति है। हर दिन एक ही प्रक्रिया का दोहराव।

समाधि में व्यक्ति वस्तुओं को दृष्टि से अलग और वैयक्तिक रूप में देखते हैं, परंतु अपने अंत:करण में उन्हें समष्टि रूप में अनुभव करते हैं, जो परमानंद से ओत-प्रोत होता है। समाधि की अवस्था में व्यक्ति का भौतिक शरीर, श्वास, हृदय एवं मानसिक क्रियाएँ पूर्णत: स्थिर हो जाती हैं तथा व्यक्ति को ईश्वर के साथ चेतन एकत्व की अंतरंग अनुभूति होती है—न केवल सृष्टि में अपितु सृष्टि के परे भी। भारतीय ऋषियों ने माना कि मौन, एकांत और ध्यान आदि प्रक्रियाओं से व्यक्ति समाधि की ओर अग्रसर होता है। यह प्रारंभिक चरण है, जब व्यक्ति अपनी साँसों एवं स्थूल शरीर को शांत एवं स्थिर कर स्वयं के अंदर प्रवेश करता है, और जब गहरे ध्यान में हम जाते हैं, तो शरीर क्रमश: जड़ हो जाता है। श्वास धीरे-धीरे क्षीण और समाधि की स्थिति में मिटने भी लगती है। अध्यात्म बताता है कि ऊर्जा जब शरीर की ओर बहती है, तब हमारा जीवन शरीर से बँधा होता है, और तब सांसों की आवश्यकता होती है। लेकिन समाधि की स्थिति में हम आत्मा या सृष्टि के परमतत्त्व के साथ एकाकार हो जाते हैं, तब ऊर्जा रूप में श्वास की आवश्यकता हमारे शरीर को बिल्कुल न्यूनतम होती है। समाधि की निर्विकल्प की स्थिति में इस ऊर्जा की आवश्यकता भी नहीं होती है। उस समय भी साँस या ऊर्जा होती है, लेकिन जीवन एक दूसरे उपक्रम से जुड़ जाता है। यह उपक्रम अस्तित्व के साथ जुड़ाव का है। जहाँ साँस, ऊर्जा, जीवन का कोई अर्थ नहीं रह जाता है। समाधि की इस स्थिति में व्यक्ति अस्तित्व के साथ एकाकार होता है। वह स्वयं को ब्रह्मांड के अवयव के रूप में देखता और अनुभूत करता है।

तेलपा निवास, नजदीक एच-११६ एजी क्वार्टर,
हिनू कॉलोनी, राँची-८३४००२ (झारखंड)
दूरभाष : ९३०८२७०१०३

कविता

फिजीशियन एवं सर्जन

• अनिल चतुर्वेदी

दो मित्र खड़े चुपचाप
दोनों में हुआ वार्त्तालाप
एक ने दूजे से कहा—
सर्जन की पूछ होती सदा
फिजीशियन को याद करते यदा-कदा
पहला था सर्जन, बोला—
मैं हूँ सर्जन करता हूँ शल्य क्रिया
मित्र तुम्हारी तो केवल बातचीत की प्रक्रिया
मैं जो मिला चाकू उसी के गड़ गया
तुम फिजीशियन ने सद्भावना की गंध बाँटी
और बिखरे सदा जो बिखर जाते हैं
उन्हें भूल जाते हैं जो चुभते, गड़ते, कसकते हैं
वे सदा याद आते हैं।

ए-३/३०५, एकता गार्डन
नई दिल्ली-११००९२
दूरभाष : ९८१००४५२७७

कविताएँ

● ब्रज किशोर बक्शी

माँ की सीख

इक्कीसवें दिन
पील्ले ने आँखें खोली
मिचमिची आँखों से
आदमी देखकर
कुछ भय से
कुछ कुतूहलवश
पहले तो गुर्राया
फिर माँ के स्तन में
अपना सिर छुपाया।
माँ ने दिलासा दिया
प्यार से चाटा
फिर समझाया—
सामने जो आदमी है
आसामी मोटा है।
तेरा ग्राहक लगता है
क्योंकि मालिक के साथ है।
डरो मत!
मालिक को अच्छी रकम दे
तुझे ले जाएगा
प्यार जताएगा
दूध-बिस्कुट खिलाएगा
गद्दे-पलंग पर सुलाएगा
बीबी-बच्चों को हटा
तुझे गोद में बिठाएगा
कार में सैर कराएगा
आवारा कुत्तों से बचाएगा
गोश्त खिलाएगा।
सुगंधित साबुन से
टब में नहलाएगा।
सुबह-शाम
खुद की नहीं
तुम्हारी सेहत के लिए
तुझे पार्क में
सैर कराएगा
सर्कस के भिन्न-भिन्न
करतब तुझे
सिखलाएगा।
जरूर सीखना,
पर दूध, गोश्त
नमक-रोटी खाकर
अपनी जाति की
मर्यादा नहीं भूलना।
तन से, मन से
मालिक के प्रति
सदा वफादार रहना।
किंतु एक बात
हमेशा याद रखना—
आदमी के साथ रहकर
आदमी मत बन जाना!

सच पूछें तो

न साँप आदमी बन सकते हैं
न उल्लू या तोता आदमी बन सकते
कुत्ते भी आदमी नहीं बन सकते
न गधे आदमी बन सकते हैं।
किंतु
आदमी की एक ऐसी जाति है
जिसमें ज्यादातर
उल्लू, तोता, गधे, कुत्ते, साँप
सभी मिल जाते हैं।
सच पूछें तो
इस प्रजाति में
ऐसे कम ही जीव मिलते हैं
जिन्हें हम आदमी
कह सकते हैं।

जनता

सत्ता की कुरसी तक
जाने का रास्ता
एक सड़क से होकर
है गुजरता
जिसे कहते हैं
जनता।
सत्ता पाकर
धोखा देना है जिसे
उसे भी सभी कहते हैं
जनता।
शायद
अब जनता जानने लगी है।

अक्षम्य

मान व मन
बड़ा ही बाँका
चपल अश्व यह
शिखर हिमालय का नापा
जमाया अपना पताका
वारिधि के तल पहुँच
उसके रग-रग में झाँका।
अंतरिक्ष में उड़ाया यान
चरणचिह्न छोड़े भूमि राका।
कंप्यूटर-टी.वी. रोबोट रचा
अणु को किया ध्वंस
प्रोटॉन-न्यूट्रॉन मिला
पर नहीं मिला तोष।
विज्ञान का अहं
नहीं हुआ कम
हीरोसीमा-नागासाकी
छह अगस्त उन्नीस सौ पैंतालीस
मानवता का काला दिवस साखी।
मन की वामिनी
विभीषिका यामिनी
दस्यु! मंदमति।
प्रकृति से उत्पन्न
प्रकृति के ही बलात्कार में निमग्न
कैसी विडंबना
नए-नए आविष्कार
या प्रवंचना
भस्मासुर को
शिव का वरदान
दम लेगा—
धरा को बना श्मशान
बचेगा शेष
अस्थि-भस्म
और प्रकृति फैलाए आँचल
चिद्दी-चिद्दी
भिगोएगी भस्म
बहाकर अश्क
और काल!
करेगा अट्टहास
प्रकृति पर, सृष्टि पर
मनु-पुत्रों पर
और उसके भस्म से
सनी आँचल पर
सत्य है—
जो वरदान को
वरदान बनाए रखने में
अक्षम!
नियंता से वे
नहीं होते क्षम्य!
वाह रे अहं
या वहम
मानव-मन
श्रेष्ठ जीवन
या वल्गा विहीन
अश्व…

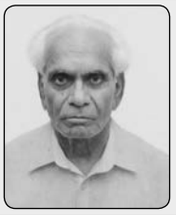

सुपरिचित लेखक। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। साहित्यिक, आध्यात्मिक एवं दार्शनिक रचनाओं का अध्ययन, पठन एवं स्वांतः सुखाय कतिपय साहित्यिक लेखक।

एलमपुरयिडोम धोबी कुलम रोड
पूजिथल, पी.ओ. अझियूर
वडाकरा, कोझीकोड-६७३३०९ (केरल)

महाश्वेता रात्रि में साहित्य-वीणा

• श्रीराम परिहार

सृष्टि में एकता की अनेकता है। भारतीय विचार दर्शन इसी मूल बात पर आधारित है। एक परम सत्य ही अनेक रूपों में प्रकट है। जब मानसिक सृष्टि और प्रकृत सृष्टि का उत्स एक ही है, तब 'सब समान है', का सिद्धांत स्वयं सिद्ध हो जाता है। भारतीय दर्शन में समानता का विचार बहुत महत्त्वपूर्ण इसलिए है कि यह सबको समानता की भूमि पर समरस करता है। इसीलिए सारे मत, संवाद, प्रश्न-उत्तर 'एको देव: सर्वभूतेषु गूढ:' के निकट ही स्वयं को रखने का प्रयास करते हैं। भारतीय दर्शन सृष्टि के रहस्यों और दृश्यों को समझकर तथा जानकर उत्पन्न और विकसित हुआ है। दृश्य के भीतर के रहस्य को समझकर विचारों का उद्‌भव हुआ है। अत: भारतीय विचार-दर्शन की पीठिका का आधार परम सत्य द्वारा रचित सृष्टि है। रचनेवाला एक है। जिससे विविध रूप उत्पन्न हुए। उनमें अंतर्निहित तत्त्व एक है। सबकी प्राण-शक्ति एक है। उत्पत्ति, स्थिति, लय का नियंत्रक एक है। इस नाना रूप जगत् के प्राण-प्राण में वह अमृत-सत्य पैठा हुआ है। सब एक ही सत्य से उत्पन्न हुए हैं। सब सृष्टि की गाड़ी में साथ-साथ बैठे हैं। समानता और समरसता सबके बीच प्राकृतिक रूप से बने संबंधों की हरी दूब पर बैठकर विहँस रही है। वह परम सत्य 'रस' ही है। उससे उत्पन्न सभी कण-कण में रस भी प्रवाहित है। समरस होना प्रकृतित: है। स्वाभाविक है। सत्य की इच्छा से है।

प्रकृति के तत्त्वों में आपस में लड़ाई नहीं होती। पृथ्वी, आकाश, जल, वायु, अग्नि—सब अपना-अपना काम करते रहते हैं। इनसे निपजी प्रकृति की संपूर्ण वैभव-संपदा भी तो शांत-सरल होकर और रहकर अपना-अपना भाग और दाय जगत् को गतिशील बनाए रखने हेतु देती रहती है। वन में छोटे-बड़े, पतले-मोटे सब प्रकार के और अनेक प्रजाति के पेड़ रहते हैं। वे कभी आपस में लड़ते-झगड़ते नहीं हैं। प्रकृति, नभ, थल, जल में असंख्य जीव-जंतु रहते हैं। वे सब अपने-अपने गुण-कर्म अनुसार क्रियाएँ करते हुए जीवित रहते हैं। जन्म-मरण, यश-अपयश, लाभ-हानि विधाता के हाथ में है। मनुष्य के हाथ में कर्म है। आलस्य महाशत्रु है। ज्ञान-गुरु है। अध्ययन मित्र है। अध्यवसाय उत्तम मार्ग है। भूमि माता है। आकाश पिता है। जल, अग्नि, वायु देवता हैं। इनका यजन भी करना और इनके प्रति सम्मान का भाव रखना भी मानवीय अच्छाई कहीं जा सकती है। सब तत्त्व दैव उपहार हैं। सभी जीव परमात्मा के बनाए हुए हैं। हम भी परमात्मा की रचना हैं। तब सभी मनुष्य हमारे बंधु-भगिनी हैं। सभी जीव हमारे संगी-साथी हैं। भक्त शिरोमणि तुलसीदास विनती करते हैं, 'सीय राममय सब जग जानी। करहुँ प्रणाम जोरि जुग पानी।'

भारतीय वाङ्मय के उद्‌गम के मूल स्रोत दो रहे हैं—पहला परम सत्य द्वारा रचित सृष्टि को सूक्ष्मातिसूक्ष्म रूप में देखकर, समझकर, जानकर, अनुभव समृद्ध हेकर वाणी द्वारा प्रस्फुटन। दूसरा, स्वयं प्रतिभा द्वारा आत्मबोध प्राप्त कर अपरा और परा विद्या दोनों को मंत्र की शक्ति से देखकर उसे वाक् द्वारा जगत् के सामने रखना। पूर्व जन्म संचित संस्कार, अध्ययन, अभ्यास, कर्म-प्रभाव, मनन, चिंतन, सब बाद के सोपान हैं। अत: भारतीय वाङ्मय उद्‌गाता ऋषि और कवि के सामने प्रकृति और उसमें स्थित परमप्रकृति का भद्र स्वरूप और शिव-संकल्प सदैव स्थायी रूप से रहा है। इसलिए वह प्रमाणित करता रहा है—भेद बाहरी है। विविधता रूपगत है। अंतरतम में एक ही ज्योति का सत् प्रकाशित हो रहा है। रूपगत विविधता की छाया के पार एक अरूप, अनाम, अजर, अमर, अखंड सत्य आभासित हो रहा है। सब कुछ एक से अनेक प्रकार होकर नाना रूपों, विविध छवियों, अनेक वर्णों, अनंत क्रियाओं में यशस्वी हो रहा है। बरतन न्यारा-न्यारा है। सबमें पाणी एक ही है। पानी की समानता और समरसता अखंड-अविभाज्य है।

विश्व का प्राचीनतम ग्रंथ ऋग्वेद है। ऋग्वेद से लेकर वर्तमान तक भारतीय वाङ्मय की नर्मदा अविराम प्रवहमान है। वैदिक साहित्य और लौकिक साहित्य (वैदिक संस्कृत-लौकिक संस्कृत) वर्तमान साहित्य तक की संपूर्ण परंपरा का आदि और अक्षुण्ण स्रोत रहा है। वैदिक साहित्य-संहिता, ब्राह्मण ग्रंथ, आरण्यक और उपनिषदों के अक्षय भंडार से समृद्ध है। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद चारों भारतीय और विश्व-साहित्य की अनुपम निधि हैं। चारों वेदों के उपवेद भी हैं। ऋग्वेद का आयुर्वेद, यजुर्वेद का धनुर्वेद, सामवेद का गंधर्ववेद और अथर्ववेद का भास्करवेद; ये चारों उपवेद भी वेदों के अंग ही हैं। चारों वेदों के चार महावाक्य हैं—ऋग्वेद का अहं ब्रह्मास्मि। यजुर्वेद का तत्त्वमसि। अथर्ववेद का प्रज्ञानंब्रह्म। सामवेद का अयमात्माब्रह्म। 'वेदोऽसिलो धर्ममूलम्।' वेद सभी धर्मों के मूल हैं। वेदों से उद्‌भूत धर्म ही वैदिक धर्म है। वेद अपौरुषेय हैं। वेद सनातन तत्त्वों और सनातन परमप्रपृकति आधारित सत्य धर्म का समारंभ करते हैं—

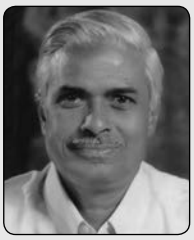

जाने-माने साहित्यकार। आठ ललित-निबंध संग्रह, एक नवगीत, एक संत-साहित्य आदि पुस्तकें प्रकाशित तथा पत्रिका 'अक्षत' का संपादन। 'बागीश्वरी पुरस्कार', 'सृजन सम्मान', 'श्रेष्ठ कला आचार्य सम्मान', 'निर्मल पुरस्कार', 'राष्ट्रधर्म गौरव सम्मान', 'ईसुरी पुरस्कार', 'दुष्यंत कुमार राष्ट्रीय अलंकरण' सहित अनेक सम्मान प्राप्त।

अत: वह सनातन धर्म है। सनातन धर्म की अनेक विशेषताओं में समानता और समसरता भी प्रमुख हैं। ऋग्वेद के सामनस्य सूक्त का आह्वान है—

सङ्गच्छध्वं संवदध्वं, सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथापूर्वे, सञ्जानाना उपासते॥
समानी व: आकूति:, समाना हृदयानि व:।
समानमस्तु वो मनो यथा व: सुसहासति॥ (ऋग्. १०-१९१-२-४)

एक समस्त भरी पुकार है—एक साथ जाओ, एक साथ बोलो, तुम्हारा मन एक हो। जिस प्रकार समस्त देव एकमत होकर यज्ञ भाग स्वीकार करते हैं। तुम्हारा संकल्प समान हो। तुम्हारा हृदय समान हो। तुम्हारा मन समान हो। तुम्हारा साथ सुंदर हो। महर्षि पाणिनि ने वेद को शरीर का रूपक देते हुए छह वेदांगों को शिक्षा-नासिका, कल्प-हाथ, व्याकरण-मुख, निरुक्त-श्रोत, छंद-पाद और ज्योतिष-नेत्र माना है। वेदों के दो भाग हैं—ज्ञानकांड और कर्मकांड। उपनिषद् ज्ञानकांड है। वास्तुशास्त्र, आयुर्वेद, धनुर्वेद, गंधर्ववेद कर्मकांड हैं। वेदांत दर्शन में वेदों के चिंतन को विस्तार और प्रसार दिया गया है। आदि शंकराचार्य का अद्वैत दर्शन, रामानुजाचार्य का विशिष्टाद्वैत दर्शन, निंबार्काचार्य का द्वैताद्वैत दर्शन, मध्वाचार्य का द्वैत दर्शन, वल्लभाचार्य का शुद्धाद्वैत दर्शन जीव और शिव की विशेष किंतु एक और अभिन्न सारूप्य स्थितियों की अपने-अपने चिंतन-शिखरों की यात्राएँ हैं। वृहदारण्यकोपनिषद् में याज्ञवल्क्य कहते हैं—'एष त आत्मा सर्वान्तर: (३.४.२) छान्दोग्योपनिषद् में आरुणि इसी बात को श्वेतकेतु को समझाते हुए कहता है—'स आत्मा तत्वमसि'। (६.८.७) वह आत्मा है। वही तू है। तुम भी वही हो। इसे और स्पष्ट रूप में भगवान श्रीकृष्ण श्रीमद्भगवद्गीता के अठारहवें अध्याय के बीसवें श्लोक में अर्जुन से कहते है, 'ईश्वर: सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति। ईशावास्योपनिषद् के मंगलाचरण में ब्रह्म के पूर्णत्व की सार्वकालिक, सार्वभौमिक अमृत-व्याख्या है—

ॐ पूर्णमद: पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥

ये भारतीय चिंतन के मूल स्रोत हैं। ब्रह्मसूत्र, उपनिषद् और श्रीमद्भगवद्गीता की प्रस्थान-त्रयी आदि शंकराचार्य के अद्वैत सिद्धांत की पीठिका है। छांदोग्योपनिषद् का सिद्धांत है, 'एकमेव अद्वितीयं ब्रह्म'। आदि शंकराचार्य (सन् ७८८-८२०) सहित सभी अद्वैतवादियों-मनीषियों की व्याख्या है—सृष्टि-रचना के पहले एकमात्र ब्रह्म का ही अस्तित्व (एकं एवं) था।'अद्वितीयं का अर्थ है—वह अद्वितीय है। वह अपने साथ दूसरी सत्ता नहीं रखता है। एक मात्र वह ही सत्य है। अर्थात् चेतन और अचेतन सत्ताओंवाली सृष्टि अवास्तविक (मिथ्या) है। सर्वोच्च ब्रह्म माया से आच्छन्न है। आत्मा, ब्रह्म का ही दिव्य अंश है। जब आत्मा को पुण्य-प्रभाव से या पूर्व जन्म के संचित कर्मफल से या आध्यात्मिक गुरु के सान्निध्य से अपने मूल स्वरूप का भान होता है, तब आंतरिक परिवर्तन की दिव्य प्रक्रिया प्रारंभ होती है। आत्मा अपनी मूल प्रकृति 'तत् त्वं असि' (वह तू है) के विषय में परिचित होती जाती है। वह स्वयं को भली-भाँति जानने लग जाती है। तब 'अहं ब्रह्मास्मि' (मैं ब्रह्म हूँ) का उसे अनुभव होने लगता है। वह अपने वास्तविक स्वरूप का साक्षात्कार करने लग जाती है। वह ब्रह्म समान और फिर ब्रह्ममय हो जाती है। तब यह नाना नाम रूपधारी जगत् अवास्तविक (मिथ्या) प्रतीत होता है। अद्वैतवादियों के मतानुसार यही सत्य उपनिषदों का सार है। छंदोग्योपनिषद् का 'एकमेव अद्वितीयं ब्रह्म' सिद्धांत इसलिए अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि यह ब्रह्म-जगत् के अंतिम सत्य की उद्घोषणा करता है।

हमारा विवेच्य विषय समानता और समरसता है। इसके वास्तविक स्रोतों को ही देखने-परखने का हमारा प्रयास है। हिमशिला का सिंधु-जल में तैरता हुआ एक-चौथाई भाग ही दिखता है। तीन-चौथाई पानी में डूबा रहता है। भूमि की सतह पर हुल्ल से फूटकर बहता हुआ जल-स्रोत भूगर्भ से अनंत-अदृश्य गहराई नापकर सतह पर आता है। हमारे भारतीय समाज की विविधवर्णी संरचना के वास्तविक अन्त:स्रोत जिस मानुषभाव के निर्झरों से अभिसिंचित हैं, उनमें आचमन, मंजन, पान, परोपकार की गहरी दृष्टि लेकर ही प्रवेश करना हितकर है। एक समरस समझ सूर्य, चंद्र, नक्षत्रों, बादलों, पर्वतों, वृक्षों, नदियों, सरोवरों, संतों ने भारतीय समाज को अपने ज्ञान, अपने कर्म, अपने आचरण और अपने जीवन से दी है—

तरुवर, सरवर, सन्त जणा, चौथा बरसै मेह।
परकारज कै कारणै, चारों धारी देह॥

भारतवर्ष संतों-भक्तों की भूमि है। यह कथन बहुत सार्थक, अर्थव्याप्त और प्रामाणिक है। संतों-भक्तों ने जैसा अनुभव किया, वैसा कथन किया और वैसा ही कार्य किया। इसलिए हमें उनमें मन की पवित्रता लगती है। वाणी की सत्यता प्रकट होती है। आचरण की शुद्धता आलोकित होती है। संतों-भक्तों ने तीनों स्तरों पर मन-वचन-कर्म की त्रिवेणी प्रकट की और उसकी सृष्टिहित में महत्ता प्रतिपादित की। वे कोरे उपदेशक नहीं हैं। वे केवल शब्द साधक नहीं हैं। वे मात्र उद्यमी भी नहीं हैं। वे जितने संत हैं। उतने ही भक्त हैं। उतने ही संस्कृति रक्षक हैं। उतने ही युग-चिंतक हैं। उतने ही समाज कल्याणक हैं। उतने ही सनातन धर्म के पोषक हैं। आत्मा-परमात्मा, धर्म, दर्शन, अध्यात्म के शिखरों की चिंतन और अनुभव यात्रा में भी मनुष्य जीवन का मोल और मानुषभाव की स्थापना का ज्योति-बिंदु उनके आज्ञाचक्र में ज्योतित होता रहा है। इस आलोकवलय में से ही वेदांत के अद्वैत दर्शन से एक रश्मि-रेख विशिष्टाद्वैत की प्रकीर्णित होती है। भगवद्पाद यामुनाचार्य के पटु शिष्य रामानुजाचार्य सन् १०१७-११३७ ने अनुभव किया कि सांसारिक जीवों और गृहस्थ जीवन जीनेवाले मनुष्यों की मुक्ति अद्वैत के महाकठिन पंथ से नहीं हो सकती। साधारण जन के लिए तो ब्रह्म का सगुण स्वरूप ही उद्धारक हो सकता है। सगुण की भक्ति की सहजता साधारण के लिए सध सकती है।

इसी चिंतन पीठिका पर उन्होंने छांदोग्योपनिषद् के सिद्धांत 'एकमेव अद्वितीयं ब्रह्म' की वास्तविक व्याख्या की 'अद्वितीयं' का तात्पर्य है, जिसके समान कोई दूसरा नहीं है। समानता या तुलना के लिए कोई अन्य का होना आवश्यक है। अद्वितीय का अर्थ अन्य के न होने से नहीं है। बल्कि अन्य का ब्रह्म के समान न था, न है, न होगा। रामानुजाचार्य और अद्वैत वेदांती यज्ञमूर्ति के मध्य इस बात पर सत्रह दिनों तक शास्त्रार्थ चला।

वेद-वेदांत के अद्वैत सिद्धांत को रामानुजाचार्य ने व्यावहारिक स्तर पर उतारने का संकल्प किया। उसमें वे सफल हुए। उनके पास एक समृद्ध परंपरा-बोध था। वेद, शास्त्र, उपनिषद्, पुराण, संस्कृत महाकाव्य,

बौद्धमत, जैनमत, नाथमत, सिद्धमत, शांकरभाष्य, लोकमत, लोकविश्वास, लोकअभिप्राय की अनटूटी अक्षुण्ण परंपरा थी। रूढ़ियों और भटकाव के आड़े-टेढ़े रास्तों पर चलते हुए समाज का अवांछनीय परिदृश्य था। विभेद की खाई थी। असमानता के पहाड़ थे। द्वैष की नदियाँ थीं। बीमार प्रतिस्पर्धा के अनेक टीले थे। समाज की समतल भूमि खुरदरी और ऊबड़-खाबड़ थी।

सगुणोपासना का एक अभिन्न भाग है—मंदिर में जाकर पूजा-अर्चना। रामानुजाचार्य ने मंदिरों की प्रचलित पूजा-पद्धति को स्वीकार करते हुए उन्हें नया रूप दिया। अनावश्यक कर्मकांड की जगह सहज भाव से समर्पण भक्ति को महत्ता प्रदान की। अपने समय में उन्होंने धर्म की नई व्याख्या करते हुए आत्मा के विस्तार को समान और समरस स्तर पर सब तक, सबमें बाँटकर जीवन को परउपकार में अर्पित कर देना मुक्ति का धर्म निरूपित किया। दमित, उत्पीड़ित, अस्पृश्यों के लिए पूजा पद्धति का विस्तार कर उनके लिए मंदिरों में प्रवेश का अपूर्व-अद्वितीय, साहसिक कार्य किया। सभी को ईश्वर पूजा करने, ईश्वर को जानने, ईश्वर को पाने और जीवनमुक्त होने का अधिकार है। इतना ही नहीं अंत्यज लोगों को उन्होंने 'थिरुकुलातार' संबोधन दिया, जिसका अर्थ तमिल भाषा में 'दिव्य माता लक्ष्मी के परिवार का सदस्य' होता है। रामानुजाचार्य ने कर्नाटक के मेलकोटे के भगवान् तिरुनारायण के मंदिर में अछूतों का प्रवेश कराया। सारे आलवार संत दमित, शोषित, पीड़ित, वंचित वर्ग के थे। उन आलवार संतों के तमिल भाषा में रचित स्तुतिगान को वैष्णव पूजा-पद्धति और मंदिर-पूजा-पद्धति में स्थान दिलाया। यह स्तुति गान आज भी होता हैं। प्रमाण यह है कि उनके गुरु रामानुजाचार्य के परम शिष्य तिरुक्कोट्टियूर नाम्बी से उन्होंने अष्टाक्षरी मंत्र 'ॐ नमो नारायणाय' का गूढ़ार्थ समझा। तिरुक्कोट्टियूर नाम्बी ने इस मंत्र को अन्य जन या शिष्य को बताने से मना करने के बाद भी रामानुजाचार्य ने मंदिर के शिखर पर चढ़कर जनसामान्य को बताया और अपने साथ सबकी मुक्ति की कामना की। रामानुजाचार्य ने जो आध्यात्मिक और धार्मिक कायाकल्प हेतु समाज उद्धार की दिशा में कार्य किए, वे संत साहित्य के 'गुरुपरमपारस', 'प्रपन्नमित्र' और 'दिव्यसूरिकारिका' में लिपिबद्ध हैं।

हमारे ऋषियों-मुनियों ने संसार को देखकर और जीवन को समझकर एक ध्रुव सत्य उद्घोषित किया—जीवन क्षणभंगुर है। एक दिन जीवन का अंत होना ही है। परंतु स्थितियाँ भिन्न ही दीखती हैं। एक दिन मरना सबको है। मरना कोई नहीं चाहता। भोजन सबको चाहिए। खेती कोई नहीं करना चाहता। दूध सबको चाहिए। गाय-भैंस कोई नहीं पालना चाहता। छाया और प्राण-वायु सबको चाहिए। वृक्ष कोई नहीं लगाना चाहता। पानी सबको चाहिए। पानी कोई नहीं बचाना चाहता। पुराने जल-स्रोतों और नदियों के उद्गमों को पुनर्जीवित और सजल कोई नहीं करना चाहता। समाज में समता और समरसता सब चाहते हैं। समाज-जीवन में व्यावहारिक रूप से इसे लागू करने का जमीनी स्तर पर सद्प्रयास कोई नहीं करना चाहता। पर यह पावन और उजासमय कार्य हमारी संस्कृति-परंपरा में संतों ने किया। आचार्यों ने आलोक फैलाया। सृष्टि धर्म के साथ-साथ मानव-धर्म की चिंतामणि को धरती की हरित हथेली पर रखा। उसके आलोक में सब (मनुष्य सहित अन्य प्राणिमात्र) अपना निज स्वरूप को ठीक-ठीक अवलोक सकें। धर्म की सही सरणियाँ बनाईं। उसके दस लक्षणों के अर्थ दीप जलाए—

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्॥

रामानुजाचार्य की शिष्य परंपरा में मध्वाचार्य, वोपदेवाचार्य, देवाधिप, पुरुषोत्तम, गंगाधर, रामेश्वर, द्वारानंद, देवानंद, श्रीआनंद, नरहर्यानंद, राघवानंद और रामानंद आते हैं। इसका संकेत स्वामी रामानंद के ग्रंथ 'रामार्चनपद्धति' (श्लोक ३,४,५) में दिया है। स्वामी रामानंद (सन् १२९९-१४१०) स्वामी राघवानंद के शिष्य थे। राघवानंद दक्षिण भारत से भक्ति की रसधार को अपने हृदय कमंडल में भरकर लाए थे। उनसे दीक्षित होकर स्वामी रामानंद ने 'रामावत संप्रदाय' का अभूतपूर्व प्रचार कर उसका प्रसार किया। रामानुजाचार्य द्वारा विशिष्टाद्वैत आधारित सगुण भक्ति परंपरा में रामभक्ति को जनमानस के हृदयांगण में कलश-मंडित किया। उनकी बारह शिष्यों की परंपरा जग-जाहिर है। इन शिष्यों की भक्ति में निर्गुण-सगुण का मणिकांचन योग है। स्वामी रामानंद का व्यावहारिक प्रयास रहा कि उन्होंने भक्ति की निर्गुण-सगुण परंपरा में रामभक्ति को समाज में समानता और समरसता स्थापित करने का सहज, सजल, तरल, सरल आधार बनाया। उनके शिष्यों में अनंतानंद, पीपा, धन्ना, सुरसुरानंद, सुखानंद, कबीरदास, रैदास, भावानंद, सेन, पद्मावती और सुरसुरी जगत प्रसिद्ध हैं। इन शिष्यों में सगुणोपासक-निर्गुणोपासक दोनों हैं। कबीर, रैदास, धन्ना, सेन आदि निर्गुणोपासक हैं। अनंतानंद के शिष्य नरहर्यानंद और उनके शिष्य गोस्वामी तुलसीदास हैं। तुलसीदास ने रामभक्ति की अक्षय-अविरल नर्मदा प्रवाहित की। आज जो सनातन धर्म और हिंदू संस्कृति का उदात्त रूप हमारे पास है, उसमें स्वामी रामानंद का बहुत भद्र दाय है।

भागीरथी का शाश्वत प्रवाह है। पंचगंगा घाट हैं। शुभ्र कुटीर है। भद्र संन्यासी बैठा है। वह तपःपूत है। वह तपःसिद्ध है। वह ज्ञानमंडित है। वह भक्तिद्रवित है। प्रातःकाल की वेला है। अरुणोदय होनेवाला है। प्राची के आँगन में उषा का प्रवेश हो रहा है। संन्यासी का मुख-मंडल तपःज्योति से दिपदिप है। तन पर गैरिक वसन हैं। मानो अरुणोदय की रश्मियों का रंग संन्यासी के वस्त्रों में आकर समा गया हो। जैसे गंगा ब्रह्मलोक से आकर शिवजी की जटा में समा गई हो। कमंडल है। कमंडल में गंगा है। एक गंगा धरती पर अखंड-अजस्र-अनवरत-अविराम-अपरिमित बह रही है। वही गंगा संन्यासी के कमंडल में ससीम-साकार होकर शांत-मौन है। दोनों गंगा हैं। एक शाश्वत-निराकार अनंत-अनंत रूप में है। दूसरी कमंडल में सीमित है। दोनों के मूल गुण-धर्म एक हैं। दोनों एक तत्त्व हैं। दो रूप हैं। यही ब्रह्म और जीव की स्थिति हैं। जल, जल है। ब्रह्म और जीव का मूल स्वरूप एक है। एक जल बाहर है। एक जल भीतर है। भेद नाम और रूप का है। कमंडल का जल सुरसरि में मिलकर गंगा हो जाता हे। जीव ब्रह्म से मिलकर ब्रह्म हो जाता है। दोनों में अंतः समानता है। दोनों में तरल समरसता है। जल मुक्ति चाहता है। जीवन भी मुक्ति चाहता है। जीवन की रक्षार्थ दंड है। यह संयमित करता हैं। संन्यासी के भीतर करोडों सूर्य उदित होते हैं। अखंड-अनंत तेज प्रकाश में संन्यासी का ललाट मणि सा दमक उठता है। समान प्रवृत्ति, समान हृदय, समान मन, परस्पर समान रहने का शिव-संकल्प अधरों से स्फुरित होने लगता है। भक्ति का अनुपम

सुमन भारतवर्ष की अमृत नदी गंगा के तट की सिद्ध कुटिया के आँगन में महमह सुवासित हो जाता है। भारतजन वंदना में गाने लगता है—

भक्ति द्राविड़ उपजी, लाए रामानंद।
प्रकट किया कबीर ने, सप्तदीप नौ खंड॥

उत्साह प्रयास का जनक है। उसकी अंगुली पकड़कर ही गंतव्य तक पहुँचा जा सकता है। भारतीय साहित्य के भक्ति काल का शब्द-शब्द सांस्कृतिक जागरण का निर्मल संदेश देता है। भारतीय भाषाओं के सभी संतों ने संस्कृति की धरती पर शब्दों के बीज बोए। भक्ति की फसल उगाई। मुक्ति का अन्न जीवन की आतुर-क्षुधा तृप्ति हेतु जन-जन को दे दिया। अन्न से क्षुधा शांत होती है। भक्ति से ही मुक्ति प्राप्त होती है। श्रीमद्भागवत में भक्ति के नौ स्वरूप निर्देशित किए हैं। श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पादसेवा, अर्चन, वंदन, दास्य, सख्य और आत्मनिवेदन। इनमें से किसी एक को भी पतवार रूप में थाम लेने से जीवन-नैया पार लग सकती है। रामानुजाचार्य से स्वामी रामानंद तक आती हुई भक्ति रसधारा में विशिष्टाद्वैत और उसमें भी दास्यभाव प्रमुख है। अपने समय के मतों-पंथों संप्रदायों के विवादों के मध्य से रामानुजाचार्य ने सबसे सामंजस्य स्थापित करते हुए विष्णु को परमब्रह्म रूप में आराध्य मानते हुए—श्रीरामचंद्र का विष्णु के अवतार रूप में वंदन किया। उनके और भक्त के मध्य स्वामी-सेवक के संबंध निरूपित कर दास्य-भाव की भक्ति की नीलनभ में धवल रेखा उकेरी। स्वामी रामानंद ने 'रामावत' के माध्यम से श्रीराम के चरित्र को ऐसी सांस्कृतिक व्यापकता और गूढ़ता प्रदान की, जिससे तत्कालीन भारतीय समाज के सारे ऊँचे-नीचे, छोटे-बड़े, धनी-गरीब, नागर-ग्राम्य, स्पृश्य-अस्पृश्य, सगुण-निर्गुण, शैव-शाक्त, वैष्णव-अवैष्णव, देव-दनुज सब समरसभक्ति और हृदय की पावनता की राह पर चल पड़े। स्वामी रामानंद के शिष्य कबीर के निर्गुण ब्रह्म भी 'राम' हैं। नरहर्यानंद के शिष्य तुलसीदास के सगुण ब्रह्म भी 'राम' हैं। यह विभेद नहीं है। भक्ति के पावन उच्च शिखर पर निर्गुण-सगुण के समरस होने का चिद् बिंदु है। 'समं सर्वेषु भूतेषु तिष्ठन्तं परमेश्वरम्।' (श्रीमद्भागवत १३-२७) कबीर इसी भावभूमि पर विह्वलता अनुभव करते हैं, 'राम बुलावा भेजियो, दिया कबीरा रोय'। तुलसीदास की अद्भुत वाणी फूटती है, 'ब्रह्म अनामय अज भगवन्ता:, व्यापक अजित अनादि अनन्ता।'

स्वामी रामानंद का चिंतन-प्रवाह उनके शिष्यों और प्रशिष्यों में अनुभव का नया समरस बनता चला जाता हैं। विष्णु के दो अद्भुत अवतार श्रीराम-श्रीकृष्ण भक्ति के केंद्र और भक्तों के आराध्य बन जाते हैं। निर्गुणियों ने भी कहीं 'राम', कहीं 'गोविंद', कहीं 'गोपाल' जपकर-भजकर ही अपना माधुर्य निवेदन किया है। तुलसीदास की दास्यभक्ति और सूरदास-रसखान-रहीम की सख्यभक्ति की रेवा में समाज के सब जन नहा-नहाकर निखर उठते है। स्वामी रामानंद की सीख, प्रेरणा और सूझ से श्रीराम और श्रीकृष्ण के चरित्रों का दिगंतव्यापी विस्तार हुआ। धर्म और संस्कृति की रक्षार्थ श्रीराम के पास धनुषबाण है। श्रीकृष्ण के हाथ सुदर्शनचक्र है। उनके बाद के संतों-भक्तों ने अपने साहित्य में श्रीराम श्रीकृष्ण का ऐसा लोकमर्यादित, लोकहितकारी, लोकसमन्वयकारी, लोकसमानताकारी, लोकसमरसकारी, लोकअपनत्वकारी, लोकउद्धारक, लोकरंजक, लोकानुकरणीय स्वरूप वर्णित किया जिससे जातिगत, वर्णगत, पंथगत, संप्रदायगत, धर्मगत, संकुचित भेद मिट गए। एक संस्कृति, एक समाज, एक सांस्कृतिक राष्ट्र का सर्वथा नवीन समरस-सिंधु लहराने लगा। गीध, गुह, निषाद, शबरी, सुरसा, लंकिनी, ताड़का, मारीच, सुग्रीव, अंगद, आंजनेय, नर-वानर, नगरवासी, ग्रामवासी, बाँसवन, वृंदावन, मधुवन, निधिवन, यमुना, वंशीवट, गोप, धेनु, बच्छ सभी समरस-एकरस हो गए। रामरूप-कृष्णमय हो गए। गगन घटा गहराती है। गगन-मंडल में अनहद गर्जना होती है। मेह की बदरिया बरसती है। वनराई हरी-भरी हो जाती है। स्वामी रामानंद की अमृतवाणी झरती है—

जति-पाँति पूछे नहिं कोई।
हरि को भजै सो हरि का होई॥

भक्ति के माध्यम से नारी-स्वाभिमान और नारी-स्वतंत्रता तथा जातिभेद समाप्ति का साहसिक कर्म मराठी साहित्य में भक्त कान्होपात्रा से लेकर बहिणाबाई चौधरी करती रही हैं। संत ज्ञानेश्वर, नामदेव, एकनाथ, तुकाराम, समर्थ रामदास जैसे—संतों-भक्तों ने अपनी वाणी और कर्म दोनों से समाज में समता-समरसता स्थापित करने का अविस्मरणीय कार्य किया। इन्होंने धर्म सत्ता को बचाने का प्रण और व्रण लेकर भक्तियोग और कर्मयोग के सुमेल से समदृष्टि और समरस समाज बनाने का अभूतपूर्व प्रयास किया है। संत तुकड़ोजी ने समाजोत्थान में ही राष्ट्रोत्थान के सूत्र प्रकट किए। संत गाडगे महाराज धर्म और देवपूजा को नए संदर्भ देते हुए कहते हैं—भूखे को अन्न, प्यासे को पाणी, नंगे को वस्त्र, गरीब बच्चों को शिक्षा, बेघर को आसरा, रोगी को उपचार, बेकार को रोजगार, गरीब युवक-युवती का विवाह, दु:खी व निराश को हिम्मत और पशु-पक्षी की रक्षा करना ही खरी भक्ति और देवपूजा है—

हाच आजचा रोकड़ा धर्म आहे।
हीच खरी भक्ति व देवपूजा आहे॥

विस्मित कर देनेवाला सत्य यह है कि भक्ति के नभ मंडल में प्रेम रस के नक्षत्र-आकाश-गंगाएँ संपूर्ण भारतीय भाषाओं के क्षितिजों तक उदित-प्रसरित-जगमगाती दृष्टिगत होती हैं। वर्तमान में भी यह नक्षत्र-आलोक कम नहीं हुआ है। पथ लंबा है। दुर्गम है। यात्रा भी निरंतर है। सद्भाव भरी है। चैतन्य महाप्रभु की मृदंग की थाप, मंजीरों की झनकार अभी-भी सुनाई देती है। 'श्रीकृष्ण गोविंद हरे मुरारि, हे नाथ नारायण वासुदेवा' के धर्म-अर्थ हृदय को अभी भी झंकृत करते हैं। संत मुरारी बापू, संत रामदेव बाबा, संत अवधेशानंद गिरि जैसे भक्त प्रवर सनातन धर्म के रेशमी तारों से संपूर्ण भारतीय समाज में समरसता और समानता की गाँठें लगा रहे हैं। स्वामी सत्यमित्रानंद गिरि स्वामी रामानंद की भक्ति की समरस परंपरा के अनमोल मोती हैं। साहित्य की साधना निरंतर है। भक्ति की धारा निर्मल है। समाज और राष्ट्र में समानता और समरसता के सद्प्रयास भी अविरत-अविराम हैं। अनादिकाल से भारतवर्ष की मातृवत्सला भूमि पर महाश्वेता रात्रि में साहित्य की वीणा बज रही है।

एक पवन, एक ही पाणी, एक ज्योति संसारा।
एक ही माटी घड़े सब भांडे, एक ही सिरजनहारा॥

साअ
आजाद नगर
खंडवा-४५०००१
दूरभाष : ९४२५३४२७४८

घोड़ागाड़ी का स्टैंड

मूल: **चार्ल्स डिकेंस**
अनुवाद: **अरुण चंद्र**

चार्ल्स डिकेंस का जन्म ७ फरवरी, १८१२ को हुआ था। वे विक्टोरियन युग के सबसे लोकप्रिय अंग्रेजी उपन्यासकार थे, साथ ही एक सशक्त सामाजिक आंदोलन के सदस्य भी। चार्ल्स के दर्जन भर प्रमुख उपन्यास, लघुकथाएँ और अनेक नाटक सर्वाधिक लोकप्रिय हैं। उनकी प्रसिद्ध रचनाओं में 'बौज के स्कैच', 'पिकविक पेपर्स', 'ऑलिवर ट्विस्ट', 'निकोलस निकिलबी', 'डेविड कॉपरफील्ड', 'ग्रेट ऐक्सपेक्टेशंस', 'दो नगरों की कथा' आदि प्रमुख हैं। डिकेंस ने सैकड़ों अमर पात्रों की सृष्टि की, जो जनता की स्मृति में आज तक सुरक्षित हैं। वे कहानी कहने में दक्ष थे, यहाँ उनकी एक चर्चित कहानी 'घोड़ागाड़ी का स्टैंड' का हिंदी रूपांतर प्रस्तुत कर रहे हैं।

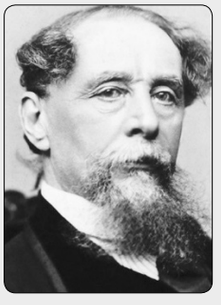

हमारा मानना है कि घोड़ा गाड़ी, जो कि लंदन में हैकनी कोचेज कहलाती हैं, केवल मेट्रोपोलिटेन शहर में ही पाई जाती थीं। हमें यह बताया जाता है कि एडिनबरा और बहुत ज्यादा दूर नहीं, लिवरपूल और मैनचेस्टर में भी अपने-अपने हैकनी-कोच स्टैंड पाए जाते हैं। हम इस बात को भी तुरंत मान लेते हैं कि इस तरह की कुछ घोड़ा-गाड़ियाँ इन शहरों में भी पाई जाती हैं; पर वे भी अकसर लंदन की कई घोड़ा गाड़ियों की तरह सुस्त, धीरे-धीरे चलनेवाली और गंदी होती हैं। पर वे किसी भी तरह लंदन की घोड़ा गाड़ियों की संख्या में, कितने स्टैंड हैं, कितने ड्राइवर या घोड़े हैं, वे कहीं से भी उनकी बराबरी नहीं कर पाती हैं।

अब एक भारी-भरकम, टूटी-फूटी लंदन की घोड़ा गाड़ी को लीजिए। मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि दुनिया का कोई भी वाहन या सवारी लंदन की इस घोड़ा गाड़ी की तरह नहीं हो सकती, चाहे वह उतनी ही पुरानी हैकनी कोच क्यों न हो! हमने अभी हाल ही लंदन की सड़कों पर, अफसोस के साथ कहना पड़ रहा है कि कुछ स्टैंडों पर ऐसी गाड़ियाँ देखी हैं, जो कि एक साफ-सुथरे, सजे हुए रथ की तरह थे—हरे रंग के रथ और पीली पॉलिश की हुई चार पहियों पर घोड़ा गाड़ियाँ—और कुछ गाड़ियों के पहिए भी अलग-अलग रंग व अलग-अलग साइजों के होते हैं। यह एक तरह से नवीनता या विविधता लाने का प्रयास, जो कि मानव-मन की बेचैनी की ओर इशारा करता है और तमाम समय से चली आई मान्यताओं या संस्थाओं का अनादर है। अब आप ही बताइए, घोड़ा गाड़ियाँ साफ-सुथरी क्यों होनी चाहिए? हमारे पूर्वजों ने उन्हें गंदी पाया और वैसे ही छोड़कर चले गए। और हमारे अंदर यह इच्छा क्यों होनी चाहिए कि हम हमेशा चलते ही रहें—वह भी ६ मील प्रति घंटे की रफ्तार से, जबकि वे ४ मील प्रति घंटे की रफ्तार से ही पथरीली, ऊबड़-खाबड़ सड़कों पर चलते रहते थे। यह सब बहुत गंभीर सवाल है। घोड़ा गाड़ियाँ अब हमारे जीवन का एक अभिन्न अंग हैं। वे विधायिक द्वारा निर्धारित की गई हैं, और उन्हें सरकार द्वारा, पार्लियामेंट द्वारा बाकायदा रजिस्टर्ड कर के नंबर प्लेट दी गई हैं।

फिर क्यों लंदन जैसे शहर को कैब और ऑक्नी बसेज द्वारा भर दिया गया है? या लोगों को क्यों ८ पैसे प्रति मील के हिसाब से सफर करने देना चाहिए, जबकि पार्लियामेंट ने यह फैसला लिया था कि उन्हें धीमी सवारी से आने-जाने के लिए १ शिलिंग प्रति मील की दर से भुगतान करेंगे। चूँकि हमें इसका जवाब मिलने की कोई संभावना नहीं नजर आती, इसलिए हम अब एक नया पैरा शुरू करेंगे।

हैक्नी कोचेज से हमारी जान-पहचान पुरानी है। हम तो किरायों की चलती-फिरती किताब हैं और हम यह महसूस करते हैं कि अगर इस बात पर कभी कोई विवाद हो तो हम अपने मुद्दे पर सही पाए जाएँगे। कोवेंट गार्डेस के आसपास ३ मील तक कितने पानीवाले हैं, वे हम जानते हैं और हमें उम्मीद है कि उस क्षेत्र के जितने घोड़े हैं, वे भी अच्छी तरह हमें जानते होंगे, यदि वे अंधे नहीं होंगे। हमें हैक्नी कोचेज में बहुत ज्यादा दिलचस्पी है, पर हम शायद ही कभी-कभार उस पर चढ़ते हैं। यदि हमने कभी किसी हैक्नी कोच को चलाया तो मुझे उम्मीद है कि वह कोच जरूर उलट जाएगी। अन्यथा हम घोड़ों और हैक्नी कोचेज के महान् दोस्त हैं, जैसाकि मि. मार्टिन, जो कि फेरीवाले के रूप में जाने जाते हैं, जानते हैं। हम कोई घोड़े नहीं रखते, पर केवल एक क्लॉथ्स हॉर्स (कपड़े का घोड़ा) हमने कभी भी घोड़ों की काठी पर बैठना पसंद नहीं किया था, केवल मरन की काठी को छोड़कर और कभी भी हाउंड्स (शिकारी कुत्तों) का पीछा नहीं किया था। यातायात के इन साधनों को छोड़कर हम अपनी राय आपको घोड़ा गाड़ी के स्टैंड के बारे में जाहिर करना चाहते हैं।

जिस घर के ऊपरी कमरे में बैठकर मैं यह लेख लिख रहा हूँ, उसकी खिड़की के नीचे ही एक हैक्नी कोच स्टैंड है। इस वक्त वहाँ पर

केवल एक ही गाड़ी खड़ी है, पर इस तरह की गाड़ियों का एक अच्छा नमूना है। एक बड़ी लंबी-चौड़ी वर्गाकार डिंगी (छोटीभव) जैसी पीले रंग की (जैसे कोई पित्तीय ब्रूनेट हो), जिसमें छोटी-छोटी काँच की खिड़कियाँ हैं तथा बड़े-बड़े फ्रेम्स हैं, उसके पैनेल पर किसी राजघराने के 'कोट ऑफ आर्म्स' का निशान बना हुआ था, जो अब धुँधला पड़ चुका था। उसकी एक्सेल या धुरी लाल रंग की थी और ज्यादातर पहिए हरे रंग के थे। कोच का बक्सा एक बड़े ओवरकोट से ढका हुआ था। उसपर कंधों के ढकने के लिए बहुत सारे कैप या बड़े-बड़े कपड़े लगे हुए थे और कुछ असाधारण कपड़े भी ढके हुए थे। और कई जगह से वह घास-फूस दिख रहा था, जो कुशन को भरने के लिए इस्तेमाल किया गया था। घोड़ों के सिर झुके हुए थे और उनमें से प्रत्येक के अयाल और पूँछों में बाल इतने कम थे, जैसे कि वे घिसे-पिटे लकड़ी के घोड़े की पूँछ और अयाल हो । वे धैर्यपूर्वक कुछ गीली घास पर खड़े थे और कभी अपनी ढकी हुई आँखों से कुछ देखने की कोशिश करते थे तथा कभी-कभी अपने साज को हिलाने की कोशिश करते थे और कभी-कभी बीच में एक घोड़ा दूसरे घोड़े के कान के पास अपना मुँह ले जाता था, जैसे वह फुसफुसाकर यह कह रहा हो कि मेरा वश चले तो मैं उस जवान की हत्या कर दूँ। कोचवान स्वयं जल-घर में था और जो पानीवाला था, वह अपने दोनों हाथ पैंट्स की जेब में डाले उबल-शफल का नाच कर रहा था, जिससे उसके पैर गरम रहें।

घर नं. ५ से एक नौकरानी, बालों में गुलाबी रिबन लगाए बाहर निकलती है और उसके साथ में चार बच्चे भी होते हैं। वह जोर-जोर से पुकारती है। पानीवाला आदमी नलघट से भागकर आता है तथा कोचवान को जोर-जोर से आवाज लगाता है। इस बीच वह घोड़ों को खींचकर लाता है, उनको लगाम लगाता है और बीच-बीच में वो जवान को भी पुकारता जाता था। फिर टैप-रूम से कोचवान अपनी लकड़ी के सोलवाले जूते पहने खट-खट करते हुए भागते हुए आता है और खींच-तानकर आगे-पीछे करके अपनी घोड़ा गाड़ी घर नं. ५ के दरवाजे के सामने खड़ी कर दिया। क्या हल्ला-गुल्ला और गड़बड़ कर रहे थे!

वह वृद्ध महिला, जो वहाँ पिछले चार महीने से रह रही थी, वह वापस अपने घर जा रही थी। कई बक्से घर के बाहर आ गए और उस गाड़ी का एक हिस्सा सामान से भर गया। बच्चे, जो हर आदमी-औरत के रास्ते में आ रहे थे, उस काम में रुकावट आ रही थी। एक छोटा बच्चा, जो एक छाता लेकर भाग रहा था, वह गिर गया था और उसे चोट लग गई थी तथा उसे जब अंदर ले आया जा रहा था, तब वह अपने हाथ-पैर फेंक रहा था। अन्य बच्चे इधर-उधर दुबक गए तथा साफ जाहिर था कि वह वृद्ध महिला पिछले कमरे में लोगों का चुंबन ले रही थी। उसके बाद वह उस कमरे से बाहर निकलकर आई। उसके पीछे-पीछे उसकी शादीशुदा लड़की तथा उसके बच्चे उनके पीछे-पीछे दोनों नौकर। इन दोनों नौकरों और कोचवान की मदद से सब लोगों को गाड़ी पर चढ़ा दिया गया। फिर एक कपड़ा और एक छोटी सी टोकरी, जिसमें मेरे खयाल से एक काली बॉटल तथा कुछ कागज में लपेटी सैंडविच थीं, पकड़ा दी गई। गाड़ी के पायदान ऊपर उस दिए गए कोच के दरवाजे बंद कर दिए गए।

''गोल्डेन क्रॉस, चेरिंग क्रास, टॉम।'' पानीवाले आदमी ने कहा, ''गुड बाई, नानी!'' बच्चे जोर से चिल्लाए और कोच घंटी बजाती हुई ३ मील प्रति घंटे की रफ्तार से चल पड़ती है।

उनके जाने के बाद माँ और बच्चे घर के अंदर वापस चले गए, पर उनमें से एक बच्चा सड़क पर दौड़ लेता है और नौकरानी उसके पीछे-पीछे उसे पकड़ने के लिए भाग गई तथा उसे किसी प्रकार से पकड़कर घर वापस ले आई। घर के अंदर घुसने के पहले उसने मुड़कर हम लोगों की ओर या पाँट ब्वॉय की ओर देखा, पता नहीं। और सच हैक्नी कोच स्टैंड बिल्कुल शांत हो गया।

हमने अकसर बहुत संतोष के साथ यह देखा है कि कैसे कोई नौकरानी, जो किसी काम के लिए या कोच लाने के लिए बाहर भेजी गई, वापस घर आने पर एक प्रकार की राहत महसूस करती है। और यदि इसी काम के लिए किसी लड़के-नौकर को भेजा जाता है तो वह उस कोच के बॉक्स पर चढ़कर बहुत खुश महसूस करता था। पर हमको इससे ज्यादा खुशी कभी महसूस नहीं है, जबकि हमने कोचवानों की एक पार्टी देखी।

हम एक दिन, जब हम वह टोरनहेम रोड में थे, तो हमने एक कमतर गली से एक शादी की पार्टी को निकलते देखा—फिट्जशय के पास देखा था। दुलहन ने, जिसका बड़ा सा लाल चेहरा था, एक पतली सी सफेद शादी की ड्रेस पहनी हुई थी और बाइड्समेड साथ चलनेवाली सहबालिका ने उसी तरह के उचित कपड़े पहने हुए वह एक खुशमिजाज, थोड़ी मोटी सी कम उम्र की औरत थी। दूल्हे ने नीले रंग का सूट पहना हुआ था और उसकी वेस्टकोट पीले रंग की थी। वह सफेद पैंट पहने हुआ था और उससे मिलता हुआ ही बर्लिन ग्लब्स (दस्ताने) पहने हुए था। वे उस गली के कोने पर रुके और बहुत ही अवर्णनीय शालीनता से उन्होंने कोच के लिए आवाज लगाई। जैसे ही कोच आई, वे लोग उसमें बैठ गए और दुलहन की सहेली ने बहुत ही लापरवाही से उसके दरवाजे पर एक लाल शॉल, जो शायद वह इसी उद्देश्य से लाई थी, डाल दिया, जिससे उसका नंबर न दिखे और वह निजी गाड़ी प्रतीत हो। पर शायद वह यह भूल गई कि गाड़ी के पीछे भी नंबर बड़े अक्षरों में लिखा था। इस तरह से वे लोग चले गए। एक शिलिंग प्रति मील की दर से और इस बार की सैर शायद उन्हें पाँच शिलिंग की लगे।

एक हैक्नी कोच के बारे में कितनी दिलचस्प पुस्तक लिखी जा सकती थी, यदि वह अपने शीर्ष पर भी उतना सामान ले जा सकती थी, जितना कि उसके शरीर में। एक टूटे-फूटे हैक्नी कोच की आत्मकथा उतनी ही दिलचस्प होगी, जितनी कि एक गए-बीते पुराने जमाने के नाटककार की जीवनी की···। कितने ही लोगों को इसने बिजनेस या मुनाफे के लिए—या घूमने-फिरने या दु:ख-तकलीफ में यहाँ से वहाँ पहुँचाया होगा। और कितने ही लोगों की उदास कहानियाँ इसमें घटी होंगी। वह गाँव की लड़की, ज्यादा पोशाक पहने और दिखावा करनेवाली औरत या फिर मदहोश वेश्या! एक नौसिखिया या बहुत कंजूस आदमी या फिर कोई चोर ही!

डॉटर'स डे

● पूजा महाजन

बरतन माँजते-माँजते संध्या की आँखों से आँसू निकलकर नल से निकलते पानी में मिल गए। निष्ठुर बरतन मानो और चमक उठे हों नमक मिले पानी से धुलकर। उन निर्जीवों को क्या पता कि वे किसी जीव की पीड़ित भावनाओं में नहा रहे हैं। संध्या और भी चिढ़ सी गई।

दरअसल संध्या लॉकडाउन में घर के काम कर-करके दुखी हो चुकी थी। झाड़ू-पोंछा, बरतन, कपड़े, डस्टिंग, खाना—ये तो बस मोटे-मोटे काम थे लेकिन अनगिनत छोटे-छोटे काम, जिनकी तो गिनती भी नहीं हो सकती थी, निपटाते-निपटाते कब सुबह से रात हो जाती, संध्या को पता ही नहीं चलता था। रात को फिर अगले दिन के वही नियमित व क्रमबद्ध कार्यों की सूची संध्या को ठीक से सोने भी नहीं देती थी।

रोज के वही-वही काम करके तन और मन मुरझा से गए थे। घर में बाकी सब भी थोड़ी-बहुत मदद तो करते थे, पर अपनी सुविधा अनुसार, या फिर अगर उनका मन हो तो। बच्चों से तो वह कहकर भी छोटा-मोटा काम करवा लेती थी, पर जिम्मेदारी तो उसी की रहती थी। न तो काम कम होने के आसार नजर आ रहे थे और न ही कामवाली बाई को बुलाने के। शारीरिक थकान से ज्यादा मानसिक थकान संध्या पर हावी हो रही थी। शुरू के कुछ महीने तो ठीक से निकल गए, पर अब छह महीने बीत चुके थे। न तो घर की दहलीज लाँघी थी और न ही कोई घर आया था। ऐसी दहशत जो फैला दी थी इस मुए कोरोना ने।

अगले दिन रविवार था और डॉटर'स डे भी। संध्या ने उठकर सबसे पहले अपनी सोई हुई बेटी पाखी को उठाकर गले लगाया और विश किया। उसने आज पाखी की पसंद के दो-तीन व्यंजन बनाए। दोपहर के खाने के बाद संध्या कुछ देर लेट गई। बहुत थकी हुई थी तो उसे गहरी नींद आ गई। पति आशीष ने आकर उठाया, "शाम के छह बज चुके, आज कितना सोओगी? अब उठ भी जाओ।"

संध्या फ्रेश होकर भारी कदमों से चलकर बाहर आते-आते सोचने लगी कि रात के खाने के लिए क्या बनाऊँ। लेकिन बाहर आकर वह हैरान रह गई। घर के सब लोग चाय पर उसका इंतजार कर रहे थे। उसके पति ने सबके लिए शाम की चाय बनाई थी और सासु माँ ने उसकी पसंद के प्याज और पनीर के पकौड़े। इतने सालों बाद सास के हाथ के पकौड़े खाकर उसे माँ की याद आ गई, जब माँ उसके लिए ऐसे ही पकौड़े बनाया करती थी। अनायास उसकी आँखें भर आईं। उसने सासु माँ को प्यार व आदर भरी नजरों से देखा। चाय समाप्त हुई तो बच्चों ने आकर सब बरतन उठाए और मिलकर माँज दिए। सब काम चुपचाप होता गया। अब संध्या काफी हल्का महसूस कर रही थी। इतने में पति आशीष ने कहा, "चलो, छत पर चलते हैं।" इस पर संध्या बोली, "रात का खाना भी तो बनाना है।" जिद करके आशीष उसे अपने साथ छत पर ले गया। आज कितने दिनों बाद संध्या को खुली हवा में साँस लेकर इतना अच्छा लग रहा था। उसने आशीष से खूब सारी बातें कीं और वह सवा घंटा छत पर बिताकर एकदम तरोताजा हो गई थी। अब नीचे आकर उसे एक और सरप्राइज मिला।

उसके ससुरजी और सासु माँ ने रात का खाना भी बना लिया था—उसकी पसंद की दाल, बैंगन का भरता और मटर-पुलाव। संध्या को तो विश्वास ही नहीं हो रहा था। वह समझ नहीं पा रही थी कि आज अचानक उसका इतना ध्यान क्यों रखा जा रहा है! सबने मिलकर खाना खाया और पाखी ने स्मार्ट टी.वी. पर संध्या की मनपसंद फिल्म 'विरासत' लगा दी।

रात के साढ़े दस बजे जब फिल्म समाप्त हुई तो सब अपने-अपने कमरों में सोने के लिए जाने लगे, तब सासु माँ ने संध्या को अपने कमरे में बुलाया। उन्होंने संध्या को पास बैठाकर एक पैकेट उसके हाथों में पकड़ा दिया। संध्या कुछ समझ नहीं पा रही थी। उसने पैकेट खोला तो उसमें उसकी सासु माँ की नई साड़ी थी, जो उसके ससुर उनके लिए बनारस से लाई थे और वह साड़ी संध्या को बहुत पसंद आई थी। संध्या हैरानी से उनका

नवोदित लेखिका। 'पूजालेख' नाम से व्यक्तिगत ब्लॉग। बच्चों के लिए कहानियाँ व प्रेरणात्मक लेख लिखने में रुचि। संप्रति साहित्य की अग्रणी पत्रिका 'प्रेम सुधा पहल' में संपादन कार्य। लेखन व संपादन कार्य में संलग्न।

चेहरा देखने लगी।

संध्या के सिर पर प्यार से हाथ फेरते हुए सासु माँ ने कहा, "संध्या बेटा, 'हैप्पी डॉटर'स डे', तुमने हमेशा एक बेटी से भी बढ़कर इस घर और हमारे लिए सब कुछ किया है। तुम हर दिन को हमारा बेस्ट डे बनाती हो, एक दिन तो तुम्हारे लिए भी कुछ गुड होना ही चाहिए। इस लॉकडाउन में तुमने हम सबकी जितनी सेवा की और जिस तरह इस घर का कोई भी काम रुकने नहीं दिया, ऐसे तो शायद बेटी भी न करती। बेटी तो काम करने को हक से मना भी कर देती या आलस ही दिखाती, पर तुमने एक भी दिन घर के किसी काम को नजरअंदाज नहीं किया, मन न होने पर भी अपने सब फर्ज निभाए। हम धन्य हुए तुम जैसी बहू पाकर। तुम हमारे लिए बेटी से भी बढ़कर हो। बेटा, इस साड़ी को अपनी इस माँ का प्यार समझकर रख लो।"

संध्या सुनती जा रही थी और उसकी आँखों से आँसू गिरकर उस साड़ी का पल्लू भिगो रहे थे, जो आज एक माँ ने डॉटर'स डे पर अपनी बेटी से भी बढ़कर बहू को दी थी। आज संध्या की सारी थकान और पीड़ा उन आँसुओं के जरिए निकलकर उसकी आत्मा को शांत कर रही थी। आज जैसे उसका पुनर्जन्म हुआ था। वह एक बार फिर डॉटर बन गई थी।

ए-ब्लॉक, म.नं. २५७, टॉप फ्लोर
विकास पुरी, दिल्ली-११००१८
दूरभाष : ७९८२४९९८८४

नोक-झोंक

लघुकथा

● ऋचा उपाध्याय

"भइया! भाभी पूछ रही हैं, खाना लगा दें?" राधा ने आँगन में बैठे माधव बाबू से पूछा।

"हाँ, हाँ, लगा दो, क्या बना है?"

"मटर का पराँठा!"

"अरे भगवान्! आज दोपहर में ही तो मटर का निमोना बना था। फिर से मटर।"

"तो क्या करें, रोज सबेरे-सबेरे खेत से दौरी भर-भरकर मूली, मटर आ जाती है।" भाभी अंदर से ही भुनभुनाने लगीं।

अब भइया भी कम थोड़े न हैं, बोले, "अरे! तो मूली का पराँठा बना दिया होता। पता है न, मटर से बादी होती है, तीन टैम लगातार मटर बनाने की क्या जरूरत थी? खेत में जो होगा, वही सब न आएगा।"

लो भई, अब भाभी का टेप रिकॉर्डर चालू, "अरे! तो मूली से कौनो कम गैस बनती है का? परसों दोनों टैम मूली खाए, ऐसी गैस सर पर चढ़ी है कि अभी तक दरद कर रहा है।"

"अरे, तो कम खाया करो न, तुम तो चार-चार पराँठा दबा लेती हो।"

"अब लो, हमाए खाने पर भी नजर गड़ाए बैठे हैं। इससे तो अच्छे हम अपने मैके में थे, जो मन करता, खाते थे, कोई रोकने-टोकने वाला नहीं था।"

"अरे हाँ भई, मायके में तो सब धन्ना सेठ हैं इनके, रोज शाही पनीर, और दिव्य भोजन बनता है।"

"हमारे मायके को कुछ न कहो। उहाँ रोज अलग सब्जी, अलग तरह का खाना बनता है।"

"तब किसे कहें, चार टैम से मटर तो हमें खानी पड़ रही है, कभी मटर की कचौड़ी, कभी घुघरी, कभी पराँठा, कभी चूड़ा-मटर तो कभी निमोना, डर रहे हैं, कहीं हम मटर ही न बन जाएँ।"

जीव विज्ञान एवं हिंदी में स्नातकोत्तर। देश-विदेश में बच्चों को हिंदी भाषा का ऑनलाइन शिक्षण। बेंगलुरु में स्थानीय बच्चों को हिंदी का शिक्षण। संप्रति साहित्यिक पत्रिका 'प्रेम सुधा पहल' की मुख्य संपादिका। पत्र-पत्रिकाओं में कविता, लेख आदि प्रकाशित।

"तो ले आओ किसी और को, जो तुम्हें अलग-अलग तरह के खाने बना के खिलाए। घर में कुछ बाहर से आएगा नहीं और हमसे छप्पन व्यंजन की उम्मीद करेंगे।"

"बाहर का सामान चाहिए? किसान का घर है, यही सब मिलेगा। शादी के बाद तो तुम्हें बड़ा अच्छा लगता था कि वाह, कितनी ताजा सब्जी, शुद्ध दूध, शुद्ध हवा, पर अब?"

"अच्छा तो अब भी लगता है, पर कोई हमें टोके नहीं कि क्या बना रही, क्या नहीं?" भाभी शरमाते हुए बोलीं।

"लो शादी की बात सुनकर तो तुम लजाकर बिल्कुल लाल टमाटर हो गईं।"

"धत्त! बारह बरस हो गया, अब हम नहीं लजाते-फजाते।"

"भाभी ओ भाभी! देखो, आज खेत से एक दौरी टमाटर और गोभी आई है, अब तुम दोनों जने अपनी ये नोक-झोंक बंद करो, काहे से कि अब दो-तीन टैम मूली-मटर की जगह टमाटर और गोभी के व्यंजन बनाना, खाना पड़ेगा और गोभी से बादी भी नहीं होती।" राधा हँसते हुए बोली।

डी.आई.-५०७, ह्वाइट हाउस अपार्टमेंट
आर.टी. नगर, बेंगलुरु-५६००३२
दूरभाष : ९९०२६२४४९२

ब्रज के लोकगीतों में सामाजिक चेतना

• हरदेव सिंह 'निमौतिया'

ब्रज के लोकगीत ब्रजवासियों के रागात्मक एवं संवेदनात्मक विचारों की सहज एवं स्वाभाविक गेय स्वरूप मौखिक अभिव्यक्ति हैं। ब्रज के लोकगीतों में कोमलता एवं मधुरता के साथ-साथ सामाजिक समरसता भी पाई जाती है। इन ब्रज लोकगीतों की सर्जना व्यक्ति विशेष नहीं अपितु संपूर्ण ब्रज लोक करता है। ब्रज के लोकगीत लोक-समाज में सामाजिक चेतना अभिव्यक्त करने के प्रमुख साधन हैं। ब्रज लोक की जीवन-पद्धति, आचार-विचार व सामाजिक चेतना इन ब्रज लोकगीतों में मुखरित होती है। ब्रजवासियों के लोकजीवन की दैनिक अनुभूतियों का समागम इन ब्रज लोकगीतों में पाया गया है। ब्रज के लोकगीतों की शैली सरल, स्वच्छंद एवं लय प्रधान है। अत: ब्रज के इन लोकगीतों को ब्रज लोक संस्कृति का प्राण माना गया है।

डॉ. विद्या चौहान के विचारानुसार, 'लोकगीत जन-सामान्य से उत्पन्न हर्ष-विषादमयी भाव-धारणाओं का व्यक्त रूप है। हृदय का सुख-दु:ख जब स्वरों में साकार होता है, तो लोकगीतों की सृष्टि होती है सरलतम जीवन की सूक्ष्मातिसूक्ष्म अनुभूतियाँ लोकगीतों में प्रश्रय पाती है।" (लोकगीतों की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ-'च')

ब्रज के लोकगीत ज्यादातर उत्सव, त्योहारों एवं आयोजनों से संबंधित होते हैं। बदलती ऋतुओं और फसलों की बोबनी, खान-पान एवं शारीरिक श्रम, समाज में लोगों के कटु-मृदु संबंध आदि ब्रज लोक जीवन की अंतरंगता है। ब्रज के लोकगीतों द्वारा समाज के शोषित वर्ग में सामाजिक चेतना जाग्रत् की गई है। ये ब्रज लोकगीत विभिन्न स्वरूपों में पाये गए हैं, जिनमें सामाजिक समस्या से जुड़े ब्रज लोकगीत, ऋतु एवं पर्व गीत, संस्कार गीत, लोकदेवी एवं देवताओं से संबंधित भक्तिगीत मुख्य हैं। ब्रज क्षेत्र की समसामयिक समस्याएँ, जैसे बढ़ती जनसंख्या, महँगाई, लिंगभेद, कन्या भ्रूण हत्या, कोरोना महामारी, दहेज-प्रथा, मद्यपान, घूसखोरी आदि के प्रति ब्रज लोकगीतों द्वारा लोक-समाज में सामाजिक चेतना अभिव्यक्त की गई है।

जनसंख्या वृद्धि, महँगाई, लिंगभेद, कन्या भ्रूण हत्या— निम्नलिखित ब्रज लोकगीत के माध्यम से समाज में व्याप्त जनसंख्या वृद्धि, महँगाई, लिंगभेद जैसी सामाजिक बुराइयों के प्रति समाज में चेतना व्यक्त की गई है। लोकगीत में लोगों की कहासुनी पर ध्यान न देकर बिना लिंग भेद किए जनसंख्या को नियंत्रित करने की बात कही गई है। इस बढ़ती महँगाई ने आम लोगों का जीना दूभर कर रखा है। गीत के अंत में कहा गया है कि लोगों को जीवन में चाहे कितनी भी परिस्थितियों का सामना करना पड़ जाए लेकिन जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित रखना चाहिए।

सुपरिचित लेखक। अब तक विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। अनेक राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठियों, सेमिनार, वेबिनार में कविता व पत्र वाचन। संप्रति व्याख्याता, हिंदी भाषा एवं वर्तनी विशेषज्ञ बाबा कढ़ेरा सिंह उच्च माध्यमिक विद्यालय अक्खा, सौख (मथुरा)।

कोरोना महामारी (कोविड-१९)— प्रस्तुत ब्रज लोकगीत के माध्यम से दुनिया में फैली छुआछूत की कोरोना (कोविड-१९) बीमारी के प्रति लोगों में सामाजिक जन-चेतना जाग्रत् की गई है। कोरोना एक भयंकर बीमारी है, जिसका अभी तक पूरी तरह कोई इलाज नहीं है तथा छूने से यह बीमारी दिनोदिन बढ़ती ही जा रही है। जिससे बचने के लिए हमें उचित दूरी बनाए रखने व सफाई का विशेष ध्यान रखना बहुत आवश्यक है। इसके चलते सरकार ने पूरे भारतवर्ष में तालाबंदी (लॉक डाउन) घोषित किया तथा वैक्सीनेशन भी किया जा चुका है। संबंधित ब्रज लोकगीत इस प्रकार है—

अरी बहना दुनिया में मच गयौ हाहाकार कोरोना आय गयौ देश में।—२

जन्म लियौ है जानें चीन में, चीन ते ई याँ आयौ।
अरी बहिना कैसे पड़ेगी अब पार, कोरोना आय गयौ देश में।

दूरी बनायकें रह्यौ जी भैया, दूरी बना कें रहियों।
अरी बहना घर ते मत जाइयौ भार, कोरोना आय गयौ देश में
अरी बहना दुनिया में मच गयौ हाहाकार कोरोना आय गयौ देश में॥

दहेज प्रथा— आधुनिक समय में भारतीय समाज में दहेज

एक सामाजिक बुराई के रूप में बढ़ता ही जा रहा है। विशेषकर लड़कीवालों की मरने तक की नौबत आ जाती है। समाज में दहेज रूपी समाजिक बुराई ने विस्तार ले लिया है, जिससे लड़कीवालों को शोषण का सामना करना पड़ रहा है। इस बुराई से बचने का एक ही साधन है और वह है—शिक्षा। लड़कियाँ शिक्षित होकर देश सेवा कर रही है तथा इस दहेज रूपी सामाजिक बुराई का खंडन कर रही है। आज का समाज अब शिक्षित समाज हो गया है जो कि पहले नर प्रधान था वह अब नारी प्रधान होता जा रहा है। लोकगीत के अंत में कहा गया है कि ओ दहेज के लोभियों अब भी समझ जाओ, इन सामाजिक बुराई के कारण लिंगानुपात बिगड़ता जा रहा है। आगे आनेवाले समय में लड़कों को दहेज देने कि तैयारी कर लेनी चाहिए अन्यथा सँभल जाओ नहीं तो वोट माँगते नेताओं की तरह लड़की का हाथ माँगते फिरोगे। अत: दहेज एक सामाजिक बुराई है, जिसका हम सभी को बहिष्कार करना चाहिए।

पर्यावरण असंतुलन—इस ब्रज लोकगीत द्वारा आधुनिक समाज में फैली प्राकृतिक विसंगति (औद्योगिकीकरण) के संबंध में लोगों के मध्य सामाजिक चेतना पैदा की गई है। पेड़ों के काटने से हमारा वातावरण प्रदूषित होता जा रहा है तथा विभिन्न बीमारियों के शिकार होते जा रहे हैं। इस प्रकृति को नुकसान पहुँचाकर हम अपना ही जीवन दूभर कर रहे हैं। आज हम प्रकृति को नुकसान पहुँचाकर उसके बदले अच्छे के उम्मीद करें तो यह हमारी मूर्खता है। हमें अच्छी जिंदगी जीने के लिए काटे गए जंगल के स्थान पर फिर से हरियाली लनी होगी तभी हमारा जीवन सुरक्षित रहेगा।

पटपरा हाथन ते कीनौ जी पटपरा हाथन ते कीनौ,
जंगल दीने काट है गयौ है दूभर जीनौ।
काट दिए जंगल सारे हैं, काट दिए जंगल सारे हैं,
काटे हींस करील काट दिए पीलू न्यारे हैं।
गंदगी हम ही फैलामें रे, गंदगी हम ही फैलामें,
बोए पेड़ बबूल आम फिर कहाँ ते हम खामें।
उजारी हमनें ही फुलवारी, उजारी हमनें ही फुलवारी,
मिलै न साफ बयार फैल रहीं नई-नई बीमारी।
उभर नांय याते पामिंगे, उभर नांय याते पामिंगे,
काटे जहाँ-जहाँ पेड़ सघन वन वहाँ लगामिंगे,
पाप जो हमनें कर दीनौ जी, पाप जो हमने कर दीनौ,
जंगल दीने काट है गयौ अब दूभर जीनौ॥

(संकलनकर्ता—गोविंद प्रसाद शर्मा, पुस्तकालय समिति के पास, डीग, भरतपुर)

यह ब्रज-लोकगीत समाज में व्याप्त नशा संबंधी दुर्व्यसनों से होनेवाले नुकसान के प्रति चेतना व्यक्त की गई है। एक स्त्री नशेबाज परिवार से दुखी होकर अपनी सहेली से कहती है कि हे सखी मैं इस नशेबाज परिवार से नाक तक दु:खी हो गई हूँ क्योंकि इस नशेबाज परिवार के सभी लोगों ने नशे की लत में पड़कर घर व खेत की जमीन को भी गिरवी रख दिया है और अगर मैं उन्हें समझ की कहती हूँ तो वह मुझे मारने को उतारू हो जाते हैं। अत: वह ऐसे परिवार में न रहकर खुलकर विरोध करना चाहती है। भारतीय समाज में नारी को अत्यंत सहनशील माना जाता है। इस ब्रज लोकगीत द्वारा समाज में महिलाओं की पारिवारिक जिम्मेदारी के साथ-साथ अत्याचारों के विरुद्ध अपने अधिकारों के प्रति सामाजिक चेतना व्यक्त की गई है—

जा नशेबाज कुनबा ते, मेरी तबियत भरि गई भायेली॥
सुसर है मेरो बम भोला, खावै रोज भाँग कौ गोला,
मन की करि लई भायेली। जा नशेबाज कुनबा ते··
देवर हमारौ कुँवारौ करुआ, जेठ हमारौ पक्कौ दरुआ,
घर कौ जानें करि दियौ घरुआ, धरती गिरवी धरि दई भायेली॥
जा नशेबाज कुनबा ते··।
बलमा चक्क मलीदा मारै, खाई अफीम एक न मानै,
बहुत कहूँ तौ लाठिया तानै,
जंग मचाई देय भायेली, जा नशेबाज कुनबा ते॥

सट्टेबाजी पर लोकगीत—प्रस्तुत ब्रज लोकगीत द्वारा समाज में व्याप्त जुआ, सट्टा जैसी बुराइयों के प्रति सामाजिक चेतना व्यक्त की गई है—

सट्टेबाजी में लगाय दै बलमा आग, भई है घर की बरबादी।
बरबादी सब घर की है गई, कछु न अब तक आयौ है।
अट्ठा और छब्बीस, अठासी सब, तैंनें दाब लगायौ है।।
रोटी पानी और मिलौ, नाँय कबहु हमकूँ साग॥ भई है घर··
पुरखन नै नाँय कियौ काम, कबहु ऐसी बरबादी कौ।
ऐसी आप करी बरबादी, उन राखयौ घर आबादी कौ।
उनकी इज्जत में लगाय, दियौ तेनै दाग॥
अरे सट्टे बाजी में लगाय दै बालमा आग॥ भई है घर··

विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार—इस ब्रज लोकगीत में लोक-समाज की आर्थिक समस्याएँ के प्रति सामाजिक चेतना का स्वर इतना उन्नत है कि ब्रज के इस लोकगीत में पत्नी द्वारा विदेशी सामान की इच्छा जागने पर वह उसको अत्यंत सहज तरीके से समझता भी है। लोकगीत इस प्रकार है—

घर में माल विदेशी कबहुँ भूलकें नहीं लाऊँ बावरिया,
अरी बाबरी माल विदेशी, पैसा जावै भारी।
पैसा जाय देस ते बाहर, जीवन की हैवै ख्वारी।
बैठे देस पै कर्ज, कर्ज ते टूटै कमरिया।
घर में माल विदेशी कबहुँ नहीं लाऊँ बावरिया।

साअ

ग्राम-नाहरौली ठाकुर, पोस्ट-शीशवाड़ा, तहसील-डीग
भरतपुर (राजस्थान)
दूरभाष : ९९८३५१९१४१

सर्वश्रेष्ठ सब्जी-फल

• रेनू सैनी

'मैं बड़ा हूँ।' सीताफल बोला।

'नहीं, मैं बड़ी हूँ।' भिंडी बोली।

'अरे, नहीं-नहीं, मैं बड़ा हूँ।' अनार बोला।

'तुम सब कैसे बड़े हो गए। मैं बड़ा हूँ।' केला बोला।

'सब से श्रेष्ठ तो मैं हूँ।' पपीता बोला।

आज सब्जीमंडी में सभी सब्जियों और फलों में यह जोरदार बहस छिड़ गई थी कि उनमें कौन सबसे बड़ा है?

उन्हें आपस में ऐसे लड़ते व मारपीट करते देखकर आलू व आम ने बीच-बचाव किया। वे बोले, 'आपस में लड़ने से कुछ नहीं होगा। हम ऐसा करते हैं कि पहले सारी सब्जियाँ और फल अपने-अपने गुण बताएँ। इनमें से जिसके गुण सर्वोपरि होंगे, उसे ही सर्वश्रेष्ठ माना जाएगा।' फल व सब्जियाँ इस बात पर सहमत हो गए और एक-एक कर अपने गुणों का बखान करने लगे।

सबसे पहले सीताफल आया। वह बोला, 'सीताफल है मेरा नाम, छोटा सा है मेरा दाम, बड़ा उपयोगी मेरा काम, मुझको शौक से खाते राम।' सीताफल की तुकबंदी पर सभी झूम उठे। अब आई भिंडी। वह बोली, 'मैं हूँ भिंडी, हरे रंग की बिंदी, सबकी पसंद मैं, चाहे चीनी या हिंदी।' फिर गोभी मंच पर आई और बोली, 'सबकी प्यारी गोभी, मुझको खाते चाव से गोपी और मोती।' इसके बाद करेला इतराता हुआ मंच पर आया तो सब उसे देखकर हँसने लगे। उन्हें हँसते देखकर वह कमर पर हाथ रखते हुए बोला, 'मेरा नाम है करेला, खाने में हूँ कुछ कसैला, मधुमेह के रोगी का हूँ भनैला, न समझो मुझको झमेला।' इसके बाद सब्जी-फलों की हँसी बंद हो गई और सभी उसके गुणों से सहमत हो गए। इसके बाद तोरी अपनी पतली कमर को लचकाते हुए आई और बोली, 'मेरा नाम तोरी, नहीं चढ़ाती मैं त्योरी, गुणों का स्रोत हूँ मैं कोरी, बनाती हूँ सबको गोरी।' अब पालक-सरसों-मेथी हरी सब्जियों की जमात एक साथ हाथ में हाथ डाले आई और बोली, 'हरा रंग है यारा, हम से मिलता लोहा सारा, गुणों की एक धारा, जिससे जग सारा हारा।'

इस प्रकार अनेक सब्जियाँ अपने गुण बता चुकीं तो विवाद और भी गहरा हो गया। आम व आलू ने अवसर की नजाकत को समझते हुए कहा, 'अब फल अपने गुण बताएँगे।' यह सुनकर अनार इठलाता और बलखाता हुआ आया। उसे अपने रूप-सौंदर्य का बहुत घमंड था। उसने इतराते हुए मंच पर प्रवेश किया और बोला, 'मैं लाल-लाल रसीला, सुंदरता में हूँ अकेला, कपोलों को लाली देता मेरा रस रंगीला।' इसके बाद पपीता सबको नमस्कार करते हुए बोला, 'मैं हूँ पपीता, रोगी को स्वस्थ करता, पीला रंग मेरा सबको खुशी देता।' अब अंगूर की बारी थी। वह सिर झुकाकर बोला, 'खट्टा-मीठा, छोटा-मोटा, मुनक्का, वाइन और किशमिश बनाता, बच्चा-बड़ा मुझको खाता और मैं सबको खूब लुभाता।' इसके बाद गोल-गोल संतरा लुढ़कते-पुढ़कते मंच पर आया और बोला, 'गोल-गोल गोला, विटामिन सी का झोला, चेहरे की सुंदरता का स्रोत मैंने खोला।'

सुपरिचित साहित्यकार। 'दिशा देती कथाएँ' एवं 'बचपन का सफर'। हिंदी अकादमी, दिल्ली द्वारा चार बार नवोदित लेखन एवं अनेक बार आशुलेखन में पुरस्कृत, 'भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार', राष्ट्रीय स्तर की पत्र-पत्रिकाओं, समाचार-पत्रों एवं आकाशवाणी से समय-समय पर रचनाओं का प्रकाशन व प्रसारण।

फलों के अपने-अपने गुण बताते-बताते उनका विवाद भी बढ़ गया। यह देखकर आम मंच पर आया और बोला, 'सभी अपने-अपने बेहतर गुण बता चुके हैं। इन सबसे तो विवाद और बढ़ गया है। अब हमें सभा को कुछ विराम देना चाहिए।' सब्जी-फल आम की बातें ध्यान से सुन रहे थे। इस पर इतराते हुए अनार बोला, 'अरे ऐसे तो यह फैसला कैसे होगा कि हममें श्रेष्ठ कौन है?' गाजर को अपने गुण बताने का मौका अभी नहीं मिल पाया था। वह बोली, 'हाँ, बिल्कुल ऐसे तो पता चलना मुश्किल है।' गाजर की बात सुनकर आलू बोला, 'मुझे एक विचार आ रहा है। वह यह कि हम सब को एक साथ सब्जी मंडी में चलना चाहिए। वहाँ पर हम देखेंगे कि ग्राहक हमें कितना पसंद कर रहे हैं। फिर फैसला अपने आप हो जाएगा। इसमें किसी भेदभाव की गुंजाइश भी नहीं रहेगी।' सभी आलू की बात से सहमत हो गए।

अब सब्जी मंडी में फल व सब्जियों के अलग-अलग ढेर बन गए। ग्राहक वहाँ पर आए। किसी ने तोरी खरीदी तो किसी ने घीया, कुछ ने गाजर, मटर, भिंडी, गोभी आदि ली। इसी तरह फलों में अंगूर, अनार,

जामुन, पपीते आदि को खरीदा गया। सभी सब्जी-फलों ने यह नोटिस किया कि उन्हें अकेले नहीं खरीदा गया है। उनके साथ टमाटर, प्याज, लहसुन और मसालों की भी खरीद हुई है। रात होने पर सभी सब्जी फलों की बैठक एक साथ लगी। आम और आलू सब्जी मंडी की बिक्री देखकर परिणाम का अंदाजा लगा चुके थे, लेकिन फिर भी वह हर सब्जी-फल को इसका अहसास कराना चाहते थे।

सभी सब्जी-फल सभा स्थल पर एकत्र हो गए। उन्हें एक साथ देखकर आम बोला, 'आप सभी ने आज सब्जी मंडी में देखा कि ग्राहक ने केवल एक सब्जी फल न लेकर अनेक सब्जी और फल खरीदे। इसका अर्थ यह हुआ कि कोई भी सब्जी अकेले नहीं बनाई जा सकती।' इस पर आलू बोला, 'बिल्कुल सही। जैसे कि आलू-पालक, मटर-पनीर, आलू-गोभी, करेला आदि सभी सब्जियाँ टमाटर, प्याज, धनिए और लहसुन के संग ही चटपटी बनती हैं। इनके अभाव में सब्जी बेस्वाद व फीकी लगती है।' यह सुनकर सभी सब्जियाँ कुछ सोच में पड़ गईं। तभी गाजर बोली, 'आप यह कहना चाह रहे हैं कि एकता में ही शक्ति है और अकेले कोई भी श्रेष्ठ नहीं कहा जा सकता।' इस पर आम बोला, 'क्या बात है गाजर रानी। बिल्कुल सही कहा तुमने। तभी तो तुममें विटामिन 'ए' की खान है। मटर कुछ बोलती, तभी सेब बोला, 'पर हम तो अलग-अलग हैं। हममें सर्वश्रेष्ठ कौन है? सेब की बात पर आलू बोला, 'सेब और अन्य फलों, माना कि आप सब का अस्तित्व अलग है, किंतु फलों की चाट अनेक मसालों और फलों से मिलकर बनती है। रोज-रोज व्यक्ति एक फल नहीं खा सकता, चाहे वह कितना ही स्वादिष्ट और गुणवान क्यों न हो? दूसरा स्वाद में फर्क अन्य फलों के कारण ही तो लग पाता है। ऐसे में सभी फल अपनी-अपनी जगह सर्वश्रेष्ठ हैं।' आलू की बात पर सभी फल चुप हो गए।

कुछ देर सब्जी-फलों में चुप्पी छा गई। आम और आलू एक-दूसरे की तरफ प्रश्नवाचक नजरों से देखने लगे। तभी जोर की आवाज गूँजी। हम सब एक हैं, मिलकर हम बनते सर्वश्रेष्ठ हैं। आवाज की दिशा में आम और आलू ने नजर घुमाई तो देखा कि सभी सब्जी-फल एक-दूसरे का हाथ पकड़कर खड़े हैं और नारे लगा रहे हैं।

सब्जी-फलों के मिलन को देखकर आम और आलू भी एक-दूसरे के गले लग गए और अन्य सब्जी-फलों के साथ जा मिले।

३, डी.डी.ए. फ्लैट्स
खिड़की गाँव, मालवीय नगर,
नई दिल्ली-११००१७
दूरभाष : ९९७११२५८५८

कविता

प्रोत्साहन स्नेह भूरि-भूरि

• श्रीधर द्विवेदी

राष्ट्रमंडल खेल दो हजार बाईस,
कीर्ति का श्रीगणेश बिखेरा है,
बेटियों ने,
बहुप्रतीक्षित स्वर्ण और रजत,
तिरंगा लहराया जन-गण-मन,
बर्मिंघम में सुगंध और सुयश।
स्वर्णाक्षरों में अंकित,
एक मीराबाई चानू,
दूसरी भारत के माथे की,
बिटिया बिंदिया रानी,
कहाँ तक बखानू,
इनके जिजीविषा की कहानी।
अभी तो बस खाता खुला ही है,
सिंधू का खेल अभी बाकी है,
इंद्रधनुषीय भारतीय प्रतिभा का ,
पटल आयाम खुलना झाँकी है।
पी.टी. ऊषा बाबी जार्ज,
हिमादास मेरी कॉम,
सायना साक्षी मलिक,
लवलीना से अनेक नाम।
कोई उड़नपरी कोई स्वर्णपरी,
कोई कोटि हृदय की स्वप्नपरी,
कल्पना सदृश आकाशपरी,
माँ भारति की कोई मणिकपरी।
कश्मीर सिंधु रामेश्वर तक,
कामाक्षी से गुजरात कच्छ,
ग्राम्यांचल से नगरांचल तक,
बिखरे अनंत हीरे सदक्ष।
बेटियाँ रजत बेटी हिरण्य,
बेटियाँ कांस्य बेटियाँ तन्य,
बेटियाँ पुन्य बेटियाँ धन्य,
बेटियाँ लगन तप निष्ठ जन्य।
आजादी के अमृत महोत्सव में,
बर्मिंघम क्रीड़ा महाकुंभ में,
भारती किरीट के ऐसे नगीनों का,
स्वर्ण रजत कांस्य विजेताओं का,
स्वागत अभ्यागत पूरि-पूरि,
प्रोत्साहन स्नेह भूरि-भूरि।

चिकित्सा विषय पर हिंदी में लिखनेवाले प्रतिनिधि लेखक। नई दिल्ली स्थित जामिया हमदर्द के 'हमदर्द इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइंसेज एंड रिसर्च' में डीन व प्राचार्य पद पर कार्यरत। 'हृदयवाणी' (काव्य-संग्रह), 'तंबाकू चित्रावली' प्रकाशित।

हमदर्द इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइंस ऐंड रिसर्च
एसोसिएटेड हकीम अब्दुल हमीद सेंटेनरी हॉस्पिटल
जामिया हमदर्द (हमदर्द यूनिवर्सिटी)
नई दिल्ली-११००६२
दूरभाष : ९८१८९२९६५९

वर्ग पहेली (१९८)

अगस्त २००५ अंक से हमने '**वर्ग पहेली**' प्रारंभ की, जिसे सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं ज्ञान-विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३१ अक्तूबर, २०२२ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें तीन सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम-पते नवंबर २०२२ अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर '**वर्ग पहेली', साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२** के पते पर भेजें।

वर्ग पहेली (१९६) का शुद्ध हल

१ प्र	२ बो	धि	३ नी		४ वि	५ भा	६ वि	त
८ भा	ल		८ प	९ दु		१० स	भा	
	बा			११ कं	१२ चे		१३ वं	१४ हे
१५ सै	ला	नी			१६ प	थी	री	ला
र			१७ क	मे	रा			ल
१८ गा	१९ य	हो	ना			२० ता	२१ रि	का
२२ ह	था		२३ सी	२४ धा			स	
	२५ कृ	२६ ते		२७ रा	२८ धा		२९ या	३० र
३१ म	त	ल	ब		३२ वि	श्व	ना	थ

★ पुरस्कार विजेता ★

१. **श्री वाई.के. श्रीवास्तव**
१३९२ जय नगर, यादव कॉलोनी
जबलपुर-४८२००२(म.प्र.)
दूरभाष : ९८२७६८३३५६

२. **श्री विपिन सिन्हा**
डी.एन. विहार गैस गोदाम के पास
कोटा रोड, गुढियारी, रायपुर (छ.ग.)
दूरभाष : ९७७०९६२२०१

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई।

वर्ग-पहेली १९६ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—सर्वश्री प्रमोद कुमार (गौतमबुद्ध नगर), सुभाष शर्मा, दिनकर सहल, आनंद कुमार, सुमेधा उत्प्रेती, सुनील राठौर (दिल्ली), सुनीता कुमारी (गुड़गाँव), रामधन सुथार (ब्यावर), धर्मेश चौरसिया (कटनी), देव कुमार सिंह (हरिद्वार), रामप्रकाश राय (गोरखपुर), संतु मलिक (महेंद्रगढ़), राकेश सिन्हा (नोएडा), नवीन कांडपाल (अल्मोडा)।

बाएँ से दाएँ—

१. नित्य, अहले जबान की भाषा (४)
४. छल-कपट, फरेब (२)
७. बड़ा मकान (३)
८. जो कभी बूढ़ा न हो, देवता, अजर (३)
१०. अहंकार, घमंड (३)
१२. सुंदर नेत्रों वाला (६)
१५. रंगत उड़ा हुआ, स्वच्छ (२)
१६. चैतन्य महाप्रभु की माता (२)
१७. एक प्रकार का लंबा ढीला पहनावा (२)
१९. आनेवाला दिन (२)
२१. अवकाश का दिन आनंद से बिताना (मुहा.) (३,३)
२४. एक प्रकार का गोटा (३)
२६. बैलों का जुआ, छोटा पीढ़ा (२)
२७. सुगंधित, मुखिया (३)
२९. मनुष्य के हाथ का पंजा व उसकी पकड़ (३)
३१. फूल की पँखुड़ी, सेना (२)
३२. खड्ग, कृपाण (४)

ऊपर से नीचे—

१. शरीर पर के बाल (२)
२. गहरा कुआँ, नरक (४)
३. गंदगी, मैल (२)
४. कागज पर लिखा हुआ, अंकित (२)
५. सिपाहियों का छोटा दस्ता, रक्षक (३)
६. कहीं जाने से रोकना, पाँव छूना (मुहा.) (२,४)
८. वासस्थाान, घर, घोंसला, माँद (३)
९. न चाहा हुआ, आकस्मिक, अचानक (४)
११. कच्चा या जल्दी में किया हुआ (२)
१२. लांछन लगना (मुहा.) (३,३)
१३. चिपकने का गुण (२)
१४. अनुकर्ता, हास्यपात्र, प्रहासी (४)
१८. घर की छत (उर्दू), पीड़ाहर लेप (२)
२०. किसी वस्तु के झुकने का गुण (२)
२२. हिफाजत, सेवा-शुश्रूषा (३)
२३. नाक का छेद (२,२)
२५. इच्छा पूरी करने वाला (३)
२८. कठिनाई का दूर होना (२)
२९. मृगशिरा नक्षत्र, चंद्रमा, कपूर (२)
३०. चिपचिपाहट, चेप, आकर्षण (२)

वर्ग पहेली (१९८)

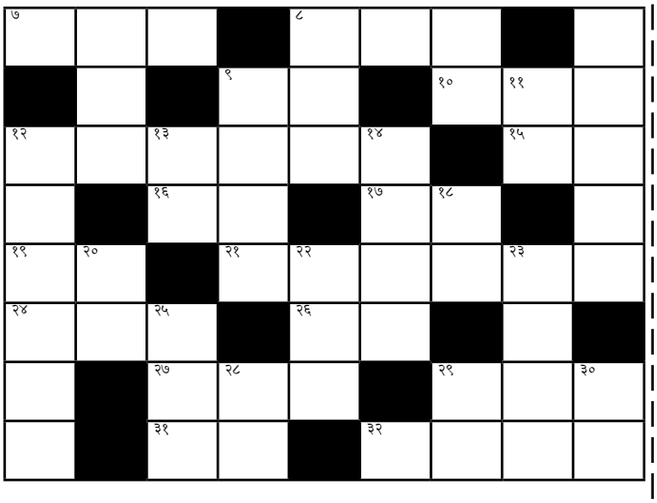

प्रेषक का नाम : .....

पता : .....

.....

.....

दूरभाष : .....

वर्ग पहेली (१९७) का हल अगले अंक में।

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'साहित्य अमृत' का अमृत महोत्सव विशेषांक यथासमय मिल गया था। 'साहित्य अमृत' के जितने भी विशेषांक आए हैं, उनसे गुजरा हूँ और उनके महत्त्व का अनुभव किया है। उन्हीं विशेषांकों के क्रम में यह विशेषांक अपनी गहरी मूल्यवत्ता लिये हुए है। भाई लक्ष्मीशंकर वाजपेयी का संपादकीय मुझे बहुत प्रभावित करता है। विषय साहित्य का हो या साहित्य से इतर, उनका संपादकीय उनकी विद्वत्ता और विवेक से आलोकित रहता है। प्रस्तुत विशेषांक में आए लेख स्वाधीनता संग्राम के अनेक परिचित और अल्पपरिचित आयामों से गुजरे हैं। स्वाधीनता संग्राम में किन-किन क्षेत्रों, विभागों आदि के किन-किन लोगों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई, किन-किन राष्ट्रप्रेमियों ने अंग्रेजों के जुल्मों का प्रतिकार करते हुए अपनी शहादत दी, स्वाधीन भारत के नवनिर्माण के लिए क्या-क्या योजनाएँ बनीं और किन-किन क्षेत्रों में उत्कर्ष की क्या स्थिति बनी, ये अनेक सत्य विशेषांक के लेखों द्वारा उजागर हुए हैं। कला और साहित्य की भूमिका की भी पहचान की गई है। जलियाँवाले बाग से संबंधित सुभद्रा कुमार चौहान की कविता ने तो मुझे भीतर तक गहरे भिगो दिया।

—रामदरश मिश्र, दिल्ली

आदरणीय भाई पं. विद्यानिवास मिश्रजी के संपादकत्व में जब पहला अंक निकला था, तब से मैं 'साहित्य अमृत' की पाठिका और प्रशंसक रही हूँ। अब उम्र के इस पड़ाव पर आ गई हूँ, जब अधिक पढ़-लिख नहीं पाती, किंतु साहित्य के अमृत का स्वाद जिसने चख लिया, उसका उम्र की संख्या भला क्या बिगाड़ लेगी। स्वाधीनता के अमृत महोत्सव पर जो विशेषांक आया है, उसके लिए प्रभात प्रकाशन को बधाई देती हूँ, 'न भूतो, न भविष्यति' वाले वाक्य का प्रयोग नहीं करना चाहती, क्योंकि शुभकामनाएँ देती हूँ कि भविष्य में और श्री श्रेष्ठ अंक आते रहें। पर यह जरूर कहूँगी कि भूतकाल में इससे बेहतर अंक नहीं देखे थे। यह अंक सचमुच एक चमत्कार जैसा लग रहा है। संपादक श्री लक्ष्मीशंकर वाजपेयीजी को शत-शत बधाई और प्रणाम। हर पृष्ठ की सामग्री इतनी अच्छी है कि बिना पढ़े रहा नहीं जाता; और उससे भी बड़ी बात यह कि 'काश, अमुक विषय पर भी कुछ ध्यान दिया होता।' ऐसी बात जेहन में आती ही नहीं है। अपने में संपूर्ण यह अंक संग्रहणीय है। सभी पाठकों ने सहेजकर रख लिया होगा।

एक बात के लिए और अधिक प्रशंसा और प्रणाम करूँगी वाजपेयीजी को कि उन्होंने इस अंक के संयोजन में श्री आशुतोष भटनागर से प्राप्त सहयोग के लिए उनका आभार माना है। बधाई आशुतोषजी। मुझसे पहले की पीढ़ी ने जिस तरह चतुरसेन शास्त्रीजी के संपादकत्व में 'चाँद' के 'फँसी अंक' को जीवनभर सँभालकर रखा था और अपनी अगली पीढ़ी को सौंपा था, इसी तरह 'साहित्य अमृत' का स्वाधीनता के ७५वर्ष पर यह 'अमृत महोत्सव विशेषांक' भी पीढ़ी-दर-पीढ़ी पढ़ा जाएगा।

—पुष्पा भारती, मुंबई (महा.)

सामान्यत: मनुष्य अपने वर्तमान को जीता है और अनेक बार अपने व्यस्त वर्तमान में इतना लिप्त हो जाता है कि एकांगी जीवन जीने लगता है। जब वर्तमान उसे परेशान करता है तो वह भविष्य के सपने सँजोने लगता है। पर देश केवल वर्तमान में नहीं जीता है, वह अतीत और भविष्य को अपने जीने का हिस्सा बनाकर वर्तमान को जीता है। अमृतोत्सव पर प्रकाशित 'साहित्य अमृत' का समृद्ध अंक एक ऐसा ही आधार देनेवाला है। वह आज के युवा के सामने अतीत के अनेक झरोखे खोलनेवाला है, जिससे हमारे देश का वर्तमान बना है। यह देश के स्वर्णिम भविष्य के लिए दृढ़ आधार बननेवाले वर्तमान की चुनौतियों को भी रेखांकित करनेवाला है। किसी भी देश की स्वाधीनता को सशक्त करने के लिए यह आवश्यक भी है।

इस अंक में चार शताब्दियों से अधिक के निरंतर संघर्ष के पदचिह्नों पर चलते हुए स्वतंत्रता के सूर्योदय तक की, कालापानी के राजनीतिक कैदियों की प्रेरणादायक गाथा है। स्वातंत्रता संग्राम में शिक्षक, संस्कृत, साहित्य, वैज्ञानिकों, पत्रकारों, वीर रानी गाइदिन्ल्यू, राजाओं-महाराजाओं आदि की भूमिका रेखांकित है। संपादकीय में जिस देश में सुई नहीं बनती थी, उसके आज के समय में भारतवंशियों और प्रवासी भारतीयों के योगदान, खेल में बढ़ते कदमों, विज्ञान और प्रौद्योगिकी आदि को उचित रेखांकित किया गया है। निश्चित ही यह अंक हमारी समृद्ध परंपरा को रेखांकित करता है, हमें स्वर्णिम भविष्य के लिए प्रेरित भी करता है। गोपाल चतुर्वेदी ने 'राम झरोखे में' बैठकर आजादी के अपने-अपने अर्थ के माध्यम से इसके विभिन्न कोण देखे-परखे हैं। इस महत्त्वपूर्ण अंक के लिए संपादकीय विभाग और 'साहित्य अमृत' का हर हिस्सा बधाई का पात्र है।

—प्रेम जनमेजय, नई दिल्ली

'साहित्य अमृत' का 'अमृत महोत्सव विशेषांक' भारत की स्वाधीनता की दुर्गम यात्रा का विस्तृत विवरण प्रस्तुत करता है। हर लेख नवीन और अनजानी जानकारियों से भरा हुआ है। समाज के हर तबके ने भारत की आजादी के लिए संघर्ष किया और यथासंभव योगदान दिया, यह इस विशेषांक के लेखों से स्पष्ट होता है। भाई परमानंद की आत्मकथा के अंश ने झकझोरकर रख दिया कि हमारे क्रांतिवीरों ने कितनी अमानवीय यातनाएँ सहीं! पर दुर्भाग्य है कि हमने माँ भारती के इन सपूतों को भुला दिया। इनके त्याग और देशप्रेम की गाथाओं को नई पीढ़ी तक पहुँचाने में इस विशेषांक की महती भूमिका होगी। सच कहूँ तो आजादी की लड़ाई के बारे में इतना कुछ नहीं जान पाया था, जितना इस विशेषांक को पढ़कर जान पाया। आप सबका अभिनंदन, जय हिंद!

—मेजर जन. एस.पी.एस. त्यागी, नई दिल्ली

साहित्य का यह अमृत कलश (साहित्य अमृत) है। देश आजादी का ७५वाँ वर्ष अमृत महोत्सव के रूप में मना रहा है और हम 'अमृत महोत्सव' से अमृत काल की ओर बढ़ रहे हैं। इस विषय पर संपादक श्री लक्ष्मीशंकरजी का संपादकीय बहुत ही सुंदर और सराहनीय है। भारत

ने गुलामी की बेड़ियाँ कैसे तोड़ीं और देश के कोने-कोने से कैसे-कैसे आजादी का यह युद्ध लड़ा गया, इस संग्रणीय अंक में विद्वान् लेखकों द्वारा बताया गया है। हर लेख काफी पठन-पाठन और मनन के बाद ही प्रकाशित किया गया है। हमारा जन्म तो गुलाम भारत में ही हुआ, इस कारण हमें आजादी मिलने के पहले के कुछ वर्षों को देखने और भोगने का अवसर मिला, लेकिन हमारी तीसरी पीढ़ी स्वतंत्रता के युद्ध और कुर्बानियों से बिल्कुल अनभिज्ञ है। यह पत्रिका इस पीढ़ी को बहुत कुछ बता सकती है कि अपने देश को कितने संघर्षों और कुर्बानियों के बाद आजादी प्राप्त हुई। इतने अच्छे अंक के लिए मेरी शुभकामनाएँ स्वीकार करें।

—बी.एल. गौड़, नई दिल्ली

साहित्य एवं संस्कृति का मासिक संवाहक 'साहित्य अमृत' पत्रिका अच्छी लगी। यह इस क्षेत्र में प्रेरणादायक एवं जानकारी योग्य तथा शिक्षाप्रद लगी। इसके मोटे अक्षर एक वृद्ध पाठक भी पढ़ सकता है।

—मुकेश मोहन तिवारी, ग्वालियर (म.प्र.)

जुलाई के 'साहित्य अमृत' के आवरण पृष्ठ पर वर्षा से आह्लादित बच्चों के चित्र से हुलसती प्रकृति का चित्रण बहुत रोचक लगा। 'विश्व मंच पर हिंदी···' पर संपादकीय प्रेरक लगा। आजकल तो हिंदीभाषी अर्थात् उत्तर भारत के रहनेवाले ही हिंदी के उत्कर्ष में रोड़ा हैं। प्रतिस्मृति में मन्नू भंडारी की कहानी 'अकेली' झकझोर देनेवाली है। समाज में कुछ ऐसे भी स्मरण भरे पड़े हैं। साहित्य के क्षेत्र में अब 'साहित्य अमृत' के सहारे ही बड़ा पाठक वर्ग है। वर्षा की फुहारों सा आनंद देती यह उम्दा पत्रिका है। कविता, कहानी, आलेख, गजल आदि से पाठकों का मनोरंजन-ज्ञानवर्धन करनेवाली पत्रिका 'साहित्य अमृत' ही है।

—विजयपाल सेहलंगिया, महेंद्रगढ़ (हरि.)

'साहित्य अमृत' का भारी-भारकम अमृत महोत्सव विशेषांक प्राप्त हुआ। भारत-भू पर लहराता तिरंगा गौरव-बोध जगाता है। भारतवासी अपने-अपने तरीके से आजादी का अमृत महोत्सव मना रहे हैं। प्रतिस्मृति में भाई परमानंद ने काला पानी की क्रूर जेल का रोंगटे खड़े कर देनेवाला वर्णन है। स्वतंत्रता सेनानियों ने जुल्म की इंतिहा सहन की। आलेखों में जे. नंद कुमार, आशुतोष भटनागर, सुनीताजी, प्रदीप कुमार, देवेश खंडेलवाल, विवेक अग्रवाल, अर्पणा चित्रांश, विद्या केशव चिटको, संजय कृष्ण, ध्रुव कुमार के आलेख बेहद जानकारीपरक और पठनीय हैं। पुस्तक-अंश बेहद रोमांचक है। कुल मिलाकर एक अच्छा विशेषांक है, जिसमें अलग-अलग क्षेत्रों की बेहद नई जानकारी हमें प्राप्त हुईं। साहित्य अमृत के विशेषांक हमेशा से ही उत्कृष्ट होते हैं, उसी शृंखला में यह भी है। आजादी के अमृत-महोत्सव की सभी को शुभकामनाएँ!

—आनंद शर्मा, जेवर (उ.प्र.)

'साहित्य अमृत' का 'अमृत महोत्सव विशेषांक' पढ़कर मन भावुक हो गया। आपने हमारे स्वाधीनता संग्राम के अनेक अनजाने, अपरिचित परंतु अत्यंत गौरवशाली प्रसंगों और प्रमाणों को प्रस्तुत कर पाठकों को समृद्ध कर दिया। निश्चित रूप से यह पठनीय और संग्रहणीय अंक हमारी वर्तमान और भावी पीढ़ी को अपने गौरवशाली स्वातंत्र्य समर से परिचित करवाएगा और अपने हुतात्माओं के प्रति श्रद्धा उत्पन्न करेगा। 'टीम साहित्य अमृत' का अभिनंदन!

—पुष्पेश सिंह, चंडीगढ़

'साहित्य अमृत' का 'अमृत महोत्सव विशेषांक' बृहद होने के साथ-साथ ही विशद जानकारियाँ देनेवाला है। जे. नंद कुमारजी का आलेख 'स्वाधीनता से स्वतंत्रता की ओर' इस अंक को वैशिष्ट्य प्रदान करता है। स्वाधीनता के अमृतकाल में भारतवर्ष 'स्वतंत्र' भाव विकसित कर और यशस्वी बने, इसके लिए हमें स्वयं को समर्पित करना होगा। हर नागरिक कर्तव्यबोध से अपना किंचित् भी योगदान करेगा तो कोई कारण नहीं कि भारत पुनः 'विश्वगुरु' न बन जाए। यह अंक हमारे चिंतन को धार देगा और स्वाधीनता संग्राम के विस्मृत अध्यायों और बलिदानियों से भी परिचित करवाएगा।

—सीतांशु भारद्वाज, कोटा (राज.)

'साहित्य अमृत' का नियमित पाठक हूँ और इसके हर अंक की प्रतीक्षा रहती है। अगस्त अंक तो गागर में सागर है। एक स्थान पर भारत की स्वाधीनता के विभिन्न घटकों और आयामों के विषय में विस्तृत जानकारी प्राप्त हो गई, यह असाधारण बात है। इस अंक को अधिक-से-अधिक लोगों को पढ़ना चाहिए, ताकि वे बहुत सी अनजानी बातों से परिचित हो सकें। हम अपने क्रांतिकारियों के प्रति कृतज्ञ हों और उनका स्मरण करें, उनकी यशोगाथा गाएँ, यह अभीष्ट है। सभी रचनाकारों का विशेष अभिनंदन, जिनके कारण यह अंक इतना संग्रहणीय बना गया है।

—राजेंद्र सिंह, रोहतक (हरि.)

'साहित्य अमृत' का अगस्त माह का अंक अमृत महोत्सव के विशेषांक के रूप में आया है। भारत को स्वतंत्रता प्राप्त हुए पचहत्तर साल हो गए हैं। इस लंबे कालखंड में देश ने बहुत से संकटों का सामना किया और अपना विकास भी किया। भारत कई क्षेत्रों में विश्व का सिरमौर बन गया, अपने पड़ोसी सब देशों से आगे ही है, यह सब देश पर मर मिटी महान् आत्माओं के त्याग के फलस्वरूप ही हो सका। देश को स्वतंत्र कराने में हजारों-लाखों लोगों ने कुरबानी दी। बहुत सारी ऐसी भी आत्माएँ हैं, जिनके बलिदान का जिक्र इतिहास में दर्ज नहीं हो पाया, दर्ज भी हुआ तो उन्हें बहुत हलका आँका गया। देश पर मर-मिटनेवाली ऐसी हुतात्माओं के लिए सच्ची श्रद्धांजलि है यह विशेषांक। उनके कृतित्व को लेख, कविता और नाना रूपों में अभिव्यक्ति मिली है। इस विशेषांक से आनेवाली पीढ़ी निश्चित ही देश के लिए बहाए गए खून-पसीने और बलिदानों से परिचित होगी; उनमें देश के प्रति भाव जागेगा। उन्हें अपने देश पर गर्व महसूस होगा। ऐसे शानदार और प्रेरणादायी अंक के लिए संपादक मंडल साधुवाद का पात्र है।

—चंद्रमोहन मिश्र, पीलीभीत (उ.प्र.)

उ.प्र. हिंदी संस्थान के सम्मान घोषित

२ अगस्त को उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान के वर्ष २०२१ के सम्मानों/पुरस्कारों की घोषणा कर दी गई। संस्थान का प्रतिष्ठित आठ लाख रुपए का 'भारत भारती सम्मान' डॉ. रमानाथ त्रिपाठी को, पाँच लाख रुपए का 'लोहिया साहित्य सम्मान' श्री बुद्धिनाथ मिश्र को, पाँच लाख रुपए का 'हिंदी गौरव सम्मान' डॉ. गिरिराज शरण अग्रवाल को, पाँच लाख रुपए का 'महात्मा गांधी साहित्य सम्मान' डॉ. विश्वास किसन पाटील को, 'पं. दीनदयाल उपाध्याय साहित्य सम्मान' डॉ. रामशरण गौड़ को, 'अवंतीबाई साहित्य सम्मान' डॉ. ओम प्रकाश मिश्र को, 'राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन सम्मान' दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा मद्रास, चेन्नई को तथा 'अटल बिहारी वाजपेयी साहित्य सम्मान' श्री हृदय नारायण दीक्षित को दिया जाएगा। 'साहित्य भूषण सम्मान' सर्वश्री हितेश कुमार शर्मा, रघुवीर सिंह, प्रीति श्रीवास्तव 'कबीर', किशन स्वरूप, उमा शंकर शुक्ल 'शितिकंठ', नताशा अरोड़ा, जयप्रकाश शर्मा, अशोक कुमार शर्मा, दयानिधि मिश्र, सभापति मिश्र, प्रमोद कुमार अग्रवाल, शिवानंद सिंह 'सहयोगी', नरेश मिश्र, रूपसिंह चंदेल, सुशील सरित, शची मिश्र, विजयशंकर मिश्र 'भास्कर', गिरीश पंकज, शिवदयाल, नीरजा माधव को अलंकृत किया जाएगा। 'लोक भूषण सम्मान' डॉ. महेंद्र भानावत को, 'कला भूषण सम्मान' डॉ. हृदय गुप्त को, 'विद्या भूषण सम्मान' डॉ. सुधांशु चतुर्वेदी को, 'विज्ञान भूषण सम्मान' श्री विजय चितौरी को, 'पत्रकारिता भूषण सम्मान' श्री बलबीर पुंज को, 'प्रवासी भारतीय हिंदी भूषण सम्मान' फ्रांस की डॉ. नलिनी बलबीर को, 'हिंदी विदेश प्रसार सम्मान' मॉरीशस की श्रीमती कल्पना लालजी को दिया जाएगा। सम्मान राशि ढाई लाख रुपए है।

ढाई लाख रुपए के 'बाल साहित्य भारती सम्मान' सर्वश्री फकीरचंद शुक्ला एवं दिनेश पाठक 'शशि' को; ढाई लाख रुपए का 'मधुलिमये साहित्य सम्मान' डॉ. विक्रम सिंह को, 'पं. श्रीनारायण चतुर्वेदी साहित्य सम्मान' श्री अश्विनी कुमार दुबे को; 'विधि भूषण सम्मान' श्रीमती सुधा अवस्थी को तथा ढाई लाख रुपए के 'सौहार्द सम्मान' सर्वश्री मुहीउदीन हसन 'सुहैल काकोरवी' (उर्दू), आर. लक्ष्मीनारायण (कन्नड़), क्रांति कनाटे (गुजराती), वीणा गुप्ता (डोगरी), एस. अनंतकृष्णन (तमिल), एम. लक्ष्मणाचार्युलु (तेलुगु), मोहन सपरा (पंजाबी), रामकृष्ण विनायक सहस्त्रबुद्धे (मराठी), के.एस. सोमनाथन नायर (मलयालम), हजारीमयुम इबेयाइमा देवी (मणिपुरी), मुरारीलाल अग्रवाल (संस्कृत), राघू मिश्र (ओड़िया), डॉ. तुलसी देवी (सिंधी) को दिए जाएँगे। इसके अलावा एक लाख रुपए का मदनमोहन मालवीय विश्वविद्यालय स्तरीय सम्मान सर्वश्री योगेंद्र प्रताप सिंह, प्रत्यूष दुबे को दिया जाएगा।

२०२१ में प्रकाशित पुस्तकों पर नामित पुरस्कार के अंतर्गत ७५ हजार रुपए का 'तुलसी सम्मान' श्री आनंद कुमार सिंह को, 'जयशंकर प्रसाद पुरस्कार' श्री विष्णु सक्सेना को, 'श्रीधर पाठक पुरस्कार' श्री शंकर सिंह को; 'निराला पुरस्कार' श्री कुमार ललित को, 'दुष्यंत कुमार पुरस्कार' श्री जसवीर सिंह को, 'महावीर प्रसाद द्विवेदी पुरस्कार' श्रीमती बीना शर्मा को, 'भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार' श्री जयवर्धन को, 'प्रेमचंद पुरस्कार' श्री श्याम बिहारी श्यामल को, 'यशपाल पुरस्कार' श्री रामजीभाई को, 'रामचंद्र शुक्ल पुरस्कार' श्री करुणा शंकर उपाध्याय को, 'सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' पुरस्कार' श्री जयश्री पुरवार को, 'पांडेय बेचन शर्मा उग्र पुरस्कार' श्री राजगोपाल सिंह वर्मा को, 'मलिक मोहम्मद जायसी सम्मान' श्री आशाराम जागरथ को, 'जगन्नाथ दास रत्नाकर पुरस्कार' श्री महेश चंद जैन को, 'राहुल सांकृत्यायन पुरस्कार' श्री जगत नारायण वर्मा को, 'मैथिलीशरण गुप्त पुरस्कार' श्री प्रताप नारायण दुबे को, 'सूर पुरस्कार' श्रीमती श्रद्धा पांडेय को, 'कबीर पुरस्कार' डॉ. अंबिकेश त्रिपाठी को, 'सुब्रह्मणयम भारती पुरस्कार' श्री वृजभूषण राय वृज को, 'बाबूराव विष्णु पराड़कर पुरस्कार' श्री नरेंद्र नाथ मिश्र को, 'सरस्वती पुरस्कार' श्री शोभनाथ शुक्ल को, 'भगवानदास पुरस्कार' श्री रामजी मिश्र को, 'हजारी प्रसाद द्विवेदी पुरस्कार' श्री रजनीश कुमार शुक्ल को, 'पंडित रामनरेश त्रिपाठी पुरस्कार' श्री मन्नू यादव को, 'बाबू श्यामसुंदर पुरस्कार' श्रीमती वंदना वशिष्ठ को, 'संपूर्णानंद पुरस्कार' डॉ. विनोद कुमार शर्मा को, 'के.एन. भाल पुरस्कार' श्री सुबोध कुमार को, 'पंडित सत्य नारायण शास्त्री पुरस्कार' डॉ. श्रीधर द्विवेदी को, 'आचार्य नरेंद्र देव पुरस्कार' श्री बृजलाल को, 'गोविंद वल्लभ पंत पुरस्कार' श्रीमती अशोक कुमारी को, 'डॉ. भीमराव अंबेडकर पुरस्कार' श्री कुँवर अनुपम सिंह को, 'डॉ. धीरेंद्र वर्मा पुरस्कार' श्री अंकुर मिश्र को, 'महादेवी वर्मा पुरस्कार' डॉ. चंपा सिंह को।

२०२१ में प्रकाशित पुस्तकों पर 'सर्जना पुरस्कार' के अंतर्गत सर्वश्री उमाशंकर गुप्त, विनोद शंकर शुक्ल, प्रवीण कुमार, कमल किशोर मिश्र, चंद्रभाल सुकुमार, रामावतार, अरुण कुमार, एल.के. कांतेश, सुमति सक्सेना, सुभाषचंद्र गांगुली, प्रेमचंद सिंह, संजय सिंह, राजमणि शर्मा, निर्मला सिंह, दयाराम मौर्य, तेजवीर सिंह, संजीव कुमार त्यागी, कृष्ण मोहन नायक, रमेश चंद्र गोयल, अरविंद पांडेय, पद्मनाथ पांडेय, हरिमोहन वाजपेयी, कृष्ण बिहारी त्रिपाठी, रामजन्म सिंह, शशिप्रभा तिवारी, राधिका मिश्रा, इसपाक अली, आलोक कुमार श्रीवास्तव, जया द्विवेदी और कृष्ण कुमार पांडेय, मंजरी दमेले, कमलेश गुप्ता, विजय सिंह राघव, अकबाल बहादुर, अरुण कुमार और नीतू मुकुल को देने की घोषणा की गई। प्रत्येक रचनाकार को चालीस हजार रुपए दिए जाएँगे। २५ हजार रुपए का 'हरिवंश राय बच्चन युवा गीतकार सम्मान' श्री राहुल द्विवेदी को तथा आठ हजार रुपए का 'पंडित बद्री प्रसाद शिंगलू स्मृति सम्मान' श्रीमती रजनी गुप्त को दिया जाएगा।

इक्यावन हजार रुपए की राशि के 'सुभद्रा कुमारी चौहान महिला बाल साहित्य सम्मान' श्रीमती विमला रस्तोगी को, 'सोहन लाल द्विवेदी

बाल कविता सम्मान' डॉ. अजय प्रसून को, 'अमृतलाल नागर बाल कथा सम्मान' श्रीमती ममता नौगरैया को, 'शिक्षार्थी बाल चित्रकला सम्मान' श्री शिवाशीष शर्मा को, 'लल्ली प्रसाद पांडेय बाल साहित्य पत्रकारिता सम्मान' श्री संजय वर्मा को, 'डॉ. रामकुमार वर्मा बाल नाटक सम्मान' डॉ. भारतेंदु मिश्र को, 'कृष्ण विनायक फड़के बाल साहित्य समीक्षा सम्मान' श्री अंजीव अंजुम को, 'जगपति चतुर्वेदी बाल विज्ञान लेखन सम्मान' डॉ. धीरेंद्र बहादुर सिंह को तथा 'उमाकांत मालवीय युवा बाल साहित्य सम्मान' श्री ललित मोहन राठोर 'ललित शौर्य' को दिया जाएगा। □

वार्षिकोत्सव संपन्न

१६ जुलाई को टी.डी. गर्ल्स इंटर कॉलेज, लखनऊ में भारतीय भाषा प्रतिष्ठापन राष्ट्रीय परिषद् के वार्षिकोत्सव की अध्यक्षता पूर्व मंत्री डॉ. सरजीत सिंह डंग ने की। परिषद् द्वारा वर्षभर आयोजित सुलेख, अंत्याक्षरी, वाद-विवाद एवं निबंध प्रतियोगिता में श्रेष्ठ विद्यार्थियों को पुरस्कृत किया गया। कवि श्री मनोज श्रीवास्तव, कथाकार डॉ. दुर्गा शंकर शुक्ला, विज्ञान लेखक डॉ. सुभाष गुरुदेव एवं पत्रकार श्री मृत्युंजय प्रसाद गुप्ता को सम्मानित किया गया। 'वैश्विक परिदृश्य में हिंदी और बोलियाँ' विषय पर विद्वानों से प्राप्त लेखों को सम्मिलित करते हुए वार्षिक पत्रिका 'हिंदी गरिमा' का लोकार्पण हुआ। परिषद् के अध्यक्ष श्री महेश चंद्र द्विवेदी की नवप्रकाशित पुस्तक 'वैज्ञानिक सोच की विविध रचनाएँ' एवं श्रीमती नीरजा द्विवेदी की पुस्तक 'अतीत की परछाइयाँ' के लोकार्पण के साथ उत्सव संपन्न हुआ। □

मॉरीशस में भारतीय स्वाधीनता का अमृत महोत्सव

मॉरीशस के महात्मा गांधी संस्थान (एम.जी.आई.) में भारतीय स्वाधीनता के अमृत महोत्सव पर एक बड़ा आयोजन हुआ। संस्थान के सृजनात्मक लेखन और प्रकाशन विभाग की ओर से हिंदी की चर्चित पत्रिका 'बसंत' के बाल विशेषांक का लोकार्पण भी हुआ। भारतीय उच्चायोग के सहयोग से आयोजित इस समारोह में विविध बैठकाओं के छात्रों द्वारा रंगारंग कार्यक्रम प्रस्तुत किए गए। एम.जी. आई. के महानिदेशक श्री आर. रामप्रताब ने कहा कि शिक्षा एक पासपोर्ट की तरह है, जिसके जरिए दुनिया के किसी भी देश में सफलता हासिल की जा सकती है। अमृत महोत्सव न केवल भारत के लोगों को समर्पित है, बल्कि भारत के बाहर रहनेवाले भारतीय मूल के उन सभी लोगों को भी समर्पित है, जिनकी आत्मा में अभी भी भारत बसा है। इस अवसर पर सर्वश्री निरंजन बिगन, सुधीर कुमार शर्मा, ज्योतिष कुमार झा, ऋषिराज कन्हाई, माधुरी रामधारी, रामदेव धुरंधर, हेमराज सुंदर, सरिता बुद्धू और विभिन्न संस्थाओं के पदाधिकारी, साहित्यकार और हिंदी प्रेमी उपस्थित थे। □

साहित्य अकादेमी का 'कथासंधि' कार्यक्रम संपन्न

८ अगस्त को साहित्य अकादेमी ने अपने प्रतिष्ठित कार्यक्रम 'कथासंधि' के अंतर्गत प्रख्यात हिंदी कथाकार श्रीमती उषाकिरण खान को आमंत्रित किया। उन्होंने सर्वप्रथम अपनी नवीनतम कहानी 'ग्रांड रिहर्सल' का पाठ किया, जो बिहार के एक छोटे कस्बे की लड़की निभा दास के संघर्ष पर आधारित है। अपनी रचनात्मक प्रक्रिया साझा करते हुए कहा कि ८० वर्ष की उम्र में अब मैं कह सकती हूँ कि लेखक बनना शायद मेरी नियति थी। मेरी पढ़ाई का विषय न हिंदी था, न मैथिली। मैंने तो आर्कियोलॉजी की पढ़ाई की और नौकरी भी उसी विभाग में की। 'पानी पर लकीर' की चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि यह उपन्यास पंचायती राज के दौरान महिलाओं को मिले सीमित अधिकारों पर है। कार्यक्रम में कई प्रख्यात लेखक एवं पत्रकार उपस्थित थे। □

सम्मान समारोह और लोकार्पण संपन्न

२३ जुलाई को दिल्ली के हिंदी भवन में विधि भारती परिषद् ने एक भव्य सम्मान समारोह और वर्ल्ड बुक ऑफ रिकॉर्ड, लंदन से सम्मानित काव्य संग्रह 'काव्य सलिला' तथा विधि भारती परिषद् की स्मारिका और महिला विधि भारती पत्रिका के नवीनतम अंक १११ (अप्रैल-जून, २०२२) का तथा कुछ अन्य पुस्तकों का लोकार्पण किया गया। मुख्य अतिथि थे न्यायमूर्ति श्री शंभूनाथ श्रीवास्तव। अध्यक्षता लोकसभा के पूर्व महासचिव ने की, सर्वश्री सत्या बहिन, तिलकराज टक्कर, कीर्ति काले, श्याम सिंह शशि, पूरनचंद टंडन तथा सपना सुकुल विशिष्ट अतिथि थीं। विधि भारती परिषद् का 'राष्ट्र भारती सम्मान' सर्वश्री कीर्ति काले, तिलकराज टक्कर और नारायण व्यास को; 'राष्ट्रीय विधि सम्मान' डॉ. सुभाष कश्यप को तथा हिंदी में विधि लेखन के लिए 'राष्ट्रीय विधि भारती पुस्तक पुरस्कार' सर्वश्री सुधा अवस्थी और नम्रता शुक्ला को दिया गया। □

'मेरे झरोखे से' कार्यक्रम संपन्न

२ अगस्त को साहित्य अकादेमी द्वारा आयोजित 'मेरे झरोखे से' कार्यक्रम में प्रख्यात लेखक स्व. श्री नरेंद्र मोहन पर उनके मित्र एवं लेखक श्री प्रताप सहगल ने कहा कि उनपर बोलना आसान है और मुश्किल भी। उनसे मेरा रिश्ता लंबी कविता में मेरी रुचि के कारण शुरू हुआ था। सर्वश्री सादिक, सुमन कुमार, विवेक मिश्र, अतुल कुमार, हरिसुमन बिष्ट, उनकी पुत्री सुमन पंडित सहित अनेक साहित्य प्रेमी उपस्थित थे। संचालन अकादेमी के संपादक (हिंदी) श्री अनुपम तिवारी ने किया। □

'तुलसी के राम' विषयक संगोष्ठी संपन्न

४ अगस्त को वाराणसी में आयोध्या शोध संस्थान, संस्कृति विभाग उ.प्र. तथा मासिक 'सोच विचार' के संयुक्त तत्त्वावधान में राजकीय पुस्तकालय के सभागार में 'तुलसी के राम' विषयक संगोष्ठी के मुख्य अतिथि प्रो. राजाराम शुक्ल थे। विशिष्ट अतिथि डॉ. दयानिधि मिश्र थे। अध्यक्षता डॉ. जितेंद्र नाथ मिश्र ने की। इस अवसर पर अयोजित कवि-गोष्ठी में सर्वश्री हरिराम द्विवेदी, मंजरी पांडेय, शरद कुमार श्रीवास्तव, प्रसन्नवदन चतुर्वेदी, संतोष प्रीत, लियाकत अली ने काव्यपाठ किया।

अतिथियों का स्वागत 'सोच विचार' के सहायक संपादक श्री वासुदेव उबेराय तथा धन्यवाद श्री के.एस. परिहार ने एवं संचालन डॉ. रामसुधार ने किया। 'तुलसी के राम' विषय पर आधारित आशुभाषण प्रतियोगिता में भाग लेनेवाले छात्र-छात्राओं को पुरस्कार तथा सहभागिता प्रमाण-पत्र दिए गए। वैष्णवी श्रीवास्तव (प्रथम), ध्रुव मिश्र (द्वितीय), हिमांशु अग्रहरि (तृतीय), सुविधा सिंह (चतुर्थ) तथा भूपेश कुमार (पाँचवें) स्थान पर रहे। □

लोकार्पण कार्यक्रम संपन्न

६ अगस्त को नई दिल्ली के तीन मूर्ति सभागार में बालेश्वर अग्रवाल जन्म शताब्दी समापन समारोह में डॉ. रामाशंकर कुशवाहा की पुस्तक 'बालेश्वर अग्रवाल : जीवन यात्रा' का लोकार्पण किया गया। इस असवर पर समापन समारोह से जुड़ी समारिका का भी विमोचन किया गया। कार्यक्रम का आयोजन अंतरराष्ट्रीय सहयोग परिषद्, हिंदुस्थान समाचार और प्रभात प्रकाशन के संयुक्त तत्त्वावधान में किया गया था। कार्यक्रम को संबोधित करते हुए श्री रामबहादुर राय ने कहा कि बालेश्वर अग्रवाल ने कंपनी के तौर पर चल रहे हिंदुस्थान समाचार को कोऑपरेटिव सोसाइटी में बदला। आज भारत सरकार ने कोऑपरेटिव क्षेत्र को बढ़ावा देने के लिए सहकारिता मंत्रालय की स्थापना की है। हिंदुस्थान समाचार के अध्यक्ष श्री अरविंद मार्डीकर ने समाचार एजेंसी के इतिहास का संक्षिप्त विवरण दिया, साथ ही स्व. बालेश्वर अग्रवाल के एजेंसी के लिए किए गए योगदान का उल्लेख किया।

कार्यक्रम के अध्यक्ष पूर्व राजदूत श्री वीरेंद्र गुप्ता ने कहा कि बालेश्वर अग्रवालजी की 'वसुधैव कुटुंबकम्' के प्रति प्रतिबद्धता ने दुनिया को भारतीय समुदाय के माध्यम से जोड़ा। अंतरराष्ट्रीय सहयोग परिषद् के महासचिव श्री श्याम परांडे ने कहा कि बालेश्वर अग्रवाल संघ के प्रचारक रहे। उन्होंने दो संस्थाओं की स्थापना में महत्त्वपूर्ण योगदान किया—हिंदुस्थान समाचार और अंतरराष्ट्रीय सहयोग परिषद्। पुस्तक के लेखक डॉ. रामाशंकर कुशवाहा ने कहा कि स्व. बालेश्वर अग्रवाल की जीवनी दो भागों में है। इसमें से प्रथम भाग में २१ अध्याय हैं, जो उनकी जीवन-यात्रा को समर्पित हैं। दूसरे भाग में पाञ्चजन्य में लिखे उनके २७ लेखों का संकलन है, जिसमें उनके विचार समाहित हैं। कार्यक्रम में बड़ी संख्या में समाजधर्मी, लेखक-पत्रकार व बालेश्वरजी के प्रति श्रद्धा रखनेवाले महानुभाव उपस्थित रहे। □

परिसंवाद का आयोजन संपन्न

१५ अगस्त को साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली द्वारा स्वाधीनता दिवस और स्वाधीनता के अमृत महोत्सव के अवसर पर अंग्रेजों द्वारा प्रतिबंधित भारतीय साहित्य विषयक परिसंवाद का आयोजन किया गया। परिसंवाद में हिंदी सहित असमिया, पंजाबी, उर्दू, गुजराती, ओड़िया, तमिल, तेलुगु, कन्नड़, मलयालम और अंग्रेजी भाषाओं में प्रतिबंधित साहित्य के बारे में चर्चा हुई। अकादेमी के सचिव के. श्रीनिवासराव ने अंगवस्त्र पहनाकर सभी प्रतिभागियों का स्वागत किया। उन्होंने कहा कि स्वाधीनता की लड़ाई के समय सभी भारतीय भाषाओं के लेखकों ने बिना सजा की परवाह किए निर्भीक होकर अपनी बात कही। प्रतिबंधित साहित्य के बारे में सर्वश्री ध्रुव ज्योति बोरा, हरीश त्रिवेदी, हर्षद त्रिवेदी, रामजन्म शर्मा, गुरदेव सिंह सिद्धू, राघवेंद्र पाटिल, चित्तरंजन भोई, पि. आनंद कुमार, प्रभा वर्मा, वासिरेड्डी नवीन ने अपने वक्तव्य प्रस्तुत किए। संचालन संपादक (हिंदी) श्री अनुपम तिवारी ने किया। □

लोकार्पण संपन्न

१२ अगस्त को दिल्ली के इंडिया हैबिटेट सेंटर के में श्रीमती अनुराधा की सद्य:प्रकाशित पुस्तक 'लोग जो मुझमें रह गए' का लेखक-आलोचक श्रीमती सुजाता द्वारा लोकार्पण संपन्न हुआ। सुपरिचित रंगकर्मी श्रीमती प्रियंका शर्मा ने लोकार्पित पुस्तक के एक अंश का पाठ भी किया। □

लोकार्पण संपन्न

३१ जुलाई को पटना के गांधी मैदान में श्री गंगा प्रसाद अभिनंदन ग्रंथ समिति तथा प्रभात प्रकाशन के संयुक्त तत्त्वावधान में सिक्किम के राज्यपाल श्री गंगा प्रसाद की सद्य:प्रकाशित पुस्तक 'स्मृति साक्ष्य मेरा जीवन : अविरल गंगा' एवं 'गंगार्पण' (स्मारिका) का लोकार्पण भारतीय जनता पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष माननीय श्री जगत प्रकाश नड्डा के कर-कमलों से संपन्न हुआ। इस अवसर पर सिक्किम मुख्यमंत्री श्री प्रेमसिंह तमांग, केंद्रीय मंत्री श्री अश्विनी कुमार चौबे, बिहार विधानसभा के अध्यक्ष श्री विजय कुमार सिन्हा, राज्यसभा सांसद श्री सुशील कुमार मोदी, सर्वश्री आर.के. सिन्हा, सैयद शाहनवाज हुसैन, नितिन नवीन, नीरज कुमार सिंह, मंगल पांडेय, नंद किशोर यादव, संजय पासवान अनेक विधायकगण एवं विधान पार्षदगण तथा समाजधर्मी सम्मिलित हुए। मंच संचालन विधायक डॉ. संजीव चौरसिया ने किया। □

९९ के हुए श्री रामदरश मिश्र

१५ अगस्त को हिंदी के वरिष्ठ लेखक प्रो. रामदरश मिश्र ने स्वाधीनता के अमृत महोत्सव पर अपना ९९वाँ जन्मदिवस आत्मीय लेखकों के बीच अपने घर पर मनाया। इस अवसर पर उनकी रचनाओं और उनके व्यक्तित्व-कृतित्व पर केंद्रित कई पुस्तकों और पत्रिकाओं का लोकार्पण किया गया। सर्वभाषा ट्रस्ट दिल्ली की ओर से डॉ. रामजन्म मिश्र, डॉ. ओम निश्चल और श्री केशव मोहन पांडेय ने उन्हें 'साहित्य मार्तंड सम्मान' से विभूषित किया। साथ ही उनकी तथा उन पर केंद्रित कई पुस्तकों का लोकार्पण हुआ, जिनमें 'प्रतिनिधि कहानियाँ' (सं. ओम निश्चल), 'प्रतिनिधि कविताएँ' (सं. ओम निश्चल), 'समवेत', 'लौट आया हूँ मेरे देश', 'स्मृतियों के द्वंद्व', 'कवि के मन से', 'रामदरश मिश्र : एक मूल्यांकन' (शशि भूषण शीतांशु), 'सुरभित स्मृतियाँ', 'गाँव की आवाज' (सं. वेद मित्र शुक्ल) प्रमुख हैं। इसके साथ-साथ रामदरश मिश्रजी पर केंद्रित पत्रिकाओं 'सम्यक् अभिव्यक्ति', 'बरोह', 'पहला

अंतरा' के अंकों का भी लोकार्पण संपन्न हुआ। इस अवसर पर सर्वश्री प्रेम जनमेजय, सुरेश ऋतुपर्ण, प्रताप सहगल, शशि सहगल, अनिल जोशी, पवन माथुर, रामजन्म मिश्र, राहुल, ओम निश्चल, जसवीर त्यागी, वेदमित्र शुक्ल, शशिकांत, ताराचंद शर्मा नादान, हरिविष्णु गौतम, हरिशंकर राढ़ी, अनिल मीत, नरेश शांडिल्य, स्मिता मिश्र, अलका सिन्हा आदि उपस्थित थे। इसी दिन जनमे सुपरिचित गजलगो श्री नरेश शांडिल्य को भी लोगों ने जन्मदिन की बधाई दी और फिर उन्होंने अपनी दो प्रिय गजलें सुनाईं। संचालन सुश्री अलका सिन्हा ने किया। □

कथा-संग्रह 'गुंटी' विमोचित

१४ अगस्त को दिल्ली के इंडिया इंटरनेशनल सेंटर में श्रीमती मृदुला सतीश टंडन की संस्था 'जश्न-ए-हिंद' की ओर से आयोजित कार्यक्रम में प्रसिद्ध रचनाकार श्रीमती रेणु हुसैन के कथा-संग्रह 'गुंटी' का विमोचन संपन्न हुआ, जिसकी अध्यक्षता वरिष्ठ लेखिका श्रीमती नासिरा शर्मा ने की। मुख्य अतिथि वरिष्ठ कथाकार श्रीमती मैत्रेयी पुष्पा थीं, सर्वश्री अनिल शर्मा जोशी व लक्ष्मीशंकर वाजपेयी विशिष्ट अतिथि थे। संचालन श्रीमती ममता किरण ने किया। □

विशेष व्याख्यान संपन्न

१७ अगस्त को नई दिल्ली में भारतीय जन संचार संस्थान (आई. आई.एम.सी.) के ५८वें स्थापना दिवस के अवसर पर विशेष व्याख्यान आयोजित किया गया। इस अवसर पर 'न्यूज २४' की प्रधान संपादक श्रीमती अनुराधा प्रसाद, आई.आई.एम.सी. के महानिदेशक प्रो. संजय द्विवेदी ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन प्रो. प्रमोद कुमार ने एवं धन्यवाद ज्ञापन डॉ. राकेश उपाध्याय ने किया। □

पांडुलिपि चयन की घोषणा

भोपाल में साहित्य अकादमी, म.प्र. संस्कृति परिषद्, म.प्र. शासन संस्कृति विभाग द्वारा वर्ष २०२० एवं २०२१ हेतु प्रदेश के लेखकों की प्रथम कृति के प्रकाशनार्थ श्रेष्ठ पांडुलिपियों की घोषणा की है—सर्वश्री ईश्वर शर्मा, मनीष बादल, भावना दामले, शोभा सिंह, राजेश कुमार शर्मा, सीमा शाहजी, बिहारीलाल सोनी 'अनुज', आकांक्षा पटले, प्रियंका सोनी 'प्रीत', पं. कमलकांत शर्मा, हेमंत उपाध्याय, सारिका अनूप जोशी, परी जोशी, गजानंद डिगोनिया 'जिज्ञासु' पांडुलिपियों पर बीस हजार रुपए का प्रकाशन अनुदान दिया जाएगा। □

राष्ट्रभाषा हिंदी प्रचार समिति द्वारा पुरस्कार घोषणा

राष्ट्रभाषा हिंदी प्रचार समिति, श्रीडूँगरगढ़ ने हिंदी-राजस्थानी साहित्य सृजन हेतु दिए जानेवाले वार्षिक राष्ट्रीय पुरस्कारों की घोषणा कर दी है। 'डॉ. नंदलाल महर्षि स्मृति हिंदी सृजन पुरस्कार' डॉ. हरिदास व्यास को उनकी चर्चित आलोचना कृति 'आलोचना की अंतर्ध्वनियाँ' के लिए और 'पं. मुखराम सिखवाल स्मृति राजस्थानी साहित्य सृजन पुरस्कार' श्री महेंद्र मोदी की संस्मरण कृति 'आंगळी टूटी पाटी फूटी' के लिए दिया जाएगा। साहित्य के प्रोत्साहन हेतु गत वर्ष प्रारंभ किया गया 'श्रीशिवप्रसाद सिखवाल स्मृति महिला लेखन पुरस्कार' श्रीमती तसनीम खान की कथाकृति 'दास्तान-ए-हजरत' को प्रदान किया जाएगा। पुरस्कार १४ सितंबर को श्री डूँगरगढ़ में एक समारोह में अर्पित किए जाएँगे। पुरस्कारस्वरूप ग्यारह हजार रुपए की नकद राशि के साथ सम्मान-पत्र, स्मृति चिह्न, शॉल भेंट किए जाएँगे। □

'ग्रामीण जीवन की यादगार कहानियाँ' लोकार्पित

१७ अगस्त को वाराणसी में 'सोच विचार' पत्रिका के संपादक श्री नरेंद्र नाथ मिश्र द्वारा संपादित तथा इंद्रप्रस्थ प्रकाशन, दिल्ली द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'ग्रामीण जीवन की यादगार कहानियाँ' का लोकार्पण प्रख्यात कथाकार डॉ. सूर्यबाला ने किया। कार्यक्रम की अध्यक्षता प्रतिष्ठित लेखिका प्रो. चंद्रकला त्रिपाठी ने की। विशिष्ट अतिथि के रूप में कथा लेखिका एवं कवयित्री डॉ. मुक्ता उपस्थित थीं। कार्यक्रम में सर्वश्री रामजी यादव एवं रामसुधार सिंह ने भी संबोधित किया। अतिथियों का स्वागत डॉ. अर्चना शाह ने किया। संपादक श्री नरेंद्र नाथ मिश्र ने संग्रह की पृष्ठभूमि पर प्रकाश डाला। धन्यवाद प्रकाश डॉ. दयानिधि मिश्र ने तथा संचालन डॉ. जितेंद्र नाथ मिश्र ने किया। □

'मॉर्निंग म्यूजिक्स' का लोकार्पण

१८ अगस्त को इंडिया इंटरनेशनल सेंटर, नई दिल्ली में वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी श्री महेंद्र रंगा की पुस्तक 'मॉर्निंग म्यूजिक्स : सूत्राज फॉर सक्सैस एंड हैप्पीनेस' का लोकार्पण दिल्ली उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति श्री सुरेश कैर, सीबीआईसी के अध्यक्ष श्री विवेक जौहरी व लोकसभा सांसद श्री जगदंबिका पाल ने किया। प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित इस पुस्तक में जीवन में सफलता प्राप्त कर सुख, संतोष और सार्थकता पाने के व्यावहारिक सूत्र बताए हैं। कार्यक्रम में बड़ी संख्या में प्रशासनिक अधिकारी, लेखक, पत्रकार व समाजधर्मी सम्मिलित हुए। □

'मॉर्निंग म्यूजिंग्स' का लोकार्पण

१८ अगस्त को इंडिया इंटरनेशनल सेंटर, नई दिल्ली में वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी श्री महेंद्र रंगा की पुस्तक 'मॉर्निंग म्यूजिंग्स : सूत्राज फॉर सक्सैस एंड हैप्पीनेस' का लोकार्पण दिल्ली उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति श्री सुरेश कैर, सीबीआईसी के अध्यक्ष श्री विवेक जौहरी व लोकसभा सांसद श्री जगदंबिका पाल ने किया। प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित इस पुस्तक में जीवन में सफलता प्राप्त कर सुख, संतोष और सार्थकता पाने के व्यावहारिक सूत्र बताए हैं। कार्यक्रम में बड़ी संख्या में प्रशासनिक अधिकारी, लेखक, पत्रकार व समाजधर्मी सम्मिलित हुए। □

श्री राशिनकर को 'अंतरराष्ट्रीय अमेजिंग टेलेंट अवार्ड'

विगत दिनों अपने अभिनव रेखांकनों और कला में अपने नवाचारों से राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान बनानेवाले इंदौर के चित्रकार श्री संदीप राशिनकर को टेक महिंद्रा द्वारा प्रतिष्ठित 'अमेजिंग टेलेंट अवार्ड' दिया गया है। उल्लेखनीय है कि यह अवार्ड विश्व भर में टेक महिंद्रा में कार्यरत कर्मचारियों के परिवार के सदस्यों द्वारा वैश्विक स्तर पर नामित रचनाधर्मियों द्वारा किए गए रचनात्मक अवदान की विशिष्टता और श्रेष्ठता को देखकर दिया जाता है। □